नानक दुखिया सब संसार

प्रवचन-क्रम

1. जीवन एक पूजा..2
2. जीवन की कला..21
3. अकेले होने का साहस..35
4. सामूहिक जीवन..46
5. अंतर की खोज..49
6. विचार और अंतर-बोध..58
7. नानक दुखिया सब संसार..77

नानक दुखिया सब संसार
पहला प्रवचन

जीवन एक पूजा

लेकिन इस भांति जीना जरूर चाहिए कि पूरा जीवन एक पूजा हो जाए। और हम बचते हैं पूरे जीवन को पूजा बनाने से। इसलिए एक कोने में पूजा कर लेते हैं और पूरे जीवन को पूजा के बाहर छोड़ देते हैं। वह हमारी तरकीब है। घर के एक कोने में छोटा सा मंदिर बना लेते हैं और पूरे घर को मंदिर बनाने से बच जाते हैं। गांव में एक मंदिर बना लेते हैं फिर पूरे गांव का धर्म मंदिर में सिकुड़ जाता है, बात समाप्त हो जाती है। नहीं, पूजा नहीं करनी है किसी चीज की बल्कि इस भांति जीना है कि पूरा जीवन एक पूजा बन जाए। एक वर्शिप और एक प्रेयर बन जाए।
और इस तरह जब हम फर्क कर लेते हैं कि ज्ञान, कि चरित्र, ये फर्क बड़े झूठे हैं। ऐसा कहीं फर्क है नहीं। यानी ऐसा कोई ज्ञान नहीं है जिसमें चरित्र न हो और ऐसा कोई चरित्र नहीं है जिसमें ज्ञान न हो। असल में ज्ञान भीतरी घटना है, चरित्र उसकी बाहरी अभिव्यक्ति है। और कोई फर्क नहीं है। यानी कोई आदमी कहे कि सत्य का ज्ञान, कि सत्य का आचरण, तो इसमें, इसमें फर्क क्या करिएगा? इसमें फर्क इतना ही हुआ कि सत्य का अनुभव होगा, तो सत्य का आचरण होगा। और ज्ञान और आचरण कोई ऐसी दो चीजें नहीं हैं। हां, भला ज्ञान दिखाई नहीं पड़ता, आचरण दिखाई पड़ता है। जड़ें दिखाई नहीं पड़तीं और वृक्ष दिखाई पड़ता है। लेकिन जड़ें और वृक्ष ऐसी दो चीजें नहीं हैं। जहां जमीन से अलग भी दिखाई पड़ रही हैं, वहां भी सिर्फ अलग दिखाई ही पड़ रही हैं। कहीं किसी भी क्षण और किसी भी तल पर अलग होती नहीं हैं। और वह जो हमें फर्क दिखाई पड़ रहा है वह फर्क वृक्ष का और वृक्ष की जड़ों का नहीं है। वह एक सीमा तक मिट्टी है और एक सीमा के बाद मिट्टी नहीं है। इतना ही फर्क है। वह जिसको हम ज्ञान कहते हैं, वह भीतर है, जहां तक मिट्टी है और जिसको हम आचरण कहते हैं, वह बाहर है, जहां मिट्टी नहीं, वह दिखाई पड़ जाता है। अगर मेरी तरह से समझें तो जो ज्ञान दिखाई पड़ जाता है उसका नाम आचरण है और जो आचरण दिखाई नहीं पड़ता है उसका नाम ज्ञान है। इससे ज्यादा कोई फर्क नहीं है। कोई नहीं है। असल में हमारी आदत पड़ गई है कि हम, हम फर्क करके देखें। कोई फर्क नहीं है।
दर्शन का मतलब हैः देखना और चरित्र का मतलब हैः जीना।
यह दरवाजा मुझे दिखाई पड़ रहा है, यह दर्शन है; और जब मैं निकलूंगा इस दरवाजे से, तो वह चरित्र है। अगर मुझे दरवाजा दिखाई पड़ गया, तो मैं दीवाल से न निकलूंगा। और अगर दरवाजा मुझे दिखाई नहीं पड़ा, तो मैं दीवाल से निकलने की कोशिश में टकरा सकता हूं।
दरवाजे का दिखाई पड़ना दर्शन है, और फिर दरवाजे से निकलना चरित्र है।
और मैं नहीं सोच पाता कि जिसको दरवाजा दिखाई पड़ता है वह दरवाजे से न निकल कर कहीं और से निकलेगा, यह असंभव है। और अगर निकलता हो कहीं और से तो पक्का समझ लेना कि दरवाजा दिखाई नहीं पड़ा, और तो कोई कारण नहीं हो सकता।
सुकरात का एक वचन हैः नालेज इ.ज वर्च्यु। सैकड़ों साल तक विवाद चला उस
पर क्योंकि उसने कहा ज्ञान ही चरित्र है। हम तो ऐसा सोचते हैं कि ज्ञान तो हमें है, लेकिन चरित्र कहां से लाएं। ये बात ही गलत है। ये बात ही गलत है। यानि बड़ी, ये भी होशियारी है हमारी। हम कहते हैं, ज्ञान तो हमें हैं। हमें मालूम है कि ठीक क्या है? हमें मालूम है कि ठीक क्या है? लेकिन फिर भी गलत हो जाता है, ये असंभव है। ऐसा हो नहीं सकता कि हमें मालूम हो कि ठीक क्या है? और गलत हो जाए। यह, यह कैसे हो सकता है? हां, ऐसा है मामला कि हमें मालूम है कि गलत ही ठीक है। और सुना हमने है कि लोग कहते हैं कि नहीं वह ठीक नहीं, ठीक कुछ और है। यह हमने सुना है। श्रवण दर्शन नहीं है। और श्रवण को हमने समझा हुआ है कि वह ज्ञान बन गया। सुना है हमने बचपन से कि क्रोध बुरा है। हमने नहीं जाना कि क्रोध बुरा है। हमें तो अभी भी कोई मौका दे दे तो, नहीं कर पाएंगे, तो लगेगा कुछ भूल हो गई है। कर पाएंगे तो लगेगा निपटारा हुआ। पछताएंगे न कर पाएंगे तो। हमें तो लगता है कि क्रोध ठीक है। हां, लोग

कहते हैं, ऐसा लोग कहते रहे हैं कि क्रोध बुरा है। हमारे भीतर दोहरी दिक्कतें हो गईं। श्रवण है हमारा कुछ जिसको हम दर्शन समझ रहे हैं। नहीं लेकिन जिसे सुना है सिर्फ देखा नहीं है। सुनने व देखने में बड़ा फर्क है। सुना है मैंने कि इस तरफ दरवाजा है, देखा नहीं है। देखता तो मैं यहीं उसी दीवाल में दरवाजा देखता हूं। तो जब चलने जाता हूं तब पता चल जाता है कि श्रवण था, कि दर्शन था। क्योंकि जब चलता हूं तब इधर चला जाता हूं, क्योंकि जहां मुझे दिखता है वहां जाऊंगा। जहां मैंने सुना, है वहां नहीं जाऊंगा। अगर टकराएगा तब मैं कहूंगा बड़ी मुश्किल है, मैं जानता हूं कि दरवाजा कहां है, फिर भी टकरा जाता हूं। अब कैसे इस टकराने से बचूं? मैं नहीं कहता ऐसा। मैं कहता हूं अगर टकराते हैं तो समझ लेना दरवाजे का पता नहीं है। इसलिए आचरण को बदलने की कभी कोशिश ही मत करना। बस ठीक दर्शन की कोशिश करना। आचरण की फिकर ही मत करना। आचरण से कोई लेना-देना नहीं है। वह दो कोड़ी की बात है। उससे कोई लेना-देना नहीं है। महत्वपूर्ण यह है कि मुझे ठीक क्या है, वे दिखाई पड़े? और ऐसा कभी नहीं होता। जो दिखाई पड़े वह मैं हमेशा कर पाऊं। क्योंकि उस ठीक दिखाई पड़ने के साथ ही उस ठीक का आनंद भी जुड़ा है।
मैं निरंतर बुद्ध की एक घटना कहता रहता हूं कि बुद्ध एक गांव के पास
से गुजरे। उस गांव के लोग उनके विरोधी थे, वे इकट्ठे हो गए। उन्होंने बुद्ध को बहुत गालियां दीं, और बहुत अपमानजनक बातें कहीं। बुद्ध ने उनकी सारी बातें सुनी और फिर उनसे कहा अगर तुम्हारी बात पूरी हो गई हों तो मैं जाऊं, मुझे दूसरे गांव जल्दी पहुंचना है। तो उन्होंने कहाः ये बातें न थीं, और तब वे एकदम से थोड़े परेशान भी हो गए। क्योंकि गालियां अगर बातें समझी जाएं तो जिसने दी हैं वह ही परेशान हो जाता है। वे भी थोड़े से परेशान हो गए हैं, थोड़े से हैरान हो गए हैं। क्योंकि इतनी साफ-साफ गालियां थीं। तो उन्होंने बुद्ध से कहा कि हमने गालियां दी, बातें नहीं कहीं। तो उन्होंने कहा तुमने दी होंगी गालियां, लेकिन इधर हमने लेना बंद कर दिया है। और तुम दो इससे कुछ होता नहीं फर्क जब तक हम लें न। तुम्हारा देना तुम्हारा हक है। और लेना हमारा हक है। इस पर तो जबरदस्ती नहीं तुम्हारी न कि हमको लेना ही पड़ेगा।
पिछले गांव में कुछ लोग मिठाइयां लेकर आए थे, हमने कहा कि पेट भरा है
तो वापिस ले गए। अब तुम गालियां लेकर आए हो और हम कहते हैं कि हम लेते नहीं। अब तुम क्या करोगे? वापस ले जाना पड़ेगा। ये गालियां वापस ले जाओ, क्योंकि हम लेते नहीं। उनमें से एक ने पूछा लेकिन आप लेते क्यों नहीं? बड़ी अजीब बात है, हम तो किसी को भी गाली देते हैं तो वह ले लेता है। हम दे भी नहीं पाते और वह ले लेता है। हमारा पूरा भी नहीं हो पाता और वह जवाब देना शुरू कर देता है। ये बड़ी अजीब बात है कि आप ये क्या कहते हैं, कि लेते नहीं। बुद्ध ने कहा दस साल पहले आना था तब मैं भी ले लेता था, क्योंकि तब मुझे पता ही नहीं था कि लेना दुख है। अब मुझे पता है कि लेना दुख है, बात खत्म हो गई। अब मैं ये देख रहा हूं कि देकर तुम उठा रहे हो दुख। और ले के मैं क्यों उठाऊं? तुम जानो तुम्हारा काम जाने। दे के तुम उठा रहे हो, मैं ले के क्यों उठाऊं? अब दिखाई पड़ गया। अगर कुछ कमी रह गई तो तो लौटते में फिर इसी रास्ते से गुजरूंगा, तुम आ जाना। गालियां और पूरी कर लेना अभी मुझे जल्दी जाना है, दूसरे गांव में लोग रास्ता देखते होंगे।
वह गांव के लोग कैसे खड़े रहे गए होंगे? वह बुद्ध का जाना, उस गांव के बाहर। और वे गांव के लोग बाहर ही खड़े रहे उनकी हालत क्या हो गई?
ऐसी हालत में नीत्शे बहुत नाराज हो जाता। और वह कहता है कि बुद्ध ने बहुत अपमान किया। अच्छा था कि एक चांटा वे मार देते, कम से कम हम दोनों बराबर तो हो जाते। नीत्शे ये कहता कि एक चांटा मार देते, एक गाली दे देते तो हम कम से कम दोनों बराबर हो जाते। बुद्ध तो चले गए होंगे और वह आदमी तो कीड़े-मकोड़ों की तरह खड़े रह गए होंगे। उनको कुछ समझ ही नहीं पड़ा होगा कि अब क्या हो? अब क्या करें? अपनी ही गाली लौट आई और घूमने लगीं होगी। नीत्शे कहता दया होती बड़ी कि एक चांटा मार देते, हम बराबर तो हो जाते। हम भी तो घर लौट जाते शान से। ठीक है हमने जो गाली दीं थी, वह लौट आई है। बराबर हो गया।

इसका मतलब है, वह यह कह रहा है कि नहीं, ऐसा मत करो, यह बहुत क्रूरता है। वह बुद्ध से कह रहा है बहुत क्रूरता है।
मेरी दृष्टि यह है कि हमें दिखाई पड़ जाए तो, तो बात खत्म हो गई, फिर क्या परिणाम होता है, यह सवाल नहीं है कि हम ऐसा जीएंगे। और हमें दिखाई पड़ता नहीं है बिल्कुल भी, और दर्शन शब्द बहुत साफ है। इसका सीधा मतलब देखना है। अंग्रेजी में बड़ी भूल हो रही है। अगर हम दर्शन को फिलासफी कहते हैं तो बड़ी गलती हो जाती है। फिलासफी का मतलब ही दर्शन नहीं है। फिलासफी का मतलब सोच-विचार है। और दर्शन का मतलब देखना है। और बड़े मजे की बात ये है कि सोच-विचार सिर्फ वे ही करते हैं, जो नहीं देख पाते। जो देख पाते हैं वे नहीं सोच-विचार करते। इस कमरे में एक अंधा आदमी बैठा हुआ है। जाने के पहले वह सोच-विचार करता है, दरवाजा कहां है? पूछता है दरवाजा कहां है? गुरु को खोजता है कि कोई दरवाजा बताओ? लेकिन जिसके पास आंख है, जो देखता है, न वह पूछता, न वह गुरु खोजता और न वह सोचता। सोचता भी नहीं है। निकलना है तो निकल जाता है। आप उससे पूछिए कि अरे तुम दरवाजे से निकले हो तो उसे खयाल आता है अन्यथा दरवाजे का खयाल भी नहीं आता कि दरवाजा कहां है? बस वह निकल जाता है, वह निकल जाता है। इसके लिए उसको यह भी नहीं सोचना पड़ता कि यह रहा दरवाजा और इधर से जाऊं तो पहुंच जाऊंगा दरवाजे पर। यह कुछ भी नहीं करना होता। जब उसे निकलना होता है वह निकल जाता है। बस वह निकल जाता है। जब उसे आना होता है वह आ जाता है। दरवाजा कहीं उसके विचार में बीच में आता ही नहीं। वह सिर्फ अंधे के विचार में आता है दरवाजा। बार-बार पूछता कि दरवाजा कहां है, क्योंकि उसे दिखाई नहीं देता। क्योंकि वह दर्शन के ठीक विपरीत है। दर्शन का मतलब दिखाई पड़ना है। एकदम गलत खयाल है।
एक तो दर्शन के कोई प्रकार हैं ही नहीं। वह देखने की शक्ति का नाम है। हां, उसके प्रयोग हो सकते हैं। जैसे मैं बगीचे में जाकर फूल देखूं कि कांटे देखूं कि आकाश देखूं कि जमीन देखूं, कि मकान के भीतर देखूं, कि बाहर देखूं। इससे कोई देखने में फर्क नहीं पड़ता, सिर्फ दिशाएं भिन्न होती हैं। और देखने के प्रयोग भिन्न होते हैं। इंप्लीकेशंस भिन्न होते हैं। दो-तीन तरह के दर्शन नहीं होते। दर्शन का तो मतलब हैः देखने की क्षमता। अब मैं कहां देखता हूं यह बिल्कुल दूसरी बात है। यह मुझ पर निर्भर है।
वह जिसको हम बाह्य-दर्शन कहते हैं, वह बाहर देख रहा है। आदमी देखने की क्षमता उसकी उतनी ही है, जितनी किसी महावीर की हो। फर्क इतना है कि वह बाहर की तरफ उपयोग कर रहा है, महावीर भीतर की ओर उपयोग कर रहे हैं। यह उपयोग का फर्क है। यह दर्शन का फर्क नहीं है। मेरा मतलब समझ रहे हैं न। मैं बाहर की तरफ देख रहा हूं, अपनी खिड़की पर खड़े होकर और आप पीठ करके अपने मकान के अंदर कमरे की तरफ देख रहे हैं। लेकिन देखने की क्षमता का कोई फर्क नहीं है। सम्यक दर्शन का कुल इतना मतलब है कि भीतर की तरफ देखना, या बाहर की तरफ देखना। और अगर ठीक से समझें तो सम्यक दर्शन नहीं कहना चाहिए, जिसको हम भीतर की तरफ देखना कहते हैं। बाह्य-दर्शन कहते हैं, तो फिर अंतर-दर्शन कहना चाहिए। और सम्यक दर्शन का मतलब ये कि ऐसा आदमी जो दोनों तरफ जब चाहे, तब देख सकता है। उसका जो ठीक मतलब होगा, सम्यक दर्शन का मतलब ऐसा आदमी, एक आदमी ऐसा है जो कि फिक्सड हो गया है। जिसकी गर्दन अब पीछे की तरफ मुड़ती ही नहीं। वह बाहर ही देख सकता है। ये असम्यक-दर्शन हुआ। दर्शन का एक उपयोग निश्चित हो गया। एक दूसरा आदमी जो भीतर ही देख सकता है बाहर देख ही नहीं सकता। यह भी फिक्सड हो गया है। यह भी उतने ही उपद्रव में है जितना पहला आदमी। ये दोनों आधे-आधे आदमी हैं। सम्यक दर्शन का मतलब ऐसा आदमी जिसकी गर्दन लोचपूर्ण है, जो जब चाहे बाहर देखता, जब चाहे तब भीतर देखता है। बाहर और भीतर में जिसे कठिनाई ही नहीं होती। जो कभी भी बाहर जाता और कभी भी भीतर आता है। मेरा मतलब समझ रहे हैं न? एक तो जिसको हम कहते हैं संसारी वह बाहर देखने वाला और जिसको हम कहते हैं संन्यासी वह भीतर देखने वाला। इन दोनों से अलग एक आदमी है जिसको सम्यक-दृष्टा कहना चाहिए जो बाहर-भीतर दोनों तरफ एक साथ देख सकता है। जिसको इसमें कोई बाधा ही नहीं रही है। और जब कोई आदमी बाहर और भीतर एक साथ देख सकता है, तब उसके लिए बाहर और भीतर मिट जाते हैं क्योंकि वह देखता बाहर और भीतर दो चीजें नहीं हैं। यह एक ही चीज का फैलाव

है और मैंने दो बांट लिए हैं क्योंकि मैं इकट्ठा दोनों नहीं देख पाता हूं इसलिए बांट लिए हैं। जब मैं बाहर देख रहा हूं, और जब मैं लौट कर भीतर आता हूं, तो जो मैं, जिसे मैं देखता आता हूर, वही भीतर भी है। सिर्फ चूंकि मैं एक साथ नहीं देख पाता हूं पूरे को, इसलिए मैंने खंड कर लिए हैं। अगर मैं पूरा एक साथ देख पाऊं तो खंड का कोई सवाल ही नहीं। अगर मेरी सारी खोपड़ी पर चारों तरफ बारह आंखें हों, कोई कठिनाई नहीं है। किसी दिन आदमी व्यवस्था कर ले और बारह आंखें हों उसकी खोपड़ी पे चारों तरफ। तो उसको बाहर-भीतर, मकान के क्या बाहर होगा, और क्या भीतर होगा। जब वह दरवाजे पर खड़ा होगा तो वह बाहर भी देखेगा और भीतर भी देखेगा। तो बाहर और भीतर तो एक फैलाव है, हमारी देखने की क्षमता चूंकि डाइमेंशनल है, वन डाइमेंशनल है, एक डाइमेंशन में देखती है।
वह अभी मार्थूस ने एक किताब लिखीः वन डाइमेंशनल मैन। खयाल उसका सिंगल
है कि हम एक ही तरफ देख पाते हैं यही हमारी तकलीफ है। और जिंदगी बहुत बड़ी है। और जिंदगी सब तरफ है। और सब तरफ सच है। और सम्यक-दर्शन का मेरे हिसाब में ऐसा मतलब होता है जो सब तरफ देख पाता है। इतना सम हो जाता है कि यह भी फर्क नहीं करता कि यह बुरा, यह भला, यह बाहर, यह भीतर, यह ऐसा, वह वैसा, यह नरक, यह स्वर्ग, यह भी फर्क नहीं करता, देख पाता है।

प्रश्नः एक ब्राह्मण की कथा है। जो जानता था सबके बारे में जिसने बनाया। वह एक दिन मर गया। उसका बेटा था। जिसको नमस्कार किया सबने कि यह ब्राह्मण का बेटा है, तो उसको ब्राह्मण मान लिया गया। उसने जो अपने बाप से सुना था वह लोगों को बताया, और अपने आपे ब्राह्मण बन कर बैठा रहा। फिर उसका बेटा आया और फिर इस तरह चलते-चलते एक दिन ब्राह्मण मर गया। असलियत बताने वाला कोई नहीं रहा। क्या ब्राह्मण मर गया, या यह जो ट्रेजडी साइंस थी यह ही गलत थी?

इसमें दोनों ही बातें सच हैं। एक तो ये बात सच है कि बहुत बार ऐसा हुआ
है कि कुछ बातें हैं, जो जान ली गई। लेकिन कहीं नहीं जा सकी, जैसा मैं अभी कह रहा था। जो जान ली गईं लेकिन नहीं कही जा सकीं या कही गई तो कहने में गलत हो गइंर्। या कहीं गइंर् तो केवल शब्द रह गए और भीतर का अर्थ खो गया। खो ही जाएगा। तो बहुत सी सही बातें हैं जो जान ली गईं। लेकिन वे ऐसी सही बातें हैं कि हर बार हर आदमी को फिर अपनी तरह से उनको जानना पड़ेगा। उनको ट्रेडिशनली देने का उपाय नहीं है। कुछ बातें तो ऐसी हैं जिनको हम बता सकते हैं। उन बातों को हम बता सकते हैं, जो ऑब्जेक्टिव हैं। जैसे मैं कह सकता हूं कि यह काला रंग है। और आप भी देख लेते हैं कि ये काला रंग है। जिन चीजों को भी हम सामने रखके और सारे लोग ऑब्जर्व कर सकते हैं, उनके संबंध में प्रतीक काम कर जाते हैं। हम कहते हैं कि ये काला रंग है। इसमें हम राजी हो गए हैं और हम काला रंग कह लेते हैं और बात चल जाती है। क्योंकि काला रंग हम सबको दिखाई पड़ता है। फिर एक आदमी कहता है कि ये रहा परमात्मा। उसे दिखाई पड़ रहा है, कुछ जिसे वह परमात्मा कह रहा है, लेकिन हमें किसी को भी दिखाई नहीं पड़ रहा। काले रंग में दो चीजें हैं, काला रंग यह शब्द भी सुनाई पड़ता है और यह काला रंग भी दिखाई पड़ता है। और जब कोई कहता है कि ये रहा परमात्मा। तो सिर्फ काला रंग शब्द सुनाई पड़ता है और कोई दिखाई तो पड़ता नहीं कि ये रहा। शब्द ही रह जाता है हाथ में। सिर्फ शब्द ही रह जाता है। तो जहां तक धर्म का संबंध है, उसकी अनुभूतियां ऐसी हैं कि वह प्रत्येक बार, प्रत्येक व्यक्ति को फिर से उपलब्ध करनी पड़ती है। उनको कोई शब्दों के द्वारा दे नहीं सकता। वह जो ब्राह्मण की कोशिश थी वह विज्ञान देने की कोशिश होती तब तो न मरती। साइंस देने की कोशिश न थी। वह कोशिश थी धर्म देने की। और वह मरने को ही थी। और ऐसा नहीं है कि वह उस दिन मर गई आज नहीं मरेगी, आज भी मरेगी। अगर मैं आपसे कुछ कह रहा हूं तो वह मेरे कहने के साथ ही मर जाने वाला है। और आप अगर उसे उपलब्ध करेंगे तो फिर से आपको वही करना पड़ेगा। उसका कोई उपाय नहीं कि कोई दूसरा आपको ट्रांसफर कर सके। वह जो ब्राह्मण था, वह ब्रह्मांड को जानने वाला नहीं था, वह ब्रह्म को जानने

वाला था। और उन दोनों में फर्क को आप समझ लें। ब्रह्मांड को जो जानता है, वह तो विज्ञान है। वह ट्रांसफरेबल है, वह सिंबल से दिया जा सकता है, वह शास्त्र से दिया जा सकता है। इसलिए पश्चिम ने जो पैदा किया उसके मरने का उपाय नहीं, जब तक आदमी न मर जाए। वहां किसी वैज्ञानिक के मरने से कोई फर्क नहीं पड़ता। क्योंकि जो जाना गया वह वस्तुगत है। वह लेबोरेटरी में जाना गया वह किसी एक आदमी ने नहीं जाना, वह हजार लोगों ने जाना है। हजार लोग प्रयोग कर सकते हैं। वह कभी भी प्रयोग किया जा सकता है। और वह दोहराया जा सकता है। जिसे हम ब्राह्मण कहते थे उसने उसे जाना था जो अनरिपिटेबल है। और एक अर्थ में यूनीक है। और जो एक-एक आदमी को अपने तईं ही जानना पड़ता है। कोई दूसरे के जनाए जाना नहीं जा सकता।

प्रश्नः तो ब्रह्मज्ञान।

हां, यह जो ब्रह्म का ज्ञान है, तो यह तो कभी भी परंपरा नहीं बनता है। इसे परंपरा बनाना ही भूल है। और विज्ञान जो है वह हमेशा परंपरा बनता है।
उसे अगर आपने परंपरा न बनाया तो भूल हो जाएगी। यानी मैं बहुत उलटी बात कहता हूं। मैं निरंतर यह कहता हूं कि विज्ञान के शास्त्र हो सकते हैं, धर्म का शास्त्र नहीं हो सकता। हालांकि होता है धर्म का शास्त्र। और मैं यह भी कहता हूं कि विज्ञान के गुरुहो सकते हैं, धर्म का गुरु नहीं हो सकता। हालांकि होते हैं धर्मगुरु। विज्ञान के गुरु का पता नहीं चलता, क्योंकि विज्ञान जो भी कह रहा है वह बिल्कुल ट्रांसफरेबल है, वह एक-दूसरे का बताया जा सकता है, समझाया जा सकता है, लेबोरेटरी में प्रयोग किया जा सकता है। वह कहीं इतना आंतरिक नहीं है कि उसे सामने रखना मुश्किल हो। वह इतना बाह्य है कि बिल्कुल सामने है। आंतरिक के साथ सबसे बड़ी कठिनाई यह है कि वहां आपके सिवाय कोई भी नहीं जा सकता। और बाह्य के साथ सुविधा है कि हम सब वहां साथ जा सकते हैं।
मैंने कहा कि मेरे बगीचे में एक फूल खिला है, मैं आप सबको ले चलता हूं।
आप सब फूल देख लेते हैं। और मैंने कहा कि मेरे हृदय में प्रार्थना का एक फूल खिला है। और आप खड़े रह जाते हैं, कोई उपाय नहीं रह जाता है। क्या, क्या किया जाए? और मैं कहां ले जाऊं आपको, और कहां दिखाऊं आपको कैसे? क्या किया जाए? ज्यादा से ज्यादा मेरे आचरण से थोड़ा-बहुत पकड़ा जा सके कि शायद फूल खिला हो प्रार्थना का, न खिला हो। तो यह जो ब्राह्मण की जो खोज थी मूलतः वह ब्रह्मांड की खोज नहीं है। ब्रह्मांड की खोज तो पहली दफा पश्चिम के ब्राह्मण ने शुरू की, ब्रह्मांड की खोज। पूरब के ब्राह्मण ने तो ब्रह्म की खोज की है। और कहना मुश्किल है, कहना मुश्किल है, कि उसने कोई गलती की है ऐसी खोज करके। गलती हो गई उसको परंपरा बनाने में। वह परंपरा नहीं बन सकती है। और पश्चिम की तो परंपरा बनेगी। वह स्वाभाविक है। उसमें कोई कठिनाई नहीं है।
दूसरी बात यह है कि वे जो जिन सूत्रों की आप बात करते हैं जैसा कि आइंस्टीन का सूत्र है या कोई और सूत्र है। ऐसे सूत्र धर्म के हैं ही नहीं, हो भी नहीं सकते? उसके भी बहुत कारण हैं। क्योंकि विज्ञान उस ची.ज के साथ श्रम कर रहा है, जो एक अर्थ में जड़ है। जड़ से मेरा मतलब यह है कि वह करीब-करीब वैसी ही रहती है, जैसी है। पानी हजार साल पहले भी सौ डिग्री पर गर्म होता था चाहे हम जानते हों चाहे ना जानते हों। अब भी सौ डिग्री पर ही गर्म होता है चाहे हम जानें या ना जानें। पानी अपनी आदतें नहीं बदलता। पानी एक अर्थ में जड़ है कि वह जैसा रहता है वैसा ही रहता है। और धर्म का सारा संबंध उस चेतना से है, जिसकी बदलाहट ही जिसका स्वभाव है। अगर वह न बदले तो वह जड़ हो जाए। उसकी बदलाहट ही उसका स्वभाव है। तो दस हजार साल पहले आदमी के संबंध में जो सत्य था जरूरी नहीं वह आज सच हो। और जरूरी नहीं कि जो आज सच है वह दस हजार साल बाद सच हो। उसकी चेतना रोज बदल रही है। और रोज-रोज नये आयामों में प्रवेश करती है और नये अर्थ खोज लेती है। और नये जीने के ढंग खोज लेती है।

तो ब्राह्मण की जो खोज है, वह आदमी की चेतना के संबंध में है। और इसलिए पश्चिम आदमी की चेतना का विज्ञान नहीं बना पा रहा, क्योंकि बड़ी मुश्किल है। सबसे बड़ी मुश्किल तो ये है कि वह अनप्रिडिक्टेबल है। और विज्ञान बन ही नहीं सकता अगर प्रिडिक्शन न हो सके। तो कोई मतलब ही नहीं अगर दो और दो चार हमेशा न होते हों तो कोई मतलब नहीं रह जाता कि दो और दो की मर्जी पर हो तो कभी वे पांच हो जाएं, कभी वे तीन हो जाएं और कभी हम दो और दो जोड़ें तो वे तीन हो जाएं। और कभी हम दो और दो जोड़े तो वे पांच हो जाएं। तो फिर गणित नहीं बनने वाला है। तो फिर गणित कैसे बनेगा? क्योंकि वे दो और दो का कोई फिक्स्ड नहीं रहा मामला। मनुष्य के साथ दो और दो का जोड़ हमेशा चार नहीं होता। इतनी तरल घटना है वह, और जितना गहरा मनुष्य होगा उतनी ही तरल घटना होती चली जाएगी। जितना जीवंत व्यक्ति तीव्र होगा उतनी तीव्र परिवर्तन की और अनप्रिडिक्टेबल की संभावनाएं रहेंगी। इसलिए ये हो भी सकता है कि एक साधारण आदमी के संबंध में हम कुछ घोषणा कर सकें। इसलिए भीड़ के संबंध में घोषणा हो सकती है। जैसे मैं यह नहीं कह सकता कि मनोज इस साल कार का एक्सीडेंट करेंगे। यह नहीं कहा जा सकता। लेकिन ये कहा जा सकता है कि बंबई में कितने कार के एक्सीडेंट होंगे। मेरा मतलब समझ रहे हैं न। क्योंकि भीड़ जो है जरा जड़ हो जाती है। सिर्फ बंबई में कहूं कि सौ एक्सीडेंट होंगे साल में, तो हो सकता है कि अट्ठानवे हों, एक सौ दो हो जाएं, लेकिन पूरे हिंदुस्तान में कहूं तो फासला और कम हो जाएगा। प्रिडिक्शन और करीब आ जाएगा। अगर पूरी दुनिया का हम जोड़ें तो प्रिडिक्शन और करीब जाएगा, करीब, करीब, करीब आ जाएगा। क्योंकि भीड़ जितनी बढ़ती चली जाएगी, उतनी चेतना क्षीण होती चली जाएगी। और जड़ता के नियम काम करना शुरू कर देंगे। यह बिल्कुल कहा जा सकता है कि अमरीका में कितने लोग आत्महत्या करेंगे, आने वाले साल में। लेकिन कौन करेगा ये नहीं कहा जा सकता कि यह आदमी करेगा कि नहीं करेगा। क्योंकि इसके लिए कोई उपाय नहीं। ये मेरा मतलब समझ रहे हैं न। और बुद्ध या जीसस जैसे आदमी के बाबत तो और भी मुश्किल है। भीड़ की बाबत आसान है लेकिन फिर भी एक साधारण व्यक्ति के बाबत भी मुश्किल है। लेकिन जितना असाधारण व्यक्ति होगा उतना ही मुश्किल है। एकदम मुश्किल है मामला। कहना ही मुश्किल है कि वह क्या करेगा?
जैसे बुद्ध की दो-तीन घटनाएं मुझे खयाल आती हैं। बुद्ध बारह साल के बाद अपने घर लौटते हैं। वे परमज्ञानी हो गए हैं। लाखों उनके शिष्य हैं, सारा गांव उनको लेने आया लेकिन उनकी पत्नी नहीं आई है, वह नाराज है। यशोधरा नहीं आई है लेने। बुद्ध ने चारों तरफ देखा यशोधरा मौजूद नहीं है। और कोई संन्यासी होता साधारण तो प्रिडिक्टेबल हो सकता था। क्योंकि संन्यासी को क्या मतलब पत्नी से। लेकिन बुद्ध ने भिक्षुओं से कहाः भिक्षुओं देखते हो यशोधरा दिखाई नहीं पड़ती? तो आनंद ने कहा आप ऐसी बातें न करें, लोग क्या कहेंगे? आप अगर यशोधरा की बात करेंगे, तो लोग क्या कहेंगे? बुद्ध ने कहा कि मैंने कभी नहीं सोचा कि लोग क्या कहेंगे? उस तरह मैं जीया ही नहीं। और निश्चित ही आनंद वह इसलिए नहीं आई है, मैं जानता था वह नहीं आएगी। वह बड़ी माननीय है, बारह साल पहले मैं छोड़ कर उसे भाग गया था, जाते वक्त विदा भी नहीं ली थी, स्वाभाविक है, कि वह नाराज हो। मुझे चलना पड़ेगा। आनंद ने कहाः आप क्या बातें करते हैं? लोग क्या कहेंगे? बुद्ध ज्ञानी और अपनी पत्नी को मिलने घर गया? अब कौन पत्नी, अब कौन बेटा, कौन पिता, कौन माता? संन्यासी की तो अपनी भाषा है न। और इसलिए सन्यासी प्रिडिक्टेबल हो सकता है। उसने कहा क्या मतलब है, कैसी पत्नी, कैसी बात? आनंद ने कहा कि मैं तुम्हारे सूत्र से नहीं चलूंगा। माना कि मेरी कोई पत्नी नहीं हैं, लेकिन उसका पति अभी भी है। मेरी तो कोई पत्नी नहीं रही, यह तो ठीक है। लेकिन उसका तो पति अभी भी है। और अपने पति से रुठ कर वह अब भी बैठी है। आनंद ने कहा है कि लोग सदियों तक याद रखेंगे कि बुद्ध से थोड़ी भूल हो गई। बुद्ध ने कहा कि यह चलेगा, इससे कोई हर्जा नहीं होगा। इतना ही कहेंगे न कि बुद्ध एक आदमी थे। भगवान होने का मेरा कोई दावा भी नहीं है। मैं घर चलता हूं। ये अनप्रिडिक्टेबिलिटि साधारण संन्यासी यह नहीं करेगा। संन्यासी प्रिडिक्टेबल हो सकता है। स्वामी रामतीर्थ की पत्नी मिलने गई, तो

रामतीर्थ ने दरवाजा बंद कर लिया। साथ में एक मित्र ठहरे हुए थे उनके, तुलसी, उन्होंने कहा आप यह क्या करते हैं? वर्षों बाद पत्नी मिलने आती है और आप दरवाजा बंद कर लेते हैं। अभी तक तो आप कहते थे कि सबमें ब्रह्म है, आज इस पत्नी में ब्रह्म न रहा? दरवाजा खोलें या मैं भी जाता हूं। और अब तक मैंने आपको सैकड़ों स्त्रियों से मिलते देखा है, कभी आपने कोई झिझक न दिखाई। आज इस स्त्री से मिलने से क्यों डरते हैं? क्या भय मन में पकड़ता है? और आप हैरान होंगे कि रामतीर्थ मुश्किल में पड़ गए। और रामतीर्थ ने उसी दिन गेरुवे वस्त्र छोड़ दिए। रामतीर्थ मरते वक्त गेरुवे वस्त्र नहीं पहने हुए थे। उसके छह महीने पहले पायजामा-कुर्ता पहन लिया था। वह उसी घटना से। किसी को क्या है कि ठीक ही कहते हों। और बुद्ध गए हैं घर, जब वे घर पहुंचे हैं तो दरवाजे पर अंदर गए हैं। तो आनंद उनका चचेरा भाई था। बड़ा भाई था। उम्र में ज्यादा था, रिश्ते में बड़ा था। तो जब उसने दीक्षा ली थी बुद्ध से, तो दीक्षा के पहले उसने उनसे एक शर्त ले ली थी कि दीक्षा के बाद तो मैं छोटा हो जाऊंगा। फिर तो मुझे आज्ञा माननी पड़ेगी। दीक्षा के पहले तक मैं तुम्हारा बड़ा भाई हूं। तुमसे एक शर्त ले लेता हूं, जो कि बाद में लागू रहेगी। वह शर्त यह थी कि मैं सदा-सदा तुम्हारे साथ रहूंगा। तुम मुझे कहीं अलग न कर सकोगे। यानी यह न कह सकोगे कि और कहीं जाके लोगों को समझाओ और विहार करो। मैं तुम्हारे साथ ही रहूंगा। यह दीक्षा के पहले बड़े भाई की हैसियत से यह ले लेता हूं। फिर दीक्षित हो गया था। तो वह उनके साथ ही था, वह उनके साथ ही चला अंदर महल के। बुद्ध ने उससे कहा, आनंद आज वह नियम न मानो। आज वह नियम छोड़ दो। क्योंकि यशोधरा बहुत नाराज होगी कि आज इतने दिन बाद आया हूं और फिर एक आदमी को साथ लेकर आ गया हूं। अगर उसको चिल्लाना हो, रोना हो, मुझे मारना हो, तो वह कुछ भी न कर पाएगी। न, आज यह नियम नहीं लागू होगा। यह जो आदमी है न, वह आनंद तो बिल्कुल भौचक्का खड़ा हो गया कि आप ये क्या बातें करते हैं? आप अपनी पत्नी से अकेले मिलना चाहते हैं? कहा कि निश्चित ही यह जो मैं कह रहा हूं जितना जीसस के बाबत ऐसे उल्लेख हैं वे बड़े हैरानी के हैं। ऐसे लोगों की बाबत हम पक्का नहीं कह सकते कि कल सुबह वे क्या करेंगे? या कल सुबह क्या करते हुए पाए जाएंगे? नहीं कहा जा सकता। और इसीलिए ऐसे लोग बड़ी मुश्किल में पड़ जाते हैं, जब जिंदा होते हैं। जब मर जाते हैं तब बड़े अच्छे हो जाते हैं। इसका कारण यह है कि वे मर जाते हैं, तो प्रिडेक्टेबल हो जाते हैं। बात खत्म हो जाती है। और उनके साथ कोई झंझट नहीं रह जाता। अब हम उनको अपने ढांचे में बिठा सकते हैं। व्यवस्थित कर सकते हैं। मरे हुए संत सदा प्रीतिकर हो जाते हैं। जीवित संत अप्रीतिकर होता है। कई जगह खटकता है और दिक्कत देता है, और कठिनाई देता है।
वह जीसस की बाबत मैं कह रहा था कि जीसस के जमाने में एक वेश्या थी मेग्दलीन। जीसस एक रास्ते से गुजर रहें हैं, और दोपहर है भरी और वे थक गए हैं। और वह एक बगीचे में जाकर विश्राम करने लगे। उन्हें कुछ पता नहीं कि वह मेग्दलीन का बगीचा है। वैश्या का बगीचा है। दोपहर है, मेग्दलीन ने अपनी खिड़की से झांक कर देखा कि कौन अदभुत सा व्यक्ति उसके वृक्ष की छाया में लेटा हुआ है? उसने बहुत सुंदर लोग देखे थे, लेकिन जीसस के सौंदर्य की बात कुछ अलग थी। वह गई और उसने जाकर कहा कि युवक यहां कहां बाहर सोते हो, भीतर आओ घर में विश्राम करो? उसके द्वार पर तो बड़े सम्राटों की वापस लौट जाने की हालत हो गई थी। उसने कभी किसी को बुलाया हो ये तो था ही नहीं, पहला मौका था। उसने कभी सोचा भी न था कि उसके बुलावे को भी कोई टाल देगा। जीसस ने कहा विश्राम तो हो चुका। अब तो मैं जाने की तैयारी में हूं। लेकिन दुबारा आऊंगा तो घर के अंदर ही पहले आ जाऊंगा। उसने कभी सोचा भी न था कोई उसे इंकार कर देगा उसने कहा कि मेरी बरदाश्त से बाहर है। वह बहुत सुंदर स्त्री थी, उसने कहा कि मेरी तरफ देखो, भीतर चलो, एक-दो मिनट विश्राम करो, क्या मेरे प्रति इतना प्रेम भी प्रकट नहीं कर सकते? जीसस ने कहा प्रेम? जहां तक प्रेम का संबंध है मेरे सिवाय तुझे कोई प्रेम कर ही नहीं सकता है। जीसस ने उस वेश्या से कहा, जहां तक प्रेम का सवाल है मेरे सिवाय तुझे कोई प्रेम कर ही नहीं सकता है। जो तेरे द्वार पर आते हैं। द्वार खटखटाते हैं उनमें से किसने तुझे प्रेम किया है? मैं ही तुझे प्रेम कर सकता हूं। और जब जीसस के

शिष्यों को पता चला कि एक वेश्या से उन्होंने ऐसा कहा तो वे बहुत नाराज हुए, उन्होंने कहा आप ये क्या बातें करते हैं? कि आपने एक वेश्या से कहा मैं ही प्रेम कर सकता हूं? जीसस ने कहा, कि मैंने ठीक ही कहा है, मैं ही प्रेम कर सकता हूं।
ये आदमी हमारे ढांचे और हिसाब में कहीं चूक खा जाएगा, ये वहां नहीं बैठ पाएगा। जितनी चेतना जीवंत होगी, उतनी ही विलक्षण और भविष्यवाणी के बाहर होती चली जाएगी। इसीलिए हम परमात्मा के संबंध में कोई भविष्यवाणी नहीं कर सकते। कोई भी भविष्यवाणी नहीं कर सकते। ये जो, जिसे धर्म मैं कह रहा हूं और ब्राह्मण ने जिसकी खोज की, वह खोज ऐसी थी, कि वहां मुट्ठी तो बंध जाती है लेकिन जिसको मुट्ठी बांधी थी, वह मुट्ठी से बाहर हो जाता है। इसलिए मुट्ठी बंद थी। जैसे हवाओं को मुट्ठी में कोई बांधता हो। तो जब तक न बांधिए तो हवा मुट्ठी में होती है और बांधिए तो मुट्ठी के बाहर हो जाती है। तो जैसे हमने शब्दों में बांधने की कोशिश की तो वह छिटक कर बाहर हो गया, जिसे हमने बांधा। सूत्र हैं लेकिन उन सूत्रों का कोई मतलब नहीं है। और वे सूत्र कुछ निश्चित नहीं हैं। वे सूत्र रोज बदल जाते हैं। वह वैज्ञानिक अर्थों में सूत्र नहीं हैं जो कि थिर होते हैं। और सदा थिर रहते हैं। और हो सकता है कि विज्ञान भी जैसे-जैसे नीचे प्रवेश कर रहा है, वैसे- वैसे वह भी झंझट में पड़ा जा रहा है। फिर सूत्र उसके भी मुश्किल हो जाएंगे। क्वांटम या नई जो खोजें हैं उनकी, वह वहां घबड़ाहट की बातें हो गई हैं शुरू, क्योंकि जैसे-जैसे वे एटम के और परमाणु के नीचे गए हैं वैसे-वैसे ऐसा लगा है जैसे वहां प्रिडिक्शन मुश्किल हो रहा है।
एक बहुत हैरानी की घटना समझ में आई है कि वे जो इलेक्ट्रांस हैं, बिल्कुल आखरी के टुकड़े, वे प्रिडिक्टेबल नहीं है। यानी यह पक्का नहीं कहा जा सकता कि वह कैसा व्यवहार करेंगे? इतनी खतरनाक बात है क्योंकि यह इस बात की खबर है कि वहां आत्मा आ गई है। यह इस बात की खबर है। नहीं तो कोई उपाय है नहीं। हम जानते हैं कि इस कुर्सी को हम इस कमरे में छोड़ जाएंगे जहां यह यहीं मिलेगी यदि नहीं हटाई गई। मतलब कुर्सी से हटने की कोई आशा नहीं है। यह हम मान कर जा सकते हैं घर से बाहर कि कुर्सी यहीं मिलेगी, तकिए वहीं रखे होंगे, सामान मूर्ति वहीं होगी। दीवालें जहां की तहां, होंगी ये यह मानके जा सकते है, यदि नहीं हटाई गई तो। कोई हटाने वाला नहीं आया तो, कुर्सी वहीं होगी जहां थी।
लेकिन इलेक्ट्रांस के बाबत बहुत नये अदभुत अनुभव हुए हैं। वह ये, एक अनुभव तो ये हुआ है कि उनकी बाबत कुछ पक्का नहीं कहा जा सकता कि वह एक सेकंड में इतना चक्कर लगा रहे हैं अगले सेकंड में भी इतना ही लगाएगा। अगले सेकंड में कम भी लगा सकता है ज्यादा भी। लगा सकता है। उसका जो रास्ता है वह अभी तक ऐसा रहा है तो अगले सेकंड में भी ऐसा ही रहेगा ये भी पक्का नहीं है। और इस सबमें भी जो सबसे हैरानी की बात समझ में आई, जिसने कि विज्ञान की पूरी की पूरी जड़ें हिला दी, वह यह कि उसके ऑब्जर्वेशन से उसके व्यवहार में फर्क पड़ता है, ऑब्जर्वेशन से।
जैसे कि आप इस कमरे में बैठे हुए हैं और आपको पता है कि कोई नहीं देख रहा है, तो आप दूसरे आदमी हैं। अपने बाथरूम में हर आदमी दूसरा होता है। कोई नहीं देख रहा है इसलिए वह दूसरा आदमी है। फिर अचानक उसे पता चलता है कि कुंजी के छेद में से कोई उसे झांक रहा है। एकदम दूसरा आदमी हो जाता है। उसके बिहेवियर में फर्क पड़ा है। समझ रहे हैं न ऑब्जर्वेशन, यह बड़ी हैरानी की बात है कि इलेक्ट्रान के ऑब्जर्वेशन से इलेक्ट्रान का रास्ता बदल जाता है। वह गड़बड़ करता है, वह जैसा चलता था, चल रहा था वैसा नहीं चलता है, उसमें चूक-चाक हो जाती है। और इससे पहली दफा यह खयाल पकड़ना शुरू हुआ है कि वहां नीचे उस गहराई पर फिर अनप्रिडिक्टेबल शुरू हो गया है। यानी मेरा मानना है कि चाहे ऊपर की तरफ ऊंचाई पर जाओ, तो जितने ऊंचे जाओगे उतना अनप्रिडिक्टेबल आ जाएगा। और चाहे नीचे गहराई की तरफ जाओ तो जितना नीचे जाओगे फिर अनप्रिडिक्टेबल आ जाएगा। और इसलिए मेरी ये भी दृष्टि है कि आज नहीं कल अगर विज्ञान भीतर, भीतर, भीतर जाता है, तो वह ब्रह्मांड से ब्रह्म की तरफ प्रवेश शुरू कर देगा। क्योंकि ब्रह्मांड की गहराई में ब्रह्म है।

इसकी पूरी संभावना है क्योंकि उसकी मिस्ट्री उसकी पकड़ में आने लगी है, और वहां कुछ चूक होने लगी है उसकी। जहां उसकी पकड के बाहर है कुछ।
पर जिस ब्राह्मण की आप बात कर रहे हैं उस ब्राह्मण ने खोज ब्रह्म की
कि थी जो कि अनिवार्य रूप से अनिश्चित है, तरल है, सदा भागा हुआ है, ठहरा हुआ नहीं है, गतिमान है। और इसलिए उसने जो सूत्र बनाए थे वे भी उतने ठहरे हुए नहीं हो सकते। इसलिए हर ब्राह्मण अपने सूत्र गढ़ सकता है, इसमें कोई कठिनाई नहीं। इसमें किसी दूसरे ब्राह्मण से झगड़ा भी नहीं है। इसलिए बुद्ध अपने को ब्राह्मण कह सकते हैं। बल्कि ये भी कह सकते हैं कि मैं ही सच्चा ब्राह्मण हूं। और सब ब्राह्मणों का खंडन कर सकते हैं। और यह कह सकते हैं कि सच्चा ब्राह्मण मैं हूं। बाकी ये कोई ब्राह्मण नहीं हैं। पर वह ब्रह्म को जानने के अर्थ में और उसको विज्ञान कभी बनाने की सोचना ही मत। उसका कारण है कि विज्ञान बनाने की बात ही मत सोचना। कुछ बातें हैं जो विज्ञान नहीं बन सकती हैं और न बनें तो अच्छा है। क्योंकि जैसे ही वह विज्ञान बन जाएंगी वैसे ही व्यर्थ हो जाएंगी। असल में किसी चीज का विज्ञान बनने का मतलब यह है कि उसमें से रहस्य की हत्या कर दी गई। जिस चीज को आप विज्ञान बनाएंगे उसमें से रहस्य तिरोहित हो जाएगा। और अगर रहस्य तिरोहित न हो सके तो विज्ञान न बनेगा। विज्ञान का मतलब यह है कि जहां-जहां से रहस्य को हम हटा देते हैं, और चीजें साफ सीधी हो जाती हैं और गणित के आधार पर चलने लगती हैं, नियमबद्ध हो जाती हैं। और जहां भी मिस्टरी है, रहस्य है, वहीं विज्ञान हो जाता है। और धर्म का सारभूत ही यही है कि हमारा ऐसा मानना है, यानी ब्राह्मण का ऐसा मानना है, वह जो ब्रह्म का तलाशी है, उसका ऐसा मानना है कि कितना ही खोजो, कितना ही खोजो, कितना ही खोजो, कुछ निरंतर अनखोजा रह ही जाता है। वह कभी खोज में आता ही नहीं वह छूट ही जाता है।
समथिंग एक्स निरंतर छूट जाता है, तुम कितना ही खोजो कितना ही, ऐसा नहीं है कि कल तुम खोजोगे, परसों खाजोगे तो उसे पा लोगे, नहीं, वह छूटता ही जाएगा, छूटता ही जाएगा, छूटता ही जाएगा, ऐसा कोई क्षण नहीं होगा, जिस दिन हम कह सकेंगे कि सब जान लिया गया है। नहीं होगा, ऐसा कुछ। यह धर्म की आधारभूत पकड़ है। उसका कहना यह और इसलिए वह कहता है कि वह हम यह नहीं कहते कि ईश्वर मिस्टरी है, मैं नहीं कहता ऐसा। मैं नहीं कहता कि ईश्वर रहस्यमय है। मैं यह कहता हूं कि जो रहस्यमय है वह ईश्वर है। इस खयाल में ना जब हमने कहा कि ईश्वर रहस्यमय है, ऐसा मैं नहीं कहता। ईश्वर को बीच में लेने की जरूरत ही नहीं जो रहस्यमय है, यानि जो हमारे जानने के सदा बाहर छूट ही जाता है, छूट ही जाता है। हम पहुंचते हैं, पहुंचते हैं। और वह हाथ से बाहर हो जाता है। अननोन नहीं अननोएबल है। वह नहीं जो अज्ञात है, क्योंकि अज्ञात कल ज्ञात हो जाएगा। अज्ञेय जो कल भी ज्ञात नहीं, परसों भी ज्ञात नहीं। असल में जो ज्ञात हो ही नहीं सकता है ऐसा कुछ। अगर ऐसा कोई बिंदु है तो धर्म का कोई अर्थ है, अगर ऐसा कोई बिंदु नहीं, जीवन में तो धर्म आज नहीं तो कल मर ही जाएगा। मर ही जाना चाहिए, उसके बचने का कोई मतलब नहीं लेकिन ध्यान रहे, जिस दिन वह एक्स का बिंदु जो है रहस्य का बिंदु जो है वह मर जाए, उसी दिन धर्म ही नहीं मरेगा, साथ में काव्य भी मरेगा, कला भी मरेगी। वह साथ-साथ मरेंगे संगीत मरेगा, गीत मरेगा, वे सब साथ-साथ मरेंगे, फूल मरेगा, सौंदर्य मरेगा, नीति मरेगी, वह सब साथ-साथ मरेंगे। इधर मैं जितना इसकी तरफ देखता हूं, उतना ही हैरान होता हूं। इन सबकी बेस में धर्म हैं, हालांकि आम तौर पर धार्मिक आदमी इनके विरोध में खड़ा हुआ मालूम पड़ता है। वह काव्य के, कला के, साहित्य के विरोध में मालूम पड़ता है।

हां, हम जान जाएंगे सब कुछ, और जानने के लिए कुछ न रह जाएगा तो सिवाय आत्मघात करने के कुछ भी नहीं बचता है। कुछ करने को नहीं बचता है।
पश्चिम में जो इतने जोर से आत्मघात है, उसके एक कारणों में यह मानता हूं कि पश्चिम में रहस्य का बोध क्षीण हुआ है। जो रहस्य का बोध है न जो जीवन का यदि वह क्षीण हो जाए तो मरने के सिवा बचता क्या है? करने को क्या बच जाता है? इसको हम जरा सोचें कि हमने सब जान लिया जो जाना जा सकता था, फिर कल क्या है। कल सुबह उठ कर क्या करना है? एकदम सब ठप्प हो जाता है। बात

खत्म हो जाती है, यात्रा बंद हो जाती है। धर्म का कहना यह है कि नहीं कुछ खत्म होता, कुछ शेष रह जाता है, भला आप पकड़ पाएं, खोज पाएं, न खोज पाएं, कुछ शेष रह जाता है। जो हमेशा जानने योग्य है। यह जो, ये जो ब्राह्मण की खोज थी, मिस्टरी की, रहस्य की वह विज्ञान की खोज नहीं उनकी खोज में बुनियादी भेद है। विज्ञान की खोज है कि मिस्टरी को खत्म करेंगे, रहस्य को न रहने देंगे, रहस्य है ही नहीं सिर्फ हमारे अज्ञान का नाम रहस्य है। विज्ञान की भाषा में इग्नोरेंस का मतलब मिस्टरी है। हम नहीं जानते इसलिए रहस्य मालूम हो रहा है, बाकी रहस्य है नहीं, जान लेंगे और सब खत्म हो जाएगा। यानी विज्ञान यह कह रहा है कि आपको फूल सुंदर मालूम हो रहा है, वह सिर्फ इसलिए मालूम हो रहा है, आपको उसका कैमिकल कैसे बना है? यह आपको पता नहीं है, यह आपको पता हो जाएगा।

वह उस हालत में बिल्कुल ही धार्मिक आदमी है, वह वैज्ञानिक है नहीं। और इसलिए जो ठेठ वैज्ञानिक हैं वे आइंस्टीन के पिछले वक्तव्यों को सिर्फ मृत्यु के आने की खबर मानता है। आइंस्टीन घबड़ा गया है। पैर हिल गए हैं। वह ऐसा नहीं मानता है कि वक्तव्य वैज्ञानिक के हैं, वह मानता है कि वैज्ञानिक जो मौत से घबड़ा गया और जिसकी पुरानी पकड़ खो गई है और अब जो परेशान हो गया है और अब जो इस तरह की बातें कर रहा है। लेकिन आइंस्टीन के पहले के वक्तव्यों में ऐसी बात नहीं है। आखिर में तो बहुत सी चीजों का असर पड़ा, आखिर में तो बहुत सी चीजों का असर पड़ा। सबसे बड़ा असर तो ये पड़ा कि उसकी खोजें ही उसे किसी अंतिम उत्तर पर न ले गईं, जिसकी उसे आशा थी। उसकी हर खोज ने उसे ऐसा बताया कि और हजार नये प्रश्न भर खड़े हो गए हैं, और कुछ भी नहीं हुआ। एक प्रश्न हल करने गए थे वह जरूर हल हो गया है लेकिन उसके हल होते ही हजार प्रश्न खड़े हो गए हैं। जो उतने ही गैर-हलके हैं जितना कि पहला प्रश्न था। और जब यह रोज होता चला गया तब उसको ऐसा प्रतीत हुआ कि शायद हम एक प्रश्न से दूसरे प्रश्न पर ही जा रहे हैं। उत्तर कहीं भी नहीं है। ऐसी अगर प्रतीति हो जाए तो मैं मानता हूं कि धर्म की शुरुआत होती है कि उत्तर कहीं भी नहीं। ऐसा आदमी एकदम धार्मिक हो जाएगा। मगर हम उलटी बात देखते हैं। आमतौर से हम देखते हैं, जिसको हम धार्मिक कहते हैं उसके पास उत्तर है। सवाल शायद न हो, आप उसके पास जाइए तो वह बता देगा कि हां, ब्रह्म हैं, ईश्वर है, आत्मा है, पुनर्जन्म है, फलाना-ढिकाना, सब उत्तर हैं उसके पास। तब मैं कहता हूं, वह धार्मिक आदमी नहीं होगा। क्योंकि अगर उत्तर हैं तो वह वैज्ञानिक हो सकता है। क्योंकि उत्तर हैं उसके पास जिसके पास रहस्य नहीं रहा। अगर रहस्य है तो धार्मिक आदमी हैजिटेट करेगा, झिझकेगा और विरोधी भाषा में बोलेगा। यानी इधर हां भी कहेगा, उधर न कहेगा। नहीं कहेगा न, बल्कि इधर हां कहेगा, इधर फौरन न कहेगा। वह दोनों एक साथ कह लेगा ताकि कोई झंझट न हो। क्योंकि वह बहुत हैजिटेट कर कहा है, बहुत मुश्किल में है, उसको चीजें साफ नहीं रहस्यपूर्ण लगती हैं।
एक मैं घटना निरंतर बुद्ध की कहता हूं कि बुद्ध एक गांव में गए। और एक आदमी मिला और उस आदमी ने बुद्ध से कहा कि मैं नास्तिक हूं और ईश्वर को नहीं मानता हूं, आपका क्या खयाल है? बुद्ध ने कहाः ईश्वर को नहीं मानते हो? ईश्वर ही है और तो कुछ है ही नहीं। क्या कहते हो ईश्वर को नहीं मानते? ईश्वर ही है और तो कुछ है ही नहीं। आनंद ने बहुत चौंक कर देखा कि बुद्ध क्या कह रहे हैं? पर वह चुप रहा। भीड़-भाड़ बढ़ गया था। दोपहर को एक आदमी और बुद्ध के पास आया, उसने कहा, मैं आस्तिक हूं, ईश्वर को मानता हूं। तो बुद्ध ने कहा कि पागल हो गए हो, ईश्वर को बहुत खोजा ईश्वर पाया ही नहीं, है ही नहीं। ईश्वर है ही नहीं। आनंद और घबड़ा गया क्योंकि उसने दोनों उत्तर सुन लिए। सांझ एक तीसरा आदमी आया, उसने बुद्ध से पूछा कि ईश्वर के संबंध में कुछ कहिएगा, मुझे कुछ पता नहीं। तो बुद्ध ने कहाः तुझे भी पता नहीं, मुझे भी पता नहीं, हम चुप ही बैठें तो हर्ज है कोई? हम चुप ही बैंठें तो कोई हर्ज है?
रात जब वे सोने लगे तो आनंद ने कहा कि अभी सो मत जाइए, पहले मुझे, मैं मुश्किल में पड़ गया हूं, मेरा दिमाग खराब हो जाएगा। सुबह आपने कहा नहीं,

दोपहर आप कहते हैं कि है, सांझ आप कहते हैं कि कुछ भी पता नहीं, हम दोनों चुप बैठें तो कोई हर्ज है। तो बुद्ध ने कहा कि वे उत्तर तेरे को दिए किसने थे, तूने लिए क्यों, जिसको दिए गए थे उसकी बात थी, तुझसे क्या लेना-देना? उसने कहाः लेकिन ये तीन उत्तर बिल्कुल विरोधी हैं। बुद्ध ने कहाः मेरे तीनों उत्तरों का एक ही मतलब है। मैं पहले आदमी को भी हेजिटेशन में डालना चाहता था। बड़ा पक्का था वह कि ईश्वर नहीं है, उसे मैं टहलाना चाहता था वह आदमी वैज्ञानिक हो गया था, धार्मिक नहीं रहा, पक्का था। वह दूसरा आदमी भी पक्का हो गया था वह कहता था कि ईश्वर है, वह भी चूक गया था मामला, मामला तो वह है जहां रहस्य है, उसको भी हिला दिया, थोड़ा सा धक्का दिया कि शायद हिल जाए। मेरे उत्तर की फिकर मत कर, मैं जो कह रहा था वह एक ही काम कर रहा था सुबह भी, दोपहर भी और सांझ एक बढ़िया आदमी आया था उसको कोई भी उत्तर देना खतरनाक था, क्योंकि उसको बुद्ध का उत्तर समझ कर पकड़ लेता और निश्चिंत हो जाता। उससे कहा कि तुझे भी पता नहीं मुझे भी पता नहीं तो दोनों चुप बैठें तो कोई हर्ज है।
यह जो, यह जो बुद्ध जैसा आदमी है यह एक धार्मिक आदमी है। पर धार्मिक आदमी को समझना मुश्किल हो जाता है। क्योंकि उसके सारे वक्तव्य विरोधी मालूम पड़ते हैं। उसके एक-एक वाक्य में भी विरोध होता है। और सारे विरोध का कारण इतना है कि उसे रहस्य का बोध हो रहा है। और रहस्य के बोध का आप खयाल करते हैं। बहुत अदभुत बात है। रहस्य के बोध का मतलब यही है कि दोनों विरोधी मौजूद हैं इसलिए रहस्य है। नहीं तो रहस्य हो नहीं सकता। यहां जन्म भी है और मौत भी है, और एक साथ हैं। यहां प्रेम भी है और घृणा भी है, और एक साथ हैं। यहां फूल भी है और कांटा भी है और बिल्कुल एक साथ हैं। और एक ही डंडी पर और एक ही प्राण-धारा से आए हुए हैं। इसलिए रहस्य है।
रहस्य का मतलब ही ये है कि विरोधी जिनके बीच में कोई तालमेल ही नहीं दिखता वह भी हैं। और एक बड़ी यूनिटी में दोनों समाविष्ट हैं, दोनों मौजूद हैं। आप को मैं सुबह रोते देखता हूं, दोपहर हंसते देखता हूं, बड़ी मुश्किल हो जाती है, कि जो आदमी रोता था वह हंसता कैसे है? क्योंकि अगर आदमी से रोना आता था तो यह हंसना कैसे आ रहा है? यह उचित हुआ होता, सीधा साफ हुआ होता कि जो रोता वह रोता, जो हंसता वह हंसता। गणित साफ रहता। हम जानते की फलां आदमी हंसता है, फलां आदमी रोता है। यह बड़ी मुश्किल है। यहां मुश्किल ऐसी है कि वह आदमी सुबह रोता है, सांझ हंसता है। और ऐसी भी हालतें आ जाती हैं कि वह हंसता भी है और रोता भी है और दोनों एक साथ भी कर लेता है। और तब बड़ा मुश्किल हो जाता है मामला। तब कि अब हम क्या करें? तब मिस्ट्री हो जाती है। तब एक मिस्ट्री हो जाती है।
मैं एक घर में ठहरा हुआ था। एक बहुत मजेदार घटना हो गई। सांझ को बगीचे में एक कुर्सी पर बैठा हुआ था। घर की जो गृहिणी थी, जो गृहिणी थी, वहां एक ऐसा तख्त पड़ा हुआ था मेरे सामने, मैं ऐसे कुर्सी पर बैठा हूं, सामने वह तख्त पर लेटी हुई थी, मेरा ऐसे पैर उसके सिर के पास तख्त पर रखा हुआ था और उसकी नाक मेरे पैर के करीब थी, तो मैंने अंगूठे से उसकी नाक छू दी। वह एकदम से, वह झपकी में थी, वह एकदम से घबड़ा गई, वह एकदम रोने लगी। और मुझे कुछ पता नहीं था कि उसको ऐसा, घबड़ाहट हो जाएगी। एकदम रोने लगी, तो सब इकट्ठे घर के लोग हो गए। और जब मैंने उसको कहा कि इतनी घबड़ा मत, हुआ क्या है? मैंने तो सिर्फ अंगूठा... तो वह हंसने भी लगी, तो उसकी समझ में यह भी आ गया कि मैंने उसकी नाक में सिर्फ अंगूठा लगाया है। और उसकी घबड़ाहट, और उसका हंसना, और रोना सब एक साथ हो गया। तब तो घर के लोग बहुत घबड़ा गए। क्योंकि इसका मतलब यही हुआ कि कोई गड़बड़ बात हो गई। कोई भूत-प्रेत हो गया।
जहां मिस्ट्री हैं वहां भूत-प्रेत फौरन मौजूद हो जाए न। एकदम घबड़ा गए
कि क्या मामला है? अगर वह रोए तो भी ठीक समझ में आ जाए, जब वह शांत हुई तो मैंने उससे पूछा कि तूने दोनों एक साथ क्यों किया? तो वह बोली, मुझे खुद बड़ी मुश्किल हो गई। मुझे हंसी इस बात की आ रही थी कि क्या गंवारी मैं कर रही हूं, और घबड़ा तो मै गई ही थी, वह तो रुक ही नहीं रहा था, आंसू तो बहे चले जा रहे थे, मैं अपने ही आंसुओं पर रो रही थी।

तब एक तीसरा बिंदु निकला कि वह हंस भी रही थी, रो भी रही थी और दोनों के पीछे खड़े होकर देख भी रही थी। तब यह मिस्ट्री हो जाती है। वहां तब बहुत विरोधी स्वर इकट्ठे हो जाते हैं। और वे सब इकट्ठे हैं और एक ही व्यक्ति में समाए हुए हैं, और एक ही घटना में समाए हुए हैं। और एक जगत में इतना विरोध समाविष्ट है। और उसकी वजह से रहस्य है। अगर हम उसको सबको साफ-सुथरा कर लें, छांट-छांट कर अलग कर लें।...
एक घटना मैं पढ़ता था। एक विचारक किस्म का आदमी जो निरंतर सोचता रहता था, पहले महायुद्ध में भर्ती हो गया। उसे जो खाना बनाने का काम था, वहां मैस में उसको भेज दिया। वहां छोटा-मोटा कोई काम करो। उसको पहले ही दिन कहना कि उसको ऐसा छोटा-मोटा काम देना जिसमें सोच विचारने की जरूरत ही न हो। तो उसको मटर कुछ दिए हैं और उससे कहा है कि बड़े मटर और छोटे मटर अलग कर डालो। वह घंटे भर बाद कैप्टन गया तब वे वैसे ही बैठा हुआ था। और मटर वैसे ही रखे हुए थे तो वह बोला आप अभी तक अलग नहीं कर पाए इतना छोटा सा काम, उसने कहा कि मैं अलग कभी का कर लेता लेकिन कई मटर ऐसे हैं, जो न छोटे हैं न बड़े हैं, अब मैं इस चिंता में हूं कि इनको कहां किया जा सके? पहले यह पक्का तो हो जाए कि नाहक मैं मेहनत करूं, कुछ बड़े हैं माना, कुछ छोटे हैं माना लेकिन कुछ ऐसे हैं जो न छोटे हैं, न बड़े, और जब तक उनका पक्का नहीं हो जाता तब तक अकारण श्रम में जाने की कोई जरूरत नहीं पहले पक्का हो जाना चाहिए।
अब ऐसा जो आदमी है यह मेरी दृष्टि में धार्मिक हो सकता है, इसको चीजों
की अब हमें कभी भी खयाल न आता कि दोनों के बीच के भी कुछ मटर हैं। हां, ऐसे लोग भी हैं, जो संत भी नहीं हैं और असंत भी नहीं हैं। और जिनको कहीं भी नहीं रखा जा सकता। लेकिन हमने साफ बांट लिया है। साफ बांट लिया है--अच्छे लोग हैं, बुरे लोग हैं। और ऐसे लोग भी हैं जो दोनों नहीं हैं। हां, और ही अर्थ के लोग उनको हम कहां रखेंगे, वे मिस्टरी हैं। और वह मिस्टरी निरंतर है, सब तरफ है। कुछ हैं जिसको हम सौंदर्य कह देते हैं। कुछ हैं जिसको हम कुरूपता कह देते हैं। लेकिन कुछ हैं जिसको क्या कहें, वे दोनों नहीं हैं। हम कहीं बांट देते हैं अपने हिसाब से लेकिन कहीं दोनों नहीं हैं। हां, वह भी पूरी संभावना है, वह भी पूरी संभावना है, असल में कोई आदमी बिल्कुल अच्छा ही नहीं है, बिल्कुल बुरा है। और इन सब चीजों का इतने विरोध की जो मल्टिपलसिटी है उसका जो इकट्ठा होना है और एक ही तत्व में अस्तित्व में होना है। वह उसका रहस्य है। इसका अगर बोध हो तो हम गणित से पार चले जाते हैं। फिर हम जोड़ नहीं लगाते, क्योंकि जोड़ लगाने को नहीं बचता है, क्योंकि कुछ है जो जोड़ में आता ही नहीं, फिर जोड़ बेमानी हो जाता है। ऐसे रहस्य का बोध की खोज में हैं। ब्राह्मण उसने जो सूत्र बनाए थे वह ऐसे सूत्र नहीं थे जैसा कि गणित के सूत्र है, साइंस के सूत्र हैं। वह अलग ही सूत्र हैं। उसकी बात को विज्ञान भी कहना ठीक नहीं है। बहुत और बात है, बहुत ही और बात है। उपनिषदो में बहुत सी अदभुत बात की हैं उन्होंने। जिसे हम आज विज्ञान कहते हैं उसको वे अविद्या कहते हैं। अविद्या। अविद्या का मतलब अज्ञान नहीं, विद्या और अविद्या, विद्या का मतलब उस तरफ ले जाए जो सच में हैं। अविद्या का मतलब है कि उस तरफ ले जाए जो है नहीं, लेकिन प्रतीत होता है कि है। अविद्या का मतलब अज्ञान नहीं है। अविद्या का इतना ही मतलब है कि ऐसा ज्ञान जो उस तरफ ले जाए जो सच में नहीं है। हां, लेकिन प्रतीत होता है कि है। तो उसकी जो छान-बीन और खोज, अगर विज्ञान का, साइंस का ठीक अनुवाद करना हो तो विज्ञान नहीं करना चाहिए, उसका अनुवाद अविद्या ही करना चाहिए। क्योंकि विज्ञान का और ही मतलब है, इस देश के चिंतन में विज्ञान का और ही मतलब था। उसका मतलब ज्ञान को विशेष धारा में बहाने से है। विज्ञान का मतलब विशेष ज्ञान। एक तो सिर्फ ज्ञान है। जिसको महावीर ने बहुत अच्छा शब्द दिया केवल ज्ञान। जस्ट नोइंग, नॉट नोइंग एनिथिंग, जस्ट नोइंग। किसी चीज को नहीं जान रहे हैं, बस जान रहे हैं। सिर्फ जानना भर है। तो उसको तो वह कहते हैं केवल ज्ञान, मात्र ज्ञान। और विज्ञान वह उसको कहते हैं कि किसी चीज को जान रहे हैं, उसको विज्ञान कहते हैं। और विज्ञान दो तरह के हैं, विद्या और अविद्या। अविद्या मतलब वह विज्ञान जो उन चीजों को जान रहा है, जो सच में नहीं है। जैसे कोई सपने की खोज में लगा हुआ है। तो जो नहीं है लेकिन है तो,

और उसकी खोज कर रहा है। कोई फ्रायड है और वह सपने की खोज कर रहा है और सारा जीवन लगा रहा है, और साइंस खड़ी कर रहा है। इसको वह कहेंगे अविद्या, सपने की खोज है न आखिर। किसी ऐसी चीज की खोज है जो है नहीं। तो विज्ञान के दो हिस्से हैं विद्या और अविद्या। नहीं जो है और नहीं है वह तो परम ही बात है। हां, सपना जब होता है तो बिल्कुल ही होता है। हां, बिल्कुल ही होता है, और तब भी एक अर्थ में नहीं होता है। तब भी सपना ही होता है। यानी तब भी सपना ही होता है। तब भी सत्य नहीं होता है। हां, प्र्रतीत हमें होता है कि सत्य है। मेल खा सकता है कभी, हां, कभी मेल खा सकता है। कभी मेल खा सकता है, कभी किसी सत्य से मेल खा सकता है। सपना कभी सत्य नहीं होता। किसी सत्य से मेल खा सकता है। और जिसको हम सत्य कहते हैं, उसको तो जिसको मैं व्यवहार कह रहा हूं, जिसको हम सत्य कहते हैं, उसके सामने तो वह भी सत्य नहीं सिर्फ जागा हुआ सपना है। जिसको मैं कह रहा हूं न, जिसको मैं सत्य कह रहा हूं, हमारे दो तरह के सपने हैं, एक रात के सपने जो हम सो के देखते हैं, एक दिन के सपने जो हम जाग कर देखते हैं। इसलिए जागे हुए सपने रात को खत्म हो जाते हैं, सोए में पता नहीं रह जाता उनका। और दिन में वे, हां, हां दिन के भी सपने हैं आपके।
एक बात है, असल में जब तक हम आगे जाते रहेंगे और पीछे जाते रहेंगे, कोई ठोकर लगा सकता है पीछे जाने वाली भी और कोई ठोकर लगा सकता है आगे जाने वाली भी। लेकिन एक ऐसी जगह भी है जहां न हम आगे जाते हैं, न हम पीछे जाते हैं, जहां हैं वहीं रह जाते हैं। बात करनी चाहिए हमें जो वहीं हैं, वहीं छोड़ जाएं जहां हम हैं। न आगे ले जाएं न पीछे ले जाएं, क्योंकि जिसे हम अभी आगे कहेंगे वह कल पीछे हो जाएगा। कल इसको आगे कहा था न आज पीछे हुए जा रहा है। लेकिन एक कोई जगह है जहां हम हैं। क्योंकि अगले या पिछले हमारे उपयोग पे निर्भर करते हैं। हम किस तरफ से देखना शुरू करते हैं। हाँ, उसमें कोई कठिनाई नहीं है। यानि हमारी सारी की सारी पूरब कहते हैं, पश्चिम कहते हैं, ऊपर कहते हैं, नीचे कहते हैं। ये सब कामचलाऊ बाते हैं। और कहां हम खड़े हैं, इस पर निर्भर होती हैं। और हमने कौन सी भाषा पकड़ कर तय कर लिया है। अगला जमाना कह सकते हैं। जो जा चुका है। जो आगे जा चुका है इसलिए अगला। हमारा तो पीछे जाएगा अब न उसके, और हम अगला जमाना उसको भी कह सकते हैं जो अभी नहीं आया। जो हमसे आगे आएगा। तो इसमें कोई कठिनाई नहीं है। इसमें कोई कठिनाई नहीं है। और बिल्कुल ही सापेक्ष हैं। हां, लेकिन जो मैं कह रहा हूं, आगे और पीछे क्यों हम वहीं क्यूं न रह जाएं जहां हैं? क्योंकि आगे बहुत बार तो गए कहां पहुंचे?
अभी महेश योगी से मेरी बात हुई थी तो बहुत मजेदार बात हुई। उन्होंने कहा कि वहां जाने के लिए कुछ करना पड़ेगा। यहां से वहां जाने के लिए कुछ करना पड़ेगा। फ्रॉम हीयर टू देयर। कोई रास्ता खोजना पड़ेगा, कोई विधि बनानी पड़ेगी, कोई मार्ग बनाना पड़ेगा, जाना है यहां से वहां? तो मैंने उनसे कहा कि यहां से वहां जाना होता तो जरूर रास्ता बनाना पड़ता, जाना है यहां से और यहीं, फ्रॉम हियर टु हियर। अगर वहां से यहां आना होता तो भी कुछ रास्ता बना लेते, यहां से वहां जाना होता तो भी कोई रास्ता बना लेते, लेकिन एक ऐसा जाना भी जहां, यहां से यहां ही है। कहीं से कहीं नहीं यहां से यहीं। किसी को कहीं जाना नहीं है। एक बार हम इतना ही जान लें कि हम कहां हैं? और सब जाना बंद हो जाता है, आगे भी और पीछे भी। तो उस ठोकर की अपेक्षा ही मत करें, जो आगे ले जाए और पीछे ले जाए। उस ठोकर की प्रतीक्षा करें जो वहीं छोड़ जाए, जहां हम हैं। और वह ठोकर कोई भी नहीं दे सकता। हां, इसलिए मैं कह रहा हूं इसलिए वह ठोकर कोई भी नहीं दे सकता। वे ठोकर खुद ही खानी पड़ेगी। हां, वह खुद ही खानी पड़ेगी। वह कोई भी नहीं दे सकता। लेकिन हम क्यों जाएं आगे और क्यों जाएं पीछे?
कल्याण जी को मैं कह रहा था पीछे उस दिन। एक जेन फकीर अपने बगीचे में गड्ढा खोद रहा है। बगीचे में कुछ पौधे लगा रहा है। कोई पूछने आया है उससे। उससे कोई पूछता है कि मुझे शांत होना है, मैं क्या करूं? तो वह फकीर गड्ढा खोदता है और वह कहता है कि जो करते हो, वही करो। वह कहता है कि शायद आप काम में हैं इसलिए आप बेमन से कुछ जवाब दिए दे रहे हैं। तो फकीर कहता है कि अगर

समझ में न आया हो तो बैठ कर देखो कि मैं क्या कर रहा हूं। तो वह आदमी थोड़ी देर बैठ जाता है। वह गड्ढा खोद रहा है, खोद रहा है, खोद रहा है, पसीना बहा रहा है, धूप है, वह गड्ढा खोद रहा है। वह आदमी कहता कि काफी देर हो गई देखते- देखते आप गड्ढा खोद रहे हैं। लेकिन मैं कुछ और पूछने आया हूं, मैं पूछने आया हूं कि मैं शांत कैसे हो जाऊं? तो वह फकीर कहता है कि मैं सिर्फ गड्ढा ही खोद रहा हूं और बिल्कुल शांत हूं। अगर मैं गड्ढा भी खोदूं और कुछ और भी करूं तो अशांत हो जाऊंगा। मैं सिर्फ गड्ढा ही खोद रहा हूं। और अशांति का कोई उपाय नहीं है। मैं सिर्फ गड्ढा खोद रहा हूं और मैं कुछ नहीं कर रहा हूं। तो तुम भी जो करते हो वह करो। वह आदमी कहता है कि कुछ जीवनचर्या बता दें कि आप, ताकि जैसा आप कहें वैसा मैं करूं? तो वह फकीर कहता है कि जब मुझे नींद आती है तो मैं सो जाता हूं। अपनी तरफ से मैं कभी नहीं सोया। जब नींद आती है, सो जाता हूं। और जब नींद खुल जाती है, उठ आता हूं, अपनी तरफ से मैं कभी नहीं उठा। और जब भूख लगती है तो मैं मांगने चला जाता हूं, अपनी तरफ से मैंने कभी नहीं खाया। जब भूख नहीं लगती है तो मैं नहीं खाता। और सांस भीतर आती है तो भीतर आने देता हूं, बाहर जाती है तो बाहर जाने देता हूं। और मेरी कोई चर्या नहीं है और मैं बड़ा शांत हूं। और तुम्हें भी शांत होना है तो तुम भी ऐसा ही करो। वह आदमी कहता है कि ये तो हम भी सब करते हैं, जब सोते हैं, सो जाते हैं, जब खाते हैं खा लेते हैं। इसमें आप कौन सी नई बात कर रहे हैं? तो फिर उसने कहा कि तुम जाओ और जरा गौर से देखना कि जब तुम सोते हो तो तब तुम सोते ही हो, कि और भी बहुत कुछ करते हो। और गौर से देखना कि जब तुम खाते हो तो सिर्फ खाते ही हो या और भी बहुत कुछ भी करते हो। क्योंकि फकीर ने कहा कि मैंने तो ऐसा आदमी ही नहीं देखा जो सिर्फ खाता हो, तो सिर्फ खाता ही हो। आदमी खाता और कहीं और कुछ भी करता रहता है। और उस फकीर ने जाते वक्त कहा कि हमने इतना ही जाना कि हम जो हैं, वहीं हैं। जहां हैं, वहीं है। जैसे थे वहीं हैं। और हमें न कहीं जाना है, और न कहीं हमें पहुंचना है। मेरी दृष्टि में परम साधना का यही अर्थ है। और परम शांति का यही अर्थ है कि हम जहां हैं, वहीं रहें। उसमें हम पूरे राजी हो जाएं, न आगे जाएं, न पीछे जाएं। क्योंकि पीछे जाएंगे तो भी मतलब नहीं, आगे जाएंगे तो भी मतलब नहीं। क्योंकि पीछे और आगे हम जाएंगे, तो किससे पीछे जाएंगे, किससे आगे जाएंगे। अपनी ही जगह से हटते रहेंगे न। अपनी ही जगह से हटते रहेंगे।
घड़ी का पेंडुलम हैं बाएं से दाएं चला जाता है। दाएं से बाएं चला जाता है। फिर बाएं से दाएं न, चला जाता है, और एक बड़े मजे की बात, जब वह बाएं जाता है तब हमें दिखता है कि बाएं जा रहा है लेकिन बाएं जाते वक्त वह दाएं जाने की ताकत इकट्ठी कर रहा है। मोमेंट्म इकट्ठा कर रहा है उलटा जाने का। जा रहा है बाएं ताकत इकट्ठी कर रहा है दाएं जाने की। फिर वह दाएं जा रहा है तब हम समझते हैं कि वह दाएं जा रहा है, तब वह बाएं जाने की ताकत इकट्ठी कर रहा है। जब एक आदमी का जन्म हो रहा है तो वह मरने की ताकत इकट्ठी कर रहा है। और जब वह मर रहा है तब जन्म लेने की ताकत इकट्ठी कर रहा है। जो एक आदमी जवान हो रहा है तब वह बूढ़े होने की ताकत इकट्ठी कर रहा है। मगर यह हमें दिखाई नहींं पड़ता, हमें दिखाई नहीं पड़ता। हम जब भी इस कोने से उस कोने जाएंगे तो हम फिर इसी कोने पर वापस लौटने की ताकत इकट्ठी करते रहेंगे। इसलिए कहीं न जाएं, जहां है वहीं रह जाएं। और ऐसा सोचें कि पत्थर वहीं रह गया, जहां था। और वहीं है, वहीं है, और कहीं नहीं जाता। न आगे जाता, न पीछे जाता। फिर ठोकर की कोई जरूरत नहीं है। फिर कुछ भी करने की कोई जरूरत नहीं है। और अंततः ऐसी मनोस्थिति में छूट जाएं तो सब हो जाता है। फिर रह भी नहीं जाता करने को कुछ। मैं तो ध्यान इसी को कहता हूं ऐसी स्थिति को। असल में यह जो मैं कह रहा हूं, यह सतोरी का मतलब है। यह जो मैं कह रहा हूं, जिसमें बिकमिंग नहीं है, बिकमिंग नहीं है जिसमें, जिसमें कुछ होने की दौड़ नहीं है। जिसमें कुछ भी होने की? दौड़ नहीं है, जो है वह है। जिसमें जो है उसकी निंदा नहीं है, और जो नहीं है, उसकी आकांक्षा नहीं है। जो है है। ऐसी स्थिति का नाम सतोरी है। ऐसी स्थिति में जो एक्सप्लोजन आता है, उसका नाम सतोरी है।
समाधि से बहुत अलग बात है। समाधि शब्द से होना तो समाधि का भी यही अर्थ चाहिए। मैं तो यही अर्थ करता हूं, मैं तो समाधि का यही अर्थ करता हूं।

समाधि शब्द का मतलब होता हैः समाधान। उसका मतलब हैः अब कुछ न बचा करने को, अब कुछ न बचा पाने को, कुछ न बचा जाने को। समाधान का मतलब होता हैः अगर कुछ भी बचा करने को, कुछ भी बचा जाने को, तो समाधान नहीं। अभी असमाधान है, तो समाधि का मतलब है। और समाधि का दूसरा मतलब होता हैः मृत्यु। वह भी वही मतलब है। इसलिए हम कब्र को भी समाधि कहते हैं। उसका भी वही मतलब है।

मोर मैटर इन दि बुक नंबर दो प्लीज चेक एंड एड--जीवन एक पूजा

वही मतलब है कि जिंदा रहेंगे तो कहीं न कहीं जाएंगे ही आप। क्या जिंदा रहते हुए कोई आदमी ऐसा हो सकता है कि कहीं नहीं जा रहा है? एक अर्थ में मर ही गया, समाधिस्थ हो गया। समाधि का भी मतलब तो सतोरी है, लेकिन जैसा इस मुल्क में समाधि का मतलब चलता है, वह नहीं मतलब रह गया। यहां समाधि का मतलब है, जहां पहुंचना है; सतोरी का मतलब है जहां पहुंच गए। अब जहां कहीं नहीं पहुंचना है, कहीं नहीं जाना है।
आज सांझ को जो मैं कह रहा था वह क्वान है। उस पर ध्यान करिए जो असीम है। अब आप असीम पर ध्यान नहीं कर सकते, क्योंकि जब भी आप ध्यान करेंगे, तो सीमा आ जाएगी। आप असीम को सोच ही नहीं सकते, सोचेंगे तो सीमा आ जाएगी। कितना ही ब.ड़ा सोचेंगे फिर भी सीमा आ जाएगी, फिर भी घेरा आ जाएगा। आप अनादि और अनंत को सोच ही नहीं सकते। कितना ही सोचें, कितना ही सोचें, कभी तो अंत होगा। नहीं, कभी अंत नहीं होता, कभी शुरू नहीं होता, इसको सोच नहीं सकते हैं। कितना ही स्टेज को खींचते चले जाएं, खींचते चले जाएं। क्वान का मतलब है अब्सर्डिटी का बोध--किसी ऐसी चीज का बोध कि जो हो ही नहीं सकती। अगर आप उसको सोचते ही चले जाएं, सोचते ही चले जाएं, तो एक ही परिणाम होगा कि वह तो हो ही नहीं सकती, लेकिन सोचते-सोचते ठप हो जाएगा। दो ही चीजें सोची जा सकती हैं--या तो आप असीम को सोच लें, तो सोचना जीत जाता है, आप और भी बड़े विचारक होकर लौट आते हैं; लेकिन असीम को आप सोच ही नहीं सकते, और सोचना असीम को। यहां अब्सर्डिटी है; जैसे कि दो हाथ की ताली सुनी है बहुत।
किसी फकीर को कहते हैं कि जा, एक कोने में बैठ कर एक हाथ की ताली सुन।
वह अब्सर्ड है। वह फिर लौट कर आता है, अपने गुरु से कहता है कि पैर पर मारने से दो हाथ हो गए। वह कहता है दीवाल पर मारने से दो हाथ हो गए। तो खयाल रखना-- बिल्कुल एक ही हाथ की ताली बजे, उसे तू सुन। और वह एक हाथ की ताली सुनता है, सुनता है। वह तो सुनाई पड़ नहीं सकती और उसका माइंड फौरन दूसरी ताली प्रोवाइड कर देता है। कब तक यह सोचेगा कि दीवाल पर बजा ले, जमीन पर बजा ले! वह गुरु से आकर कहता है। गुरु कहता है कि भाग तू यहां से, तू एक हाथ की ताली सुन कर आ, दो हाथ की नहीं। उसे कमरे में बंद कर देता है। वह भूखा प्यासा बैठा है। वह सोचता है, एक हाथ की ताली... एक हाथ की ताली नहीं बजती! वह कैसे बजे? बज ही नहीं सकती। लेकिन सोचना है, फिर सोचना है।
आखिर वह क्षण आ जाता है कि सोचना एकदम से खो जाता है। वह क्यों खड़ा होगा, क्योंकि जब सोचना हो ही नहीं, तो क्या करिएगा? माइंड जो भी जवाब देता है, वह दो-चार दिन में, खुद ही समझ जाता है कि यह जवाब गड़बड़ है। गुरु फिर भगा देगा। तब वह घबरा जाता है। घबरा जाता है तो फिर आखिर में सोचना एकदम से ठप हो जाता है। कोई चीज एकदम से बंद हो जाती है। उस वक्त जो खुल जाता है, उसका नाम सतोरी है, क्योंकि फिर तो कुछ होगा। वह विचार की दुनिया गई, तो निर्विचार आ गया। निर्विचार में हम जहां रहे, वहीं रह गए। अब कहीं जाना नहीं रहा, कहीं पहुंचना नहीं रहा। सतोरी एक अर्थ में बहुत और बात है गहरे से गहरा मतलब तो समाधि का वही है; लेकिन जैसा इस मुल्क ने पकड़ा है, वह गड़बड़ हो गया है। इस मुल्क में समाधि भी बिकमिंग हो गई है।
एक साधु बैठा है, वह ध्यान कर रहा है, पूजा कर रहा है, पाठ कर रहा है, वह
कह रहा है मुझे परमात्मा को पाना है, मुझे मोक्ष को पाना है। वह बिकमिंग की बातें कर रहा है। एक आदमी कह रहा है, उसे धन पाना है; एक आदमी कहता है, भगवान पाना है। दोनों की बातें एक हैं, दिमाग का ट्रेंड एक है, कुछ पाना है। सतोरी वाला कह रहा है कि कुछ पाना नहीं है, जो है, है; न मोक्ष पाना है, न

भगवान पाना है, इसलिए वह बड़ी अदभुत बातें भी कह देता है। वह कहता है, संसार और परमात्मा एक ही है। ये दोनों एक ही बात है।
कई दफा ऐसा हुआ कि कोई आदमी आया है पूछने और उस फकीर ने उसको उठा कर खिड़की के बाहर पटक दिया है। जब वह नीचे गिरा है, तो उसने कहा, देख जाग! अब जो वह धम्म से नीचे गिरा, तो विचार तो खो गए। यह तो स्वीकृत है कि वह फकीर कुछ भी कर सकता है। वह आपके घर नहीं आया था, बल्कि आप उससे पूछने आए थे; वह कुछ भी कर सकता है। तब वह हंस रहा है खि.ड़की पर ख.ड़े होकर। वह कहता है, देख! कई दफा ऐसा हो जाता है कि उस चोट में वह एकदम से अवेयर (प्रबुद्ध)हो जाता है। अब वह सुनता है उसकी बात को, और सतोरी हो सकती है। कभी लक.ड़ी की चोट से भी हो सकती है, कभी चांटे से भी हो सकती है, लेकिन काम किए है उन्होंने।
मैं जो बात कह रहा हूं, वह समाधि की है जिसका मैं वही अर्थ करता हूं। मुझसे लोग पूछते हैं कि आप ध्यान कब करते हैं? मैंने कभी ध्यान किया ही नहीं। वे पूछते हैं कि आप कब करते हैं? मैं तो कभी करता ही नहीं और ध्यान को करना क्या है? बस, मैं जैसा हूं, वैसा हूं। जो चल रहा है; वह चल रहा है। न कुछ पाने को है, न जाने को है, न कुछ उपलब्ध करने को है, न कहीं मंजिल है, जो हूं, हूं। फिर ध्यान करने की बात ही नहीं रह जाती। फिर जो हम कर रहे हैं, वही ध्यान है।

प्रश्नः एक सवाल है, सतोरी की जब बात आती है। जब अर्जुन श्री कृष्ण से पूछता है कि आदमी के लक्षण क्या हैं?

तो बता दिया कृष्ण ने, वह नहीं जंचता आपको? मैं तो पूछता नहीं कृष्ण से कुछ, क्योंकि कृष्ण कैसे बता पाएंगे? अर्जुन ने बड़ी गलती की कि पूछा, और भारी गलती हो गई। गीता बहुत पीछे प.ड़ गई। हजारों लोगों की गलती अर्जुन ने की और गीता हजारों को सता रही है। नहीं, मैं तो नहीं पूछता।

प्रश्नः आपने कहा कि पत्थर वहीं पड़ा रहे, आगे क्यों जाए या पीछे क्यों आए। क्या एक जगह खड़े रहना भी क्रांति है?

असल में सवाल यह है कि मैं नहीं कह रहा हूं कि वह एक जगह खड़ा रहेगा। मैं यह कह रहा हूं कि अगर वह अपने स्वभाव में रह जाए। प.ड़े हुए का मतलब यह है कि वह जो है, वह स्वभाव में होना है। जो है, वही है। यानी पत्थर आगे कब जाता है? जब पत्थर फूल बनने की कोशिश करता है तो आगे जाता है, और जब पत्थर धूल बनने की कोशिश करता है तो पीछे जाता है। आगे जाता है, इस आशा में कि फूल बन जाऊं, पीछे चला जाता है तो इस दुख में प.ड़ जाता है कि धूल न बन जाऊं। मैं कह रहा हूं कि वहीं रहने का मतलब यह है कि पत्थर पत्थर है, न उसको फूल बनना है, न धूल बनना है, तब पत्थर की भी अपनी एक फ्लावरिंग है। जेल में पत्थर के भी बगीचे बना लिए हैं, उसकी अपनी फ्लॉवरिंग है। जब एक पत्थर अपनी पूरी शान में पड़ा होता है तो किस फूल से कम होता है?
किसी पत्थर को हम छूकर देखते नहीं हाथ में उठा कर, न हम उसे प्रेम करते हैं, क्योंकि हमारी पूरी कल्चर बाउंड है, हमारा सब कुछ बाउंड है। न कभी हम पत्थर को उठाकर हाथ में रखते हैं, न कभी हम छूते हैं, न कभी उसे आंखों से लगाते हैं, न उसके कभी स्पर्श लेते हैं। नहीं तो पत्थर भी ऐसी खबरें देगा, जो फूल ने कभी नहीं दी। मेरा यह कहना है कि जो, जो है, अगर वह, वह रह जाए, तो ऐसा नहीं है कि प्रगति नहीं होगी, तब भी प्रगति होगी, लेकिन वह प्रगति दूसरे की तुलना में, दूसरे की दौड़ में नहीं होगी, वह जस्ट आउट ग्रोथ होगी, वह उसके भीतर से आएगी, फैलेगी, फैलेगी। ऐसी होगी, जैसे एक पौधा बड़ा हो रहा है, एक दूसरा पौधा बड़ा हो रहा है। न ही यह पौधा बगल वाले पौधे की फिकर करता है कि तुम ज्यादा बड़े हो गए हो तो मैं भी ज्यादा बड़ा हो जाऊं। एक अपनी जगह बड़ा हो रहा है, दूसरा अपनी जगह बड़ा हो रहा है। लेकिन आदमी में बड़ी गड़बड़ है। वह बगल वाले को देख रहा है कि तुम बड़े हो गए हो, मैं भी थोड़ा बड़ा हो जाऊं। इस सब गड़बड़ में वह जो हो सकता था, वही नहीं हो पा रहा है। मजा यह है कि वह वही

हो सकता था, जो वह हो सकता था। वह उसकी अपनी आंतरिक नियति थी, वह जो हो सकता था। मां-बाप, बच्चे को बचपन से, वह सारा का सारा जहर दे रहे हैं।

प्रश्नः आपस में काम्पिटीशन से अच्छा हो सकता है?

इससे कभी अच्छा नहीं हो सकता। तीस बच्चे हैं, एक बच्चा पहला आएगा। जो पहला आएगा, वह पहला होने की वजह से, पागल हो जाएगा। अब जिंदगी भर पहला होने की चेष्टा में लगे रहना पड़ेगा। जिस दिन पहला नहीं हुआ, उसी दिन मुसीबत में पड़ जाएगा, सुसाइड(आत्महत्या)करेगा और यह करेगा, वह करेगा, क्योंकि वह पहला नहीं आया। वह सदा के लिए दीन हो गया! जब दो चार बार पहला आ नहीं पाएगा, तो सदा के लिए हार गया। अब वह जिंदगी भर हारेगा, सब चीजों में हारेगा।
वह अकेले ही कोशिश नहीं कर रहा है, सारी दुनिया कोशिश कर रही है और हम
सब की कोशिशें हैं। एक दूसरों की कोशिशों को काट रहे हैं, क्योंकि काम्पिटेटिव (प्रतिस्पर्द्धी)है। मैं यहां बैठा हूं, तुम वहां बैठे हो, तो बड़ी शांति से बात चल रही है। अभी हम इस कमरे में तय कर लें कि सबको यहां बैठना है, तो फिर भी बात चल सकती है, लेकिन वह किस तरह की बात होगी? यहां धक्का-मुक्की शुरू हो जाएगी, क्योंकि वह कोई उसकी टांग खींच रहा है, कोई उसका हाथ खींच रहा है। जो अपनी जगह बैठा है, वह अपनी जगह नहीं बैठा रह जाएगा, क्योंकि उसको यहां होना है। यह कमरा अभी पागल हो जाएगा। हमको दिखाई नहीं पड़ रहा है कि एंबीशन (महत्वकांक्षा)ने और काम्पिटीशन (प्रतिस्पर्द्धिता)ने सारी दुनिया को पागल कर दिया है। अगर मां-बाप बच्चे को प्रेम करते हैं, तो वे कहेंगे कि पहले-दूसरे का सवाल नहीं, तू जो है, सो है। अच्छी शिक्षा होगी, जो तीस लड़के पढ़ेंगे, तीस लड़के पास होंगे, फेल होंगे, लेकिन नंबर एक, नंबर दो कोई भी न होगा। कोई जरूरत नहीं, साल-भर पढ़ा दिया, वे दूसरी कक्षा में चले गए हैं। सर्टिफिकेट उनके पास यही है कि उन्होंने साल भर पढ़ा है। अगर नंबरों का पता है, तो उनके शिक्षकों को पता होना चाहिए। न बच्चों को पता होना चाहिए, न किसी को पता होना चाहिए। नंबरों का पता सिर्फ इसलिए होना चाहिए कि अगले साल जिस बच्चे को कम नंबर मिले, उसके साथ थोड़ी ज्यादा मेहनत की जा सकती है और क्या मतलब है? मेरे हिसाब में तो शिक्षा की पूरी दृष्टि दूसरी है--नॉन-काम्पिटेटिव (प्रतिस्पर्द्धामुक्त)और नॉन-एंबीशस (महत्वकांक्षा-मुक्त)। लेकिन हम समझ रहे हैं, बहुत अच्छा कर रहे हैं। हमारी अपनी महत्वकांक्षाएं रह जाती हैं अधूरी। बच्चों की छाती पर चढ़कर उनको पूरी कर रहे हैं।

प्रश्नः अगर वे आगे नहीं बढ़ेंगे तो?

उत्तरः बड़ा मजा यह है कि अगर हम ध्यान करेंगे, इस दुनिया में जिन साइंटिस्टों ने कुछ दिया है, उनको किसी से आगे बढ़ने का कुछ खयाल ही नहीं था। उनकी अपनी खुशी और अपना आनंद है। आइंस्टीन, दुनिया आगे बढ़ेगी या पीछे हटेगी, इस हिसाब से नहीं कर रहा था काम। उस आनंद की खोज से दुनिया आगे जा रही है, पीछे जा रही है, यह दुनिया जाने!

नानक दुखिया सब संसार
दूसरा प्रवचन

जीवन की कला

मेरे प्रिय आत्मन्!
जीवन की कला क्या है? इस संबंध में कुछ भी कहना एक अर्थ में बहुत आश्चर्यजनक मालूम पड़ सकता है। क्योंकि हम सभी जीते हैं। लेकिन अकेले जी लेना, जीवन को पा लेना नहीं है। जीवन कुछ और ही है, मात्र जी लेने से है। और इस जीवन का हमें कोई भी पता कभी नहीं चल पाता, यदि हम उसे खोजने ही न निकल जाएं, जीवित हम हैं, लेकिन जीने की व्यस्तता में जीवन को पा लेने से चूक जाते हैं। उसका स्पर्श भी नहीं हो पाता, उसका पता ही नहीं चल पाता। अक्सर तो यही होता है, जब मृत्यु द्वार पर खड़े होकर दस्तक देने लगती है, तभी हमें पहली बार पता चलता है कि जीवन था और गया।
मैंने तो सुना है कि कुछ लोग मर कर ही जान पाते हैं कि जीते थे, जीवित थे। जब जीवन होता है, तब हमारा ध्यान और हजार चीजों पर जाता है, एक हजार एक चीजों पर जाता है, सिर्फ जीवन पर नहीं जाता। जन्म के बाद हम स्वीकार ही कर लेते हैं कि जीवन मिल गया है, इससे बड़ी और कोई भूल नहीं हो सकती। जैसे कोई बीज समझ ले कि वह वृक्ष है, ऐसे ही हम जन्म पा लेने को ही जीवन समझ कर भूल में पड़ जाते हैं। बीज वृक्ष हो सकता है, है नहीं। और यह जरूरी नहीं है कि वृक्ष हो ही जाए, बीज बीज रह कर भी मर जा सकता है। वृक्ष होना अनिवार्यता नहीं है, सिर्फ संभावना है। लेकिन अगर बीज समझ ले कि मैं वृक्ष हूं, तो फिर बीज वृक्ष होने की सारी चेष्टा, सारा प्रयास, सारी यात्रा छोड़ देगा। जरूरत क्या है? जो मैं हूं उसे पाने का सवाल नहीं है। जो भी हम स्वयं को समझ लेते हैं, उसे पाने की यात्रा बंद हो जाती है। और जन्म के साथ बड़े से बड़ा इलुजन और भ्रम जो आदमी पैदा कर लेता है, वह यह है कि जीवन मिल गया।
जन्म जीवन नहीं है; जन्म केवल संभावना है। जीवन मिल भी सकता है, खो भी सकता है। जन्म दोनों के लिए द्वार बन सकता है--जीवन पाने के लिए भी, जीवन खोने के लिए भी। जन्म अपने में सिर्फ संभावना, पॉसिबिलिटी है। जन्म कुछ भी नहीं है, सिर्फ एक अवसर, एक ऑपरच्युनिटी है। हम खो भी सकते हैं, हम पा भी सकते हैं। अधिक लोग खो देते हैं और खोने का जो बुनियादी कारण है वह यह कि वे जन्म को ही जीवन समझ लेते हैं। पैदा हो गए अर्थात जीवन मिल गया।
पैदा होते से केवल संभावना मिलती है, जीवन नहीं। जीवन निर्मित करना होता है। इसलिए पहली बात तो आपसे यह कहना चाहता हूं कि सिर्फ होने को, मात्र एक्झिस्टेंस को जीवन मत समझ लेना। हम हैं, वह सच है, लेकिन यह होना किसी और बड़े होने के लिए द्वार बन सकता है। एक जन्म है, जो मां-बाप से मिलता है, और एक जन्म है जो हमे स्वयं अपने को देना पड़ता है। मां-बाप से मिला जन्म, उस दूसरे जन्म के लिए द्वार बने, जो हम अपने को देंगे, तब तो ठीक, अन्यथा श्रम व्यर्थ हो जाता है। दौड़ते हैं बहुत पहुंचते कहीं भी नहीं। श्रम भी बहुत करते हैं, फल कुछ भी नहीं आता है। बीज, बीज रहके ही सड़ जाता है। हां, कभी-कभी कोई बीज वृक्ष बन जाता है। कभी-कभी किसी बीज में फूल आते हैं। कभी किसी बीज में सुगंध फैलती है। कभी कोई बीज वृक्ष बन कर आकाश में दूर तक बांहों को फैला देता है। सूरज की किरणों को चूमता है, चांद के साथ नाचता है, पक्षियों के गीतों के साथ आंदोलित होता है। कभी कोई वृक्ष आकाश से होड़ लेता है। अधिक बीज, बीज ही रह के मर जाते हैं।
मनुष्य के बीज, जब कभी ऐसे फूल, वृक्ष ऐसे आकाश के फैलाव को उपलब्ध होते हैं, तो हम, जो सिर्फ जीते हैं, उनकी पूजा में लग जाते हैं। एक बीज अगर दूसरे खिले हुए, फूलों से भरे हुए वृक्ष की पूजा भी करे तो क्या होगा? एक बीज अगर सम्मान भी करे, उस वृक्ष का, जिसमें फल आ गए तो क्या होगा? और बाकी बीज मिलके किसी मरे हुए, गले हुए, वृक्ष का मंदिर बना लें तो क्या होगा? आदमी यही करता रहा है। बुद्ध को, महावीर को, क्राइस्ट को, कृष्ण को सम्मान, पूजा, आदर, मंदिर। लेकिन ये स्मरण नहीं हमें कि यह सिर्फ वही बीज हैं, जो हम भी हैं। लेकिन वे पूर्ण अवसर का उपयोग करके जीवन बन गए हैं। और हम बीज की तरह ही नष्ट होने की तैयारी कर रहे हैं। और अगर हम कुछ न करें तो नष्ट तो हो

ही जाएंगे। प्रतीक्षा बहुत देर नहीं चलेगी। बीज अगर वृक्ष न बना तो सड़ेगा। बीज अगर वृक्ष न बनने की यात्रा पर निकला, तो मृत्यु की यात्रा पर चलेगा। जो आदमी जन्म को अवसर नहीं बनाता, जीवन के सृजन का, वह आदमी जन्म को अवसर बनाता है, केवल मृत्यु की प्रतीक्षा का।
दो ही तरह के लोग हैं। एक वे जो अपने जन्म को जीवन बनाने में सक्रिय हो जाते हैं। एक वे जो केवल मृत्यु की प्रतीक्षा करते रहते हैं। हम सब करीब-करीब मृत्यु की प्रतीक्षा करते हैं। रोज-रोज मौत करीब आती चली जाती है, और रोज-रोज मौत के करीब आने को हम जीवन कहते हैं। किस गणित से कहते हैं, समझना मुश्किल है? और रोज हम मरते हैं। रोज मरने के करीब पहुंचते हैं। एक वर्ष गुजरता है और हम जन्म-दिन मनाते हैं। मुश्किल है कहना कि वह जन्म का दिन मनाना चाहिए या मृत्यु का दिन? उसे बर्थडे कहना चाहिए या डेथडे? सोचेंगे तो वह मृत्यु का दिन मालूम पड़ेगा, क्योंकि एक वर्ष मौत और करीब आ गई। और जन्म एक वर्ष और दूर छूट गया। एक वर्ष हम और मर चुके। एक वर्ष मरने की प्रक्रिया और हो गई।
ऐसा नहीं है कि एक दिन अचानक मौत कहीं से आ जाती है। मौत कोई बाहरी घटना नहीं है, कोई फॉरेन, कोई विदेशी घटना नहीं है। कि आप चले जा रहे हैं और मौत आ गई। मौत आपके भीतर विकसित होती है। जन्म के दिन से ही विकसित होने लगती है। मौत भी एक ग्रोथ है। मौत भी एक विकास है। रोज हम मरने की तैयारी करते चलते हैं। रोज कुछ हमारे भीतर मरने लगता है। रोज हम बूढ़े होने लगते हैं। और रोज मरना होता चला जाता है। एक दिन यह प्रक्रिया पूरी हो जाती है, जिस दिन पूरी हो जाती है, यह प्रक्रिया, हम कहते हैं, मौत आ गई। मौत आ नहीं गई एक विकास था, जो पूर्णता को उपलब्ध हो गया। और इसे ही हम जीवन कहते रह जाएं? यही जीवन है? यह रोज मरते जाना, यह ग्रेचुअल डेथ, यह धीरे-धीरे मरना। सत्तर साल लगते हैं एक आदमी को मरने में, एकाध मिनट नहीं लगता। अस्सी साल लगते हैं। वैज्ञानिक और मेहनत करेंगे तो सौ साल लगने लगेंगे। मरने में कितनी देर लगेगी? यह विज्ञान थोड़ा बड़ा कर लेगा। लेकिन ये मरने की प्रक्रिया है, यह स्मरण में आना चाहिए। जन्म के बाद या तो हम जीवन की तलाश करेंगे और या फिर मरने की प्रक्रिया जारी रहेगी। हम जीवन की तलाश करेंगे तो मरने की प्रक्रिया बंद नहीं हो जाएगी। लेकिन हमारे भीतर दो यात्राएं शुरू हो जाएंगी। एक जो मर सकता है, वह मरने की यात्रा पर निकल जाएगा, और एक जो परम जीवन को उपलब्ध हो सकता है वह परम जीवन की यात्रा पर चल पड़ेगा। जिस व्यक्ति के भीतर दो यात्राएं चलने लगें, एक मरने की चलेगी, उसे हमें चलाना नहीं पड़ता, वह अपने से चलती है। और एक जिसे हमें चलाना पड़ता है। मरने की प्रक्रिया चलेगी, जो हमारे भीतर मरने वाला है, वह धीरे-धीरे मरता चला जाएगा। इसी बीच, इस अवसर को हम खो न दें। और उसे जान लें, जो नहीं मरने वाला है। इस अवसर में जब कि मरने वाला मर रहा है, हम उसकी झलक पा लें, उसे पहचान लें, जो नहीं मरने वाला है, तो हमारे जीवन का अनुभव शुरू होगा। साधारणतः हम मरते हैं, जीते नहीं। क्योंकि जीवन का हमें कोई अनुभव ही नहीं होता। इस जीवन का अनुभव कैसे करें? उसकी कला के क्या चरण होंगे? पहला चरण तो यह होगा कि जन्म को जीवन मत मानना। हम सब माने हुए बैठे हैं, इसलिए मैं जोर से कहना चाहता हूं जन्म को जीवन मत मानना। स्मरण रखना की हम सब मर रहे हैं। जी नहीं रहे हैं, यह स्मरण बना रहे और छिप जाए भीतर प्राणों में, तो शायद एक नई यात्रा की तड़प पैदा हो और वह यात्रा शुरू हो जाए। धार्मिक आदमी वही है, जिसने मरने की इस प्रक्रिया को पहचान लिया है।
बुद्ध निकले हैं अपने घर से एक उद्यान में, एक यूथ फेस्टिवल में, एक युवक महोत्सव में जाने के लिए। बुद्ध का जन्म हुआ जिस दिन उस दिन एक ज्योतिषी ने कहा कि यह लड़का या तो परम चक्रवर्ती सम्राट होगा या संन्यासी हो जाएगा। पिता मुश्किल में पड़ गए। कोई पिता बेटे को संन्यासी हुआ नहीं देखना चाहता। सभी बाप बेटे को चक्रवर्ती हुआ देखना चाहते हैं। क्योंकि बाप का अहंकार चक्रवर्ती नहीं हो पाया, कम से कम बेटे से ही तृप्ति पा लें। बेटे के अहंकार से ही अपने को भर लें। सभी बाप बेटों के भीतर अपने अहंकार की तृप्ति करने की चेष्टा में संलग्न होते हैं। और इसीलिए कोई बाप बेटे से

कभी तृप्त नहीं हो पाता। क्योंकि अहंकार बहुत बड़ा है। सब बेटे छोटे पड़ जाते हैं, वह तृप्ति हो नहीं पाती।
बाप घबड़ा गया है, पिता घबड़ा गए हैं। उन्होंने कहाः संन्यासी हो जाएगा? कैसे रोकें इसे? संन्यासी तो नहीं होने देना है। कैसे रोकें इसे? दूसरे का बेटा संन्यासी हो जाए, तो हम उसके चरण छू के नमस्कार कर आते हैं। हमारा बेटा संन्यासी होने लगे तब असली मुश्किल शुरू होती है। बुद्ध के पिता भी बहुत संन्यासियों के चरण-स्पर्श करने गए थे। आज पहली दफा पता चला, कैसे रोकें? चिंता में पड़ गए हैं। बुद्धिमानों से पूछा है, क्या करें? बुद्धिमानों ने कहा कि एक काम करें, अपने इस बेटे को मृत्यु से परिचित न होने दें बस, नहीं तो ये संन्यासी हो जाएगा। बाप ने उपाय किए। बेटे को मृत्यु से अपरिचित रखने के। ऐसे माहौल बनाए कि जहां कोई बूढ़ा आदमी प्रवेश न कर सके। क्योंकि बूढ़े आदमी में मृत्यु की झलक आनी शुरू होगी। मौत की छाया दिखाई पड़ने लगी, उसकी आंखों से, उसके हाथों से, उसके डगमगाने से, मौत ने खबर दे दी कि आती हूं। हिला दिया है, मौत ने उसे, टिकेगा थोड़ी देर तूफान और थोड़ा सहेगा, जड़ें हिल गई हैं, कंपेंगी कुछ दिन, गिरेगा अगली वर्षा में सही, इस वर्षा में नहीं। बूढ़े का आना बंद कर दिया। फूल उस बगिया में जहां बुद्ध रहते, मुरझा जाते, तो मालियों को खबर कर दी कि रात में ही अलग कर देना। मुरझाया फूल दिखाई न पड़ जाए। क्योंकि मुरझाया फूल देख कर कहीं बुद्ध पूछने न लगें कि फूल मुरझाते हैं, कहीं आदमी तो न मुरझा जाएगा? सुंदर से सुंदर स्त्रियों के बीच घेर दिया है बुद्ध को। सारी सुख-सुविधाओं में खड़ा कर दिया है। लेकिन क्या यह संभव है? कि जहां सब मरता हो, वहां मरने के अनुभव से किसी को वंचित रखा जा सके। बल्कि अगर मुझसे बुद्ध के पिता ने सलाह ली होती तो मैं ये कहता कि तुम्हारा ये इंतजाम इस लड़के को संन्यासी बना ही देगा। बल्कि जैसे यह पैदा हुआ है, इसको मरघट में रहने दो, ये म्यून हो जाए, देखने दो बूढ़ों को, सड़े हुए फूलों को, गिरते हुए पत्तों को, सूखे-उड़ते पत्तों को, मुर्दो को, सबको देखने दो। देखके आदी हो जाएगा, तो प्रश्न नहीं उठाएगा। गलती हो गई बुद्ध के पिता से। सब तरफ से व्यवस्था कर ली रोकने की जिंदगी ऐसी चीज नहीं जो उसे हम कटघरों में बंद कर दें। आज नहीं कल, कल नहीं परसों, बुद्ध जवान हो गए, तब तक उन्हें पता नहीं था कि कोई वृद्ध हो जाता है। क्योंकि उन्हें घर से निकलने नहीं दिया गया था। लेकिन जवान हो गए। एक युवक महोत्सव हो रहा है, बुद्ध को उसका उदघाटन करने जाना है। वे रथ पर सवार होकर निकले, रास्तों पर बहुत व्यवस्था की गई थी कि कोई बूढ़ा, कोई मुर्दा, कोई बीमार न दिखाई पड़े। लेकिन क्या करोगे? सब रास्ते बूढ़ों से मुर्दों से, बीमारों से भरे हैं। एक बूढ़ा बुद्ध को दिखाई पड़ ही गया है। कितना ही इंतजाम करें मौत कहीं न कहीं से झांकेगी ही, सब तरफ मौजूद है। बुद्ध ने अपने सारथी से पूछा कि इस आदमी को क्या हो गया? बुद्ध ने कभी न पूछा होता, हम कभी नहीं पूछते, क्योंकि हम आदी हैं। हम बचपन से ही देखते हैं, यह हो रहा है, यह हो रहा है। बुद्ध ने पूछा, इस आदमी को क्या हो गया है? सारथी ने कहा कि यह आदमी बूढ़ा हो गया है। बुद्ध ने कहाः क्या मैं भी बूढ़ा हो जाऊंगा?
सारथी ने कहाः मैं कैसे कहूं? और यह शोभा योग्य नहीं कि मैं कहूं कि आप बूढ़े हो जाएंगे, लेकिन इतना निवेदन करता हूं कि अपवाद कोई भी नहीं है। बूढ़ा सभी को होना पड़ता है।
बुद्ध ने कहा कि रथ वापस लौटा दो, क्योंकि अगर बूढ़ा होना ही पड़ता है,
तो बूढ़ा हो ही गए। देर-अबेर की बात है। रथ वापस कर लो। फिर युवक महोत्सव में भाग लेने मैं कैसे जाऊं? बूढ़ा हो ही गया।
सारथी ने कहाः नहीं, यह ठीक नहीं है, उचित नहीं है। पिता वहां राह देखते हैं। तो रथ आगे ले गए, फिर एक मुर्दा मिल गया, कोई अरथी लिए चला जा रहा है। बुद्ध ने पूछा, यह क्या हुआ? सारथी ने कहाः यह उसके बाद का कदम है। वह जो बूढ़ा हो गया था, अब कोई बूढ़े के बाद आखिरी जो कदम उठाता है, वह इस आदमी ने उठा लिया है। यह आदमी मर गया है।
बुद्ध ने कहाः क्या मैं भी मर जाऊंगा?

सारथी ने कहाः अपने मुंह से मैं नहीं कह सकता इस तरह की बातें। अपशगुनपूर्ण हैं यह, अशुभ हैं, लेकिन अपवाद कोई भी नहीं।
बुद्ध ने कहाः फिर वापस लौटो, जब मर ही जाना है, जब मर ही जाना है, आज या
कल या परसों, सिर्फ समय की बात है, तो जीवन ने सारा अर्थ खो दिया। हम उसकी अब तलाश करें जो न मरता हो। ऐसा भी कुछ है जो नहीं मरता है? बुद्ध वापस लौट आए हैं।
लेकिन हमारे रथ कभी वापस नहीं लौटते। और हम अपने सारथी से कभी नहीं पूछते कि आदमी बूढ़ा हो गया, मुझे तो बूढ़ा नहीं होना पड़ेगा? सारथी हमारे पास भी है। हम अपने सारथी से कभी नहीं पूछते, यह आदमी मर गया है। मुझे भी मरना पड़ेगा? बल्कि हम तो अपने सारथी को समझाए चले जाते हैं कि सब मरते होंगे, मेरे मरने का कोई आसार नहीं है। सब मरते होंगे, यह दूसरों के साथ घटना घटती है। मौत जो है वह सदा दूसरों के साथ घटती है। मैं अपने को सदा बचा लेता हूं, वह मेरे साथ कभी नहीं घटती। सबके साथ घटती है, मैं चूक जाता हूं, मैं अपवाद हूं। प्रत्येक के भीतर ऐसा भाव है, जब वह किसी को मरते देखता है, तो कहता है बेचारा। दूसरे पर बड़ी दया करता है। और उसे स्मरण नहीं कि मौत हंसती होगी, कि जो आज दूसरे पर दया कर रहा है, कल कुछ लोगों को उसको भी बेचारा कहना पड़ेगा। दूसरे पर दया करके अपने पर स्मरण करने से हम चूक जाते हैं। कोई मरता है तो हम कहते हैं, बेचारे के छोटे बच्चे, पत्नी, बड़ा बुरा हुआ! लेकिन कभी ऐसा स्मरण नहीं आता कि यह मौत का तीर जो उसकी तरफ उठ गया है यह मेरी तरफ भी तैयारी कर रहा होगा, धनुष पर रखा जा चुका होगा, प्रत्यंचा खिंचती होगी, तीर चलता होगा, चल पड़ा भी होगा। आने में भी वक्त लग जाता है न, तीरों के पहुंचने में भी समय लग जाता है, यात्रा में भी, वक्त तो लगता है। और सच तो यह है कि तीर उसी दिन चल पड़ता है, जिस दिन हम पैदा होते हैं। शायद पैदा होने के क्षण में ही निर्णित है भीतर कहीं कि जो मैकेनिज्म, यह जो यंत्र हमें मिला है, कितनी देर चल पड़ेगा। जैसे हम घड़ी खरीद कर ले आते हैं, तो लिख कर दे देते हैं कि दस साल की गारंटी है। बारह साल भी चल सकती है अगर बिल्कुल मत चलाओ। या पटक दो तो अभी भी टूट सकती है, वे दूसरी बातें हैं। वे घटनाएं, दुर्घटनाएं हैं, लेकिन ऐसे घड़ी दस वर्ष चलेगी, यह मशीन बनाने वाला कहता है। दस वर्ष का इंतजाम दिखता है। दस वर्ष चल जाएगी, कम भेद दस वर्ष चल जाएगी। जन्म लेते वक्त वह जो क्रोमोसोम, वह जो बीजाणु हमें निर्मित करता है, उसके भीतर की घड़ी सत्तर वर्ष, अस्सी वर्ष, विज्ञान थोड़ी सुविधाएं बना ले, घड़ी कम चलाई जाए, श्रम कम हो, विश्राम ज्यादा हो जाए, तो थोड़ा लंबा हो सकता है। या गरीबी टूट पड़े, अकाल हो जाए, भारत में जन्म मिल जाए तो जल्दी भी खत्म हो सकता है। लेकिन वे दुर्घटनाएं हैं उनको हिसाब में लेने की जरूरत नहीं है, लेकिन जन्म के क्षण में बीज की गारंटी है, कुछ भीतर, और अब वैज्ञानिक कहते हैं, अब कुछ भीतरी प्लानिंग है क्रोमोसोम में कि वह कितने दिन चलेगा?
दो जुड़वां बच्चे पैदा होते हैं। दो तरह के जुड़वां बच्चे पैदा होते हैं। एक तो वे जो एक ही अंडे में बड़े होते हैं और एक वे जो दो अंडों मे बड़े होते हैं। दो अंडों में जो बड़े होते हैं उनको जुड़वां कहना बहुत ठीक नहीं है। वे दो ही बच्चे हैं, एक साथ पैदा होते हैं सिर्फ। जुड़वां नहीं हैं। सहयोगी हैं, को-ऑपरेटिव हैं। सिर्फ साथ पैदा हुए हैं। को-एक्झिस्टेंस हुआ है उनका, को-बर्थ हुई है, एक साथ जन्मे हैं, जुड़वां नहीं हैं। एक अंडे में जो बच्चे दो एक साथ एक ही अंडे में पैदा होते हैं, वे वस्तुतः जुड़वां हैं। इन जुड़वां बच्चों की बाबत जो अध्ययन हुए हैं, वे हैरान करने वाले हैं। एक बच्चे को हिंदुस्तान में पालो और एक को चीन में पालो। करीब-करीब जिंदगी में ये एक सी बीमारी से पीड़ित होंगे। और करीब-करीब बीमारियों का वक्त भी समान होगा। अगर ये यहां टी बी से बीमार पड़ जाए, पंद्रह वर्ष की उम्र में, तो वह जो चीन में जो बच्चा है, जिसे इसकी कोई भी खबर नहीं, वह भी पंद्रह वर्ष की उम्र में टी बी से बीमार पड़ने की संभावनाओं से भरा है, वह बीमार पड़ेगा। दिन, दो दिन की भूल-चूक होगी वह बीमार पड़ जाएगा। और सबसे आश्चर्य की बात यह है कि दोनों बच्चे कहीं भी पाले जाएं, इनके मरने में तीन महीने से ज्यादा का फासला कभी भी नहीं होगा! कम से कम तीन दिन का फासला होता है। ज्यादा से

ज्यादा तीन महीने का। इससे ख्याल आता है कि जन्म के साथ गारंटी इनब्रेट, वे जो क्रोमोसोम हैं, उसमें अंदर से भरी हुई प्लानिंग उसमें कुछ योजना लेके आदमी पैदा होता है। वह घड़ी तो चल रही है, तीर चल चुका है, जन्म के साथ मरने का। मरना होगा। उस संबंध में आश्वस्त हो सकते हैं। उसमें कोई शक करने की अभी तो जरूरत नहीं है।
एक बात सुनिश्चित है, और कुछ भी सुनिश्चित जीवन में नहीं, वह मृत्यु है। लेकिन जो सबसे ज्यादा सरटेन और सुनिश्चित है, उसे हम सबसे ज्यादा दूर खड़ा कर देते हैं। उसे हम सोचते ही नहीं। उसे हम विचारते ही नहीं। हम शायद उससे बचते हैं, सोचने-विचारने से। क्योंकि उसके सोच-विचार से चिंता पैदा होती है, और साधारण चिंता पैदा नहीं होती। एक तो चिंता है जो रोटी कमाने, न कमा पाएं तो पैदा हो जाती है। एक चिंता है जिस पत्नी को चाहें, वह न मिल पाए तो हो जाती है। एक चिंता है जैसे हम मकान बनना चाहें तो पैदा हो जाती है। एक चिंता है, जो हम जीते हैं उसके बाहर के संबंधों से जुड़ी है। एक और एन.जायटी है, एक और चिंता है, जिसको धार्मिक चिंता कहें रिलिजियस एन.जायटी कहें, वह इस बात से पैदा होती है कि मौत आ रही है। अगर दुनिया धार्मिक होगी तो मरघट हम गांव के बाहर न बनाएंगे, बीच में गांव के बनाएंगे। ताकि बच्चा- बच्चा जाने की यह मौत आ रही है। रोज आ रही है। अभी तो बाहर से अरथी निकलती है, तो बेटे को घर भीतर बुला लेती है मां कि अंदर आजा दरवाजा बंद कर, कोई अरथी निकलती है। अगर मां समझदार हो तो जब अरथी निकलती हो तो बेटे को बाहर ले आए और कहे कि अरथी निकलती है और तेरी भी कहीं न कहीं तैयार होती होगी, आने में देर लग सकती है। मौत का तीर तो चल चुका है, अगर हम इस एक ही डाइमेंशन में जी रहे हैं, एक ही आयाम में, जिस आयाम में, जिस रास्ते पर मौत चली आ रही है, अगर हम उसी में जी रहे हैं तो हमें जीवन का कभी पता नहीं चलेगा। बहुत बार हम इस तरह जीते हैं और मरते हैं और जीवन का पता नहीं चल पाता है। क्या एक और डायमेंशन भी है? क्या एक और यात्रा पथ भी है? क्या कोई एक और आयाम भी है, जहां हमारी चेतना यात्रा करे? जहां मृत्यु न हो? क्योंकि जीवन वहीं हो सकता है, जहां मृत्यु न हो? जहां मृत्यु हो वहां जीवन का सिर्फ भ्रम हो सकता है। जहां मृत्यु है वहां सिर्फ भ्रम हो सकता है।
जैसे पानी में किसी वृक्ष की छाया बनती हो। जरा पानी कंप जाता है, छाया खो जाती है। खो जाना बताता है कि छाया रही होगी। जरा कंपन, और सब खो जाता है। ऐसा लगता है कि जीवन कहीं किसी और तल पर है और इस शरीर में केवल प्रतिबिंब बन रहा है। शरीर जरा चूका कि प्रतिबिंब मिट जाता है। जीवन कहीं और है, यहां सिर्फ प्रतिबिंब बन रहा है। जरा चूक गए, जरा मीडियम, जिसमें प्रतिबिंब बन रहा है, वह कंप गया, असमर्थ हो गया, टूट गया, यंत्र बिखर गया और प्रतिबिंब फौरन खो जाता है।
जैसे एक चांद, एक झील में झलक रहा हो। कई बार तो ऊपर के चांद से भी झील
का चांद सुंदर लगता है। असल में प्रतिबिंब बड़े सुंदर लगते हैं। जितना झूठ हो, उतना सुंदर लगता है। जितना असत्य हो, उतना सुंदर लगता है। इसलिए तो कविताएं इतनी सुंदर लगती हैं। इसलिए तो सपने इतने प्यारे और मीठे लगते हैं। और इसलिए कुछ लोग तो आंख बंद करके सपने देखने में ही बिता देते हैं। लेकिन कितना ही सुंदर हो चांद का प्रतिबिंब झील की छाती पर बना, प्रतिबिंब ही है, रिलैक्शन ही है। और जरा झील कंप जाएगी, भाप में उड़ जाएगी, और खो जाएगा। और हम अगर इसको ही चांद समझे लें, तो समझेंगे कि चांद खो गया है। चांद नष्ट हो गया। एक चांद और भी है, जो आकाश में है दूर। जिसे हम शरीर कहते हैं, वह केवल मीडियम है, जीवन की अभिव्यक्ति का माध्यम है। वह मरेगा, उसकी घड़ी चल रही है, उसका यंत्र चल रहा है, वह यंत्र ही है। शरीर एक मैकेनिज्म ही है। बिल्कुल यंत्र है, प्रकृति से पैदा हुआ यंत्र है। आज नहीं कल हम भी वैसा यंत्र बना लेंगे। और हो सकता है, प्रकृति से अच्छा बना लें। क्योंकि प्रकृति को हजारों-लाखों वर्ष लगते हैं, प्रयोग करने में, तब सुधार कर पाती है। आदमी जल्दी कर लेता है। हम इससे अच्छा यंत्र बना लें जो इससे ज्यादा चले, लेकिन वह यंत्र ही होगा, जो चल रहा है, भीतर जो प्रतिफलित हो रहा है, जो जीवन है, वह इस यंत्र के साथ एक नहीं है। लेकिन उसका हमें कोई स्मरण नहीं आता हम इस यंत्र के साथ ही जी के समाप्त हो जाते हैं। और मरते

वक्त शायद समझते होंगे मैं मर रहा हूं, क्योंकि हमने इस यंत्र को ही अपना होना समझ रखा है।
तो पहली बात आपसे कहना चाहता हूं कि जन्म के साथ मिलता है माध्यम, मीडियम, इंस्ट्रूमेंट साधन जीवन का, जीवन नहीं। जीवन तो कहीं पीछे है, और हम अगर हम इस माध्यम से ही उलझ के व्यस्त हो गए तो उससे चूक जाएंगे, जिसका यह माध्यम था और जिसे पाने, खोजने के लिए, सार्थक हो सकता था। तो पहला सूत्र जन्म को जीवन नहीं मान लेना और जैसा जन्म से जीवन मिल जाए उससे संतुष्ट मत हो जाना। लेकिन हमें संतोष की बहुत बातें सिखाई गई हैं। संतुष्ट होने के लिए बहुत कहा गया है। जो है उससे संतुष्ट हो जाओ। और जो आदमी उससे संतुष्ट हो गया वह आदमी कोई विकास नहीं करता, वह बीज बोने से ही संतुष्ट हो गया वह वृक्ष कभी नहीं होता। एक गहरा असंतोष चाहिए, जो है उससे। यह बुद्ध या महावीर, या कृष्ण और क्राइस्ट या लाओत्सु इनको संतुष्ट आदमी मत समझने की भूल में पड़ जाना। इनसे ज्यादा असंतुष्ट, इनसे ज्यादा डिस्कंटेंट से भरे हुए मनुष्य पृथ्वी पर कभी पैदा ही नहीं हुए। हां, इनका असंतोष एक दिन इन्हें वहां ले गया, जहां सब संतोष हो जाता है। वह दूसरी बात है, वह फल है। वह असंतोष का अंतिम फल है। वह असंतुष्ट हो गए अपने से। इतने असंतुष्ट हो गए कि यह जो जीवन दिखाई पड़ता है, यह उन्हें जरा भी रसपूर्ण, और अर्थपूर्ण न रहा। क्योंकि जो छूट ही जाना है, जो बहुत बुद्धिमान हैं, उनको दिखाई पड़ गया कि छूट गया। देर की बात है, धोखे का सवाल नहीं है। जो मिट ही जाना है, वह मिट ही गया। इसमें फासला सिर्फ टाइम का है। सिर्फ समय का है, और समय भागा चला जा रहा है। जल्दी ही वह घड़ी आ जाएगी। बात पूरी हो जाएगी। बहुत असंतुष्ट लोग, अपने से असंतुष्ट, जन्म से असंतुष्ट तथाकथित जीवन से असंतुष्ट एक दिन उस जगह पहुंच जाते हैं जहां परमतुष्टि मिलती है। लेकिन परम तुष्टि मान कर जो बैठ गए हैं, वे कहीं भी नहीं पहुंचते। वे अपनी परम तुष्टि में सिर्फ नष्ट होते हैं, समाप्त होते हैं, और मरते हैं। संतोष कर लेना सुसाइडल है, आत्मघाती है। असंतुष्ट होकर एक दिन उस जगह पहुंच जाना जहां, संतोष बरस जाता है सारे जीवन पर, करना नहीं पड़ता, आ जाता है। बनाना नहीं पड़ता, साधना नहीं पड़ता, निर्मित नहीं करना पड़ता, घट जाता है। वीणा बजने लगती है, बजानी नहीं पड़ती उसकी। फूल खिल जाते हैं उसके, खिलाने नहीं पड़ते। कागज के बाजार से खरीद के लाने नहीं पड़ते, इत्र नहीं छिड़कना पड़ता उन पर। सुगंध उनकी फैलने लगती है, उस दिन हैपनिंग है। संतोष हैपनिंग है, संतोष प्रयास नहीं है। प्रयास तो सदा असंतोष है, उपलब्धि अंतिम उपलब्धि, असंतोष की अंतिम यात्रा पर, संतोष के फूल खिलते हैं। उनकी बात करने की जरूरत नहीं, वह अपने आप खिल जाते हैं। लेकिन सारी दुनिया को संतोष के पाठ ने मार डाला है, बिल्कुल मार डाला है। हर आदमी संतुष्ट है, जो है, उससे संतुष्ट है। इसलिए जो हो सकता है, वह नहीं हो पाता है। तो यह तो पहली ही बात, जन्म से संतुष्ट नहीं होना है।
दूसरी बात, दूसरी बात है कि जीवन को बनाने की चेष्टा में, जीवन की खोज में, सिद्धांत पकड़ लेने वाला आदमी बहुत उपद्रव में पड़ जाता है। जिस आदमी ने भी जीवन के बंधे-बंधाए, रेडीमेड सिद्धांत पकड़ लिए वह आदमी उधार हो जाता है, वह आदमी कभी भी ऑथेंटिक, प्रमाणिक नहीं रह जाता। किसी ने अगर महावीर को पकड़ लिया तो चूक गया वह आदमी, जिंदगी उसे कभी नहीं मिलेगी। किसी ने बुद्ध को पकड़ लिया, मर गया वह आदमी, अब उसको जिंदगी कभी मिलने वाली नहीं है। क्योंकि बुद्ध के जीवन का अनुभव नितांत उनका अनुभव है, वह अनुभव आप नहीं दोहरा सकते। आपका अनुभव नितांत, आपका होगा कोई बुद्ध उसको नहीं दोहरा सकता। जीवन का अनुभव रिपीट पुनरुक्त नहीं होता। जीवन का अनुभव सदा मौलिक और ओरिजिनल है। जो आपको होगा, तब वह ऐसा होगा जैसा न कभी हुआ, न कभी हो सकता।
सिद्धांत सिखाए जाते हैं लेकिन अगर जीवन पाना है, तो ऐसे नियम, ऐसे सिद्धांत, इनको मान कर चलो। सिद्धांत बड़े धोखे की दुनिया है। और सिद्धांतवादी आदमी से थोथा आदमी होता ही नहीं। झूठे आदमी होते हैं, वह आदमी होते ही नहीं असली। क्योंकि वे सिद्धांतों को पकड़ कर जिंदगी को इतना ढांचे में ढाल लेता है, कि जो जिंदगी असली है, जो किसी ढांचे में कभी नहीं

ढलती, वह चूक जाता है। सिद्धांतवादी आदमी पैटर्न में, ढांचे में, मुर्दा हो जाता है। लेकिन हम सिद्धांतवादी आदमी का बड़ा आदर करते हैं। हमारे मनों में बड़ा भाव है कि सिद्धांत होने चाहिए। कि जिंदगी को पाने के सिद्धांत क्या हैं? ध्यान रहे कि सिद्धांतों की कुछ बुनियादी खूबियां है, खतरनाक खूबियां है। पहली खूबी तो सिद्धांतों की यह है कि सिद्धांत सीधे-साफ होते हैं। और जिंदगी बहुत जटिल है, सीधी-साफ बिल्कुल नहीं है।
एक दार्शनिक के पास कोई आदमी गया। उसे कार चलाने का शौक है। और तेजी
से चलाने का शौक है। जब जिंदगी में और कोई तेजी न हो जाए, तो इस तरह की फिजूल तेजियां आदमी खोज लेता है। जब जिंदगी में कोई, कुछ तेजी न हो, जिंदगी मुर्दा हो तो, फिर ड्राइव करने में ही तेजी का मजे लेता है। बड़ी बेमानी तेजियां हैं, कहीं पहुंचाती नहीं। कितनी तेज कार चलाओ, कहां पहुंच जाना है? वह एक दार्शनिक से पूछने गया कि मुझे बड़ा डर लगता है, मैं बहुत तेज गाड़ी चलाता हूं। मैं आपसे पूछने आया हूं कि कोई खतरा तो नहीं है? आप बड़े ज्ञानी हैं, उस दार्शनिक ने कहा कि खतरा कोई भी नहीं है। सिद्धांत तुम्हें समझा देता हूं। अगर तुम तेज गाड़ी चलाओगे तो दो संभावनाएं हैं, या तो टकराओगे या नहीं टकराए। अगर नहीं टकराए तो कोई खतरा नहीं, अगर टकराए तो दो संभावनाएं हैं, या तो चोट खाओगे या नहीं खाओगे। अगर नहीं चोट खाए कोई खतरा नहीं और अगर चोट खाओगे तो दो संभावनाएं हैं। या तो मर जाओगे या बच जाओगे। अगर बच गए तो कोई खतरा नहीं और अगर मर गए तो खतरे का सवाल ही नहीं। लेकिन जिंदगी इतनी सरल नहीं है। आदमी चोट खा सकता है और बच सकता है। लेकिन गणित के फार्मूलों में सोचने वाले लोग ऐसा ही सोच लेते हैं। ऐसा जिंदगी को तोड़ देते हैं, काले अंधेरे में अ और ब में, और दो हिस्से खड़े कर देते हैं। जिंदगी में न कुछ अंधेरा है, न कुछ सफेद है, जिंदगी ग्रे है। जिंदगी में न अ है, न ब है। जिंदगी में अ और ब दोनों एक ही चीज के दो नाम हैं। जिंदगी बहुत जटिल है, बहुत कांप्लेक्स है। जिंदगी बहुत गहरा उलझाव है। इतना सीधा-साफ नहीं है, जैसा गणित के फार्मूले होते हैं। जैसे दो और दो चार होते हैं। जिंदगी में कभी दो और दो चार होते भी हैं, कभी नहीं भी होते। कभी दो और दो- पांच भी हो जाते हैं, कभी दो और दो-तीन भी रह जाते हैं। जिंदगी बहुत कठिन है जिंदगी सीधा गणित नहीं है। लेकिन सिद्धांत जिंदगी को बिल्कुल सीधा-साफ बना देते हैं। और हमें बहुत जंच जाते हैं। बुद्धि को बहुत जंच जाते हैं, कि सिद्धांत बिल्कुल ठीक हैं, कि पांच बजे सुबह उठ आओ ब्रह्ममहूर्त में तो ब्रह्मज्ञान हो जाएगा। अभी तक तो किसी को हुआ नहीं। कि यह खा लो यह मत खाओ, कि ये कपड़े पहनो ये मत पहनो, कि घर में रहो कि आश्रम में रहो, कि यह किताब पढ़ो वह मत पढ़ो। सिद्धांत बहुत तोड़ कर साथ-साथ बक्से में खड़ा कर देते हैं, कि यह करो यह मत करो। जिंदगी इतनी सीधी नहीं है, इतनी साफ नहीं है। और जो सिद्धांतों को पकड़ लता है बाहर से और सिद्धांतों में अपने को ढालने लग जाता है, वह धीरे-धीरे ऑटोमेटिक हो जाता है, एक यंत्र हो जाता है, आदमी नहीं रह जाता। इसलिए डिसिप्लिंड आदमी जिसको हम कहते हैं, बिल्कुल अनुशासित आदमी डेड आदमी होता है। मुर्दा आदमी होता है। जिंदा आदमी नहीं होता। घड़ी से चलता है, घड़ी से उठता है, घड़ी से बैठता है, सब काम बंधा-बंधा है, सब पटरी पर दौड़ता है। जैसे रेलगाड़ी के डिब्बे दौड़ते हैं। कभी नीचे नहीं उतरते, बस पटरी पर दौड़ते चले जाते हैं। और जिंदगी की कोई पटरी नहीं है। लोहे की पटरियां नहीं हैं वहां? जिंदगी नदी की धारा की तरह है, पटरियां बिल्कुल नहीं हैं। अनजान, अपरिचित रास्तों से गुजरना पड़ता है, मार्ग भी बदल जाता है। वर्षा आती है, नदी बड़ी भी हो जाती है। धूप आती है, नदी छोटी भी हो जाती है। सूख भी जाती है। समुद्र भी बन जाती है, सब है, जिंदगी में वहां बंधी पटरियां नहीं हैं, लोहे की, और लोहे के डिब्बे नहीं हैं उन पर चलते हुए। लेकिन सिद्धांतवादियों ने जिंदगी को एक ढांचा और एक पैटर्न देने की कोशिश की। उसकी वजह से बहुत लोग जिंदगी से चूक जाते हैं। खयाल ही नहीं रहता कि हम यह क्या कर रहे हैं? और जितना आदमी आदतों को मजबूत कर लेता है और सुनिश्चित हो जाता है, एक ढांचे में घूमने लगता है, कोल्हू के बैल की तरह। रोज वक्त पर उठता है, रोज वक्त पर सो जाता है। वक्त पर किताब पढ़ लेता है, वक्त पर प्रार्थना कर लेता है। वक्त पर प्रेम कर लेता है। सब बंधा हुआ है,

हिसाब है। सब वक्त पर कर लेता है। सब ठीक ढंग से कर लेता है, नियम से कर लेता है। और सोचता है कि पा ली जिंदगी तो बड़ी भूल में है। जिंदगी तो बहुत अराजक है। जिंदगी बहुत अनार्किक है। जिंदगी बाण की भांति है। जीवन ऐसी सुनिश्चित बात नहीं है। ऐसे लकीर का फकीर होकर कोई जिंदगी को नहीं पाता। फिर ये सिद्धांत, पहली बात हमेशा सरल हैं। और जिंदगी जटिल है। और सिद्धांत हमेशा उधार हैं और जिंदगी सदा अपनी। सिद्धांत सदा दूसरे के हैं, और जिंदगी मेरी है।
और ध्यान रहे, जो एक आदमी के लिए अमृत है वह सिद्धांत दूसरे के लिए अक्सर जहर हो जाता है। क्योंकि एक आदमी जैसा दूसरा आदमी नहीं है। अब महावीर को नग्न खड़ा होना आनंदपूर्ण होगा। खड़े हुए, उनकी मौज खड़े रहें। लेकिन कुछ पागल उनके पीछे दो-तीन हजार वर्ष से नग्न खड़े होने का अभ्यास कर रहे हैं।
मेरे एक मित्र हैं, वे भी नग्न मुनि होने की चेष्टा में संलग्न थे। मैं एक बार उनके आश्रम के पास से गुजरता था, तो गाड़ी रोक कर कहा कि दो मिनट उनको देख आऊं कि कहां तक गति हुई। झोपड़ा जंगल में है, उनको पता नहीं होगा, कोई आता है। खिड़की से मैंने देखा, वे नंगे टहल रहे हैं। दरवाजे पर दस्तक दी, तो चादर लपेट कर आए। मैंने उनसे पूछा खिड़की से, मेरा खयाल पड़ता है कि आप नंगे थे। अब आप चादर लपेट कर आ गए, बात क्या है? उन्होंने कहाः मैं नंगे होने का अभ्यास कर रहा हूं। पहले अपने ही कमरे में नंगे होने का अभ्यास करूंगा, फिर दो-चार मित्रों के बीच, फिर गांव में, फिर बड़े राजपथ पर। मुश्किल पड़ती है नंगा होने में। मैंने उनसे पूछा कि तुमने कभी सुना है कि कभी महावीर ने नंगे होने का अभ्यास किया हो? कब वस्त्र गिर गए यह पता भी नहीं चला होगा। नग्नता आ गई होगी।
यह दूसरी बात है एक आदमी इतना सरल हो गया होगा, इतना इनोसेंट हो गया होगा, इतना निर्दोष हो गया होगा कि वस्त्र की जरूरत ही न रही होगी। वे गिर गए होंगे किसी दिन और पहनना भूल गया होगा, यह दूसरी बात है। लेकिन यह आदमी कनिंग है, यह आदमी चालाक है। यह व्यवस्था कर रहा है। नंगे होने का भी अभ्यास कर रहा है। तो यह आदमी भी नंगा हो जाएगा, हो सकता है कि महावीर से भी ज्यादा व्यवस्थित नंगा हो जाए। इसके नंगेपन में एक मैथड होगा, सिस्टम होगा, निश्चित ही इसके नंगेपन में एक ढंग होगा, महावीर का नंगापन बिल्कुल बेढंगा रहा होगा। न सोचा होगा, न सुना होगा, न विचारा होगा, जिंदगी हो गई होगी सरल। कपड़े किसी दिन छूट गए होंगे। पाया होगा, क्या जरूरत है? बात खत्म हो गई होगी। उसपे लौट कर सोचा भी नहीं होगा। इस आदमी का नंगापन बहुत व्यवस्थित होगा। अगर महावीर और इसको दोनों को काम्पिटीशन कराया जाए, यह जीत जाएगा। इसका अभ्यास, ट्रेनिंग इसने ली है, लेकिन कोई अभ्यास से नंगा हो सकता है? अभ्यास किस बात का कर रहे हैं आप? अभ्यास इसी बात का कर रहे हैं कि वह जो कपड़े जिसे छिपाते थे, अब अभ्यास से, अकड़ से, संकल्प से कपड़ों का काम लेने की कोशिश कर रहे हैं। और क्या कर रहे हैं? अब संकल्प के द्वारा कपड़ा जिसे छिपाता था, अब संकल्प से, अकड़ से, हिम्मत से, साहस से उसे छिपाने की कोशिश कर रहे हैं। लेकिन छिपाने की कोशिश जारी रहेगी। और यह तो हो सकता है कि नंगा कोई अभ्यास से हो जाएगा। लेकिन यह सर्कस का नंगापन होगा, यह संन्यासी का नंगापन नहीं हो सकता?
महावीर के लिए नंगापन एक मौज रही होगी। नग्नता एक आनंद रहा होगा। बुद्ध को नंगापन नहीं है मौज, तो कोई जरूरी है कि बुद्ध नंगे खड़े हों? बुद्ध को जो ठीक है, वे वैसा जीते हैं। क्राइस्ट को जो ठीक है, वे वैसा जीते हैं। अपना-अपना जीवन है। अपनी-अपनी आत्मा है। अपना-अपना भीतर गहरा व्यक्तित्व है। सिद्धांत मार डालते हैं, व्यक्ति को, क्योंकि सिद्धांत होते हैं दूसरे के व्यक्तित्व पर निर्मित। और मैं बिल्कुल अलग आदमी हूं तो मैं किसी को भी मान कर, अगर आधार बनाके जीने की कोशिश करूंगा, तो मैं नकली हो जाऊंगा। कार्बनकॉपी हो जाऊंगा। मैं असली नहीं रह जाने वाला हूं। वैसे तो कार्बनकॉपी भी पढ़ने में बड़ी तकलीफ देती है। और कार्बनकॉपी बड़े दिल को दुखाती है। और कोई कार्बनकॉपी करके पत्र आपको भेज दे तो फाड़ देने का मन होता है। तो कार्बनकॉपी आदमी तो बहुत दुखद हो जाता है। बहुत ऊबाने

वाला हो जाता है। सारी मनुष्यता को धीरे-धीरे कार्बनकॉपी होने का रोग पकड़ा हुआ है। किसी न किसी को कहां से कैसा जीवन तो, किससे हम सीखें, किस महात्मा को पकड़े, किस गुरु को पकड़ें, किस तीर्थंकर को, किस अवतार को, और पकड़ कर हम कैसे जीएं और और इसका खयाल ही नहीं कि कृष्ण एक तरह के आदमी हैं? अगर कृष्ण बुद्ध को पकड़ लें तो मर जाएं, अगर बुद्ध कृष्ण को पकड़ लें तो क्या हालत हो पता है? हम सोच ही नहीं सकते। महावीर मोरमुकुट बांधे खड़े हैं, तो ऐसा लगेगा कि बंद करो, ले जाओ कहीं और इनको। लेकिन कृष्ण अगर नंगे खड़े हों तो इतने घबड़ाने वाले मालूम पड़ेंगे। कृष्ण कृष्ण हैं, उनका अपना व्यक्तित्व है। महावीर का अपना है। व्यक्ति-व्यक्ति के पास परमात्मा ने मौलिक व्यक्तित्व दिया है। इसी का नाम आत्मा है। मौलिक होने का नाम आत्मा है। ओरिजिनल होने का नाम आत्मा है। अमौलिक बारोड कार्बनकॉपी होने का नाम आत्मा खोना है। जिसको आत्मा खोनी हो, वह किसी का अनुयायी हो जाए। और जिसे आत्मा पानी हो वह सावधान रहे, न किसी सिद्धांत के ढांचे में, न किसी शास्त्र के, न किसी व्यक्ति के, न गुरु के। दूसरी बात आपसे कहता हूं, सिद्धांत और ढांचे से बचने की कोशिश करना, नहीं तो जीवन का पता नहीं चल पाएगा।
और तीसरी अंतिम बात कहना चाहता हूं। हम सब जीते हैं या तो अतीत में या भविष्य में। या तो जो बीत गया उसमें या जो नहीं आया उसमें। वे दोनों ही नहीं हैं। और जीवन है अभी और यहां। जीवन है अभी, इसी वक्त, इसी श्वास में। और मैं जीऊंगा अतीत में। कभी आपने खयाल किया कि आप वर्तमान में रहे हों? ऐसा कोई याद आता है कि आप कभी वर्तमान में रहे हों, वहीं रहे हों जहां थे? कभी याद नहीं आएगा। जब भी आप रहे होंगे कहीं और। आज जीएंगे नहीं कल जो जीवन बीत गया उसकी राख का हिसाब करेंगे। परसों जो बीत गया उसका हिसाब करेंगे। बीती जिंदगी की सारी स्मृतियों में खोए रहेंगे, लौट-लौट कर वहीं देखते रहेंगे। वह सब मर चुका, अगर मौत को खोजना हो तो अतीत में खोजें। अतीत में मृत्यु है। सब मर चुका, राख रह गई। अंगारे जा चुके हैं, वहां से सिर्फ राख छूट गई। जोत-बत्तियां बुझ गईं। वहां से सिर्फ गिरी हुई, झड़ी हुई राख रह गई है। अब वहां सत्य नहीं है। अब वहां सिर्फ मानसिक स्मृति है। जीवन वहां से हट चुका, जा चुका, उसे क्यों सोच रहे हैं? उसे सोच कर जो जीवन अभी है, उसे जानने से क्यों वंचित हुए जा रहे हैं? क्योंकि चित्त का एक नियम है वह एक ही जगह हो सकता है। जो चित्त अतीत में है वह वर्तमान में नहीं हो सकता। जो चित्त भविष्य में है वह वर्तमान में नहीं हो सकता। अटेंशन अगर अतीत में है ध्यान, तो आप वर्तमान में नहीं हो सकते। भविष्य में है तो वर्तमान में नहीं हो सकते। अतीत है मरा हुआ। भविष्य है अजन्मा, अभी जन्मा नहीं। आप उसके हिसाब में पड़े हैं। कल आने वाला कल पकड़े है। या बीता कल पकड़े है। आज, आज में कोई जीता ही नहीं! और जीवन है, आज, अभी और यहीं। इसी क्षण है। मैं जीवित हूं अभी और स्मृति है पीछे की। जीवन के ऊपर स्मृति की राख छा जाती है। हम उसी राख को टटोलते रहते हैं। उसी में खोजते रहते हैं। क्या मिलेगा वहां? राख में क्या मिल सकता है? और जो अभी जन्मा नहीं है, अजन्मा है, अनजान है, जो हमें पता ही नहीं है कि क्या होगा कल? उसका विचार, उसकी चिंता, उसमें खोए रहना, उसमें लीन रहना, चूक जाएंगे। आज से चूक जाते हैं हम। अभी, जस्ट हियर एण्ड नाउ, वे जो क्षण हैं उससे हम प्रतिपल चूकते चले जाते हैं। वह क्षण इतना बारीक है, और हमारा अतीत और भविष्य का उलझाव इतना भारी है कि वह बारीक क्षण कब निकल जाता है, हमें पता ही नहीं चलता। असल में जब वह निकल जाता है तभी हमको पता चलता है। और जब वह निकल जाता है तब बेमानी हो जाता है, तब पता चलने का कोई मतलब नहीं। या हमें तब पता रहता है जब वह आया नहीं होता, आ रहा होता है, तब भी बेमानी है। क्योंकि अभी वह आया नहीं!
अतीत और भविष्य में जो जीता है, और हम सब ऐसे ही जीते हैं, हमारा मन का पेंडुलम अतीत से भविष्य, भविष्य से अतीत ऐसा डोलता रहता है। वह कभी रुकता नहीं, वहां जहां जीवन इस वक्त है अभी है, इस क्षण है।
एक फकीर नानइन था जापान में। एक आदमी उसके पास आया और उस आदमी ने कहा
कि मैं जीवन जानना चाहता हूं, मुझे कुछ रास्ता बताओ? वह फकीर थोड़ी देर आंख बंद किए बैठा रहा, फिर उसने कहा किस गांव से आते हो? उस आदमी ने कहा जिस

गांव से आता हूं, उसे बहुत पीछे छोड़ आया, उसकी बात करनी फिजूल है। वह फकीर फिर थोड़ी देर चुप रहा, और फिर उसने पूछा, जिस गांव से आते हो उस गांव में चावल के दाम क्या थे? उस आदमी ने कहा कि आप बड़े पागल मालूम होते हैं। चावल के दाम कुछ न कुछ रहे होंगे, लेकिन अब जिस बाजार में मैं नहीं हूं, उस बाजार के चावल के दामों का मतलब क्या है? आप फिजूल की बातें क्यों कर रहे हैं? मैं पूछने आया हूं जीवन? उस फकीर ने कहा कि मैं बताऊंगा तुम्हें जीवन, लेकिन पूछा इसलिए, कि अगर तुम बताते कि फला गांव से आते हो, और बताते कि उस गांव में चावल के दाम ये हैं, तो दरवाजे के बाहर निकाल देता, और दरवाजा बंद कर लेता। भाग यहां से, अभी तू उस गांव में रह रहा है, जहां से आ गया। अभी उन चावल के दामों की फिकर कर रहा है, जहां तू नहीं है। फिर तेरे जीवन जानने का उपाय न था। लेकिन तू आदमी काम का मालूम पड़ता है। मालूम होता है तू वह पुल तोड़ देता है, जिनसे गुजर जाता है। तो उस आदमी ने कहा कि वे टूट ही जाते हैं, तोड़ने का सवाल ही नहीं। कोई पागल है, जो उनको जोड़े रखता है मन में। असलियत में तो सब टूट जाता है, जहां से हम गुजर जाते हैं, वह रास्ता मिट जाता है। वह ब्रिज टूट जाता है, जहां से हम गुजर गए, वह गया। अब वह कहीं भी नहीं है। अब उसे कहीं भी खोजा नहीं जा सकता। अब सिर्फ हमारी स्मृति में धागे रह गए हैं। और कहीं कुछ भी नहीं रह गया है।
ठीक, उस फकीर ने ठीक पूछा। हमें भी कभी अपने से पूछना चाहिए कि हम बीते बाजारों के दाम तो याद नहीं रखे हुए। जा चुकी स्मृतियों में तो नहीं खो गए हैं। जिस गांव को छोड़ चुके हैं, अब भी वहीं तो नहीं रह रहे हैं। जिस घर को तोड़ चुके हैं, कहीं उसमें ही तो निवास जारी नहीं है। लेकिन हम सब वहीं रहते हैं। हम सब वहीं रहते हैं, बीता पकड़े रहता है। वह मौत का ढेर है, उससे जिंदगी का पता कभी नहीं चलेगा। और या फिर आगे का पकड़े रहता है, जो अभी नहीं आया है कि कल क्या करना है, कल क्या होना है? और कल जब आएगा, तब फिर हम आगे कल के सोचने लगेंगे और उसको फिर खो देंगे और फिर गंवा देंगे। रोज कल आता है लेकिन आज होकर आता है। और आज से हमारा कोई संबंध ही नहीं है। वह चूक जाता है। ऐसे पूरी जिंदगी बह जाती है, धारा की तरह। और हम डोलते रहते हैं, अतीत और भविष्य में। अतीत और भविष्य में। बच्चे भविष्य में डोलते रहते हैं। बूढ़े अतीत में डोलते रहते हैं। और जवान मुश्किल से कोई आदमी होता है। क्योंकि जवान का मतलब ही यह है, शरीर से तो सभी जवान होते हैं। वह मैं बात नहीं कर रहा। जवान वह आदमी है या वह चित्त है, यंग माइंड, युवा चित्त वह है जो अभी और यहां जीता है। और अगर कोई आदमी अभी और यहां जीना जान जाए। इस क्षण को पकड़ ले और डूब जाए, तो वैसा आदमी न कभी बूढ़ा होता और न कभी मरता है। क्योंकि उस द्वार से उसे उसका पता चल जाता है, जीवन की उस धारा का, जहां कोई मृत्यु कभी प्रवेश नहीं करती। इसी क्षण से द्वार है, दिस वैरी मूवमेंट। यह जो क्षण हमारे पास से जा रहा है। यह जो कंपता हुआ निकला चला जा रहा है। यह जो हवा के झोंके की तरह वृक्षों से गुजर जाएगा। यह जो पानी की लहर की तरह छितर जाएगा। यह जो अभी गया, हम पकड़ भी नहीं पाएंगे और निकल जाएगा। अगर हम जरा भी पीछे झुके, यह गया। हम जरा भी आगे झुके, यह गया। यह अभी है जो पीछे नहीं झुकता, आगे नहीं झुकता, अभी खड़ा हो जाता है और झांकता है। उसे जीवन दिख जाता है।
वर्तमान के क्षण में खड़े हो जाने का नाम ध्यान है। वर्तमान क्षण में डूब जाने का नाम समाधि है। वर्तमान क्षण में उतर जाने से हम उस गंगा में उतर जाते हैं, जो जीवन की गंगा है। जीवन सदा वर्तमान में है। अतीत और भविष्य एक अजन्मा है, और एक मर चुका है। वहां जीवन नहीं है। जीवन अभी है, लेकिन हमें सदा आगे और पीछे जीने की योजना बताई जाती है। छोटे बच्चे खेलते दिखाई पड़ते हैं आपको, शायद थोड़े बहुत वे निकट क्षण में जीते हैं? शायद इसीलिए ज्यादा जीवंत मालूम होते हैं? शायद इसलिए ताजे और फ्रेश और सुगंधित मालूम होते हैं? शायद इसलिए उनकी आंखों से कोई खबर आती है, जो फिर धीरे-धीरे आनी बंद हो जाती है? लेकिन छोटे से छोटा बच्चा भी ठीक वर्तमान में नहीं होता, अप्रॉक्सिमेटली करीब-करीब वर्तमान में होता है, बिल्कुल वर्तमान में नहीं होता, करीब-करीब होता है। करीब-करीब होने से ही वह इतना ताजा है, जिंदगी की धारा के वह बहुत करीब है। वहां से फुहार जिंदगी की आती

है, फिर जैसे-जैसे वह बूढ़ा होता चला जाता है वैसे-वैसे जिंदगी की धारा से दूर होता चला जाता है। अतीत कीशृंखला बड़ी हो जाती है। भविष्य के भय और कल्पनाएं और योजनाएं बड़ी हो जाती हैं, और वे सब पकड़े लेती हैं। वृद्ध आदमी वृद्ध चित्त जीवन से सबसे ज्यादा दूर हो जाता है। बचपन बच्चे का चित्त निकटतम होता है। लेकिन वह भी वहां नहीं होता। जीसस क्राइस्ट एक गांव से गुजर रहे हैं। भीड़ ने उन्हें घेर लिया है। एक कुत्ता उन्हें काट खाता है। एक पागल कुत्ता। भीड़ चिल्लाती है कि पकड़ो, इस पागल कुत्ते को मार डालो इसे, यह न मालूम कितने लोगों को काटेगा। बाजार है, मेला है, जीसस को कोई जानता नहीं। जीसस के पैर से खून बह रहा है, वह उस कुत्ते को बैठ कर प्यार कर रहे हैं। एक आदमी ने गौर से देखा, क्योंकि सारे लोग कुत्ते को गाली देने में लग गए थे। फिकर छोड़ दी थी, किसको काटा? कौन को काटा? एक आदमी ने देखा उसने कहा कि ये आदमी कुत्ते से भी ज्यादा पागल मालूम होता है। कुत्ते ने काटा हुआ है, वह बैठ कर कुत्ते के पास क्या कर रहा है? जीसस खड़े हुए। उन्होंने कहा कि तुमने देखा नहीं कि इस कुत्ते के दांत बड़े प्यारे हैं, बड़े सुंदर। तो किसी आदमी ने भीड़ के पीछे से कहा कि मालूम होता है कि यह मरियम का बेटा जीसस होगा। क्योंकि जमीन पर वह ही एक आदमी है कि कुत्ता उसे काट खाए तो भी वह इस फिकर में बहुत न पड़े कि क्या होगा? कुत्ते के दांत देख सके, जो अभी हैं, और इस क्षण में जी सके। मालूम होता है यह मरियम का बेटा जीसस होगा। वही आदमी ऐसा है। फिर भीड़ ने पूछा तुम कैसे इस चीज को उपलब्ध हुए हो? तुम्हें फिकर नहीं कि कुत्ते ने तुम्हें काट लिया है। उसने कहाः वह हो चुकी घटना। वह अतीत हो गई, काटा जा चुका। खयाल करते हैं, जीसस ने कहा काटा जा चुका। अब कुत्ता काट नहीं रहा है। काटा जा चुका, वह घटना हो चुकी। अब उसके लिए उसमें डूबना, और उतरना और घूमना अर्थहीन है।
क्या होगा, यह देखा जाएगा। अभी कुत्ता है, और मैं हूं। और इसके दांत बड़े प्यारे हैं। इतने प्यारे दांत मैंने किसी आदमी के भी नहीं देखे। इतने ताजे, इतने चमकते हुए, इतने साफ! किसी आदमी ने उनसे पूछा, क्या इसी तरह प्रभु के राज्य में प्रवेश होगा? कि जिसको आप मोक्ष कहते हैं? किंग्डम ऑफ गॉड कहते हैं। ऐसा, .जीसस ने कहा निश्चित ही, जो बच्चे की तरह हैं, जो अभी और यहीं है, वे प्रभु के राज्य में प्रवेश कर सकते हैं। जो बच्चे की तरह हैं। लेकिन बच्चे, बच्चे भी पैदा होते से ही पीछे-आगे का कंपन शुरू हो गया। पेंडुलम अभी थोड़ा घूमता है, ज्यादा नहीं। मां दूध नहीं देती तो बच्चा पीड़ित है, परेशान है। और कल उसने दूध दिया था तो उसकी स्मृति भी है मन में कहीं। हो सकता है गर्भ में जो आराम मिला था बच्चे को, उसकी भी स्मृति हो। जो सुख मिला था, बड़ा आरामपूर्ण था। गर्भ में न कोई काम था, न कोई चिंता थी, न कोई दुनिया थी, न कोई झगड़ा था। सब चुपचाप चलता था। कुछ महीने तक तो सांस लेने की झंझट भी न थी। सब उससे ज्यादा आनंदपूर्ण जगह, अब तक हम नहीं बना पाए। कोशिश तो हम बहुत करते हैं, जो मकान हमने बनाएं हैं, वह गर्भ की ही कल्पना हैं। जो कोच हमने बनाई हैं तकिए-गद्दे बनाए हैं, वह गर्भ की ही कल्पना है। और अभी जो अंतरिक्ष में यात्री गए हैं, उनके लिए जो कैप्सूल बनाया है, वह तो बिल्कुल गर्भ की डिजाइन पर है। जिसमें उनको बिल्कुल पड़े रहें, वह चौबीस घंटे जिसमें कोई तकलीफ न हो, बिल्कुल कोई अड़चन न हो। लेकिन अभी भी मनोवैज्ञानिक तो कहते है कि मोक्ष का जो खयाल है, वह गर्भ की स्मृति है। यह जो खयाल है कि जो ऐसा जगत होना चाहिए। कोई ऐसा लोक जहां आराम ही आराम, आनंद ही आनंद हो, तो यह बच्चे के मन में छूट गई गर्भ की स्मृति है, जो उसके अनकांशस में या चेतन में रह गई है। वह फिर से गर्भ खोज रहा है। वह कोई ऐसा लोक खोज रहा है, जहां सब शांति, सब आनंद, कोई दुख नहीं, कोई पीड़ा नहीं, कोई परेशानी नहीं, कुछ काम नहीं करना पड़ता। कल्पवृक्ष हैं, उनके नीचे रहो, जो चाहो हो जाता है। कोई दुख नहीं, कोई पीड़ा नहीं। सब सुख ही सुख है। मनोवैज्ञानिक तो कहते हैं, इस मोक्ष की धारणा के पीछे कहीं न कहीं गर्भ की स्मृति काम कर रही है। तो गर्भ की स्मृति भी होगी तो बच्चे का भी पेंडुलम घूमना शुरू हो गया है। लेकिन फिर भी अभी कम घूम रहा है। अभी स्मृति कम है, अतीत कम है। अभी भविष्य का भी बोध कम है। अभी वह खेलता भी है, कूदता भी है, क्षण में लीन भी हो जाता है, अभी डूब भी जाता है। लेकिन हम जैसे-जैसे

स्मृति बढ़ती है, भविष्य का बोध बढ़ता है, क्षण में उतरना बंद कर देते हैं।
क्षण में नहीं उतरते तो जीवन नहीं मिलेगा। क्षण में उतर जाने की कला जीवन में पहुंच जाने की कला है।
तो तीसरा सूत्र आपसे कहता हूं कि कभी चौबीस घंटे मुश्किल पड़ेगा। चौबीस घंटे बहुत मुश्किल है क्षण में जीना। जो जीने लगे, उसका नाम संन्यासी है। लेकिन हमारा संन्यासी भी नहीं जीता, वह भी फिकर में रहता है कि आश्रम को कितने पैसे मिलेंगे कि नहीं मिलेंगे? यज्ञ होगा कि नहीं होगा? जनता होने देगी कि नहीं होने देगी? सारे झंझट हैं। वह सारे उपद्रव में जीता है। सारा उपद्रव वहां भी है। क्या होगा? क्या नहीं होगा? आगे पीछे सब उपाय, विचार सब चलता है। लेकिन संन्यासी का मतलब तो यही है कि जो क्षण में जीता है। जो कहता है कि कल हो चुका और आने वाला कल अभी आया नहीं। आज बस काफी है। यही क्षण काफी है। पर वह संन्यासी की बात है। कोई चाहे तो धीरे-धीरे उस दुनिया में भी प्रवेश कर पाता है, पा सकता है। लेकिन आज सामान्य जीवन में जीते हुए कम से कम दिन में कोई कुछ क्षणों के लिए छोड़ देना, अतीत को छोड़ देना भविष्य को, तो कुछ क्षण के लिए तो कोई भी संन्यासी हो सकता है। छोड़ देना, जाने देना कि नमस्कार! अतीत को क्षमा करो, जाओ। नहीं हमें अब याद करनी है। भविष्य को कहना रुको, ठहरो, जब आओगे तब देख लेंगे, इतनी जल्दी भी क्या पड़ी है? एक घड़ी भर को चुप होकर वहीं रह जाना जहां हैं। श्वास चलती होगी, हृदय धड़कता होगा। हवा चलती होगी। पक्षी चिल्लाते होंगे, वहीं रह जाना जहां हैं। जो हो रहा हो, वहीं रह जाना। बिल्कुल वहीं रह जाना। जरा भी मन को आगे-पीछे जाने के लिए नमस्कार कर लेना। मत जाओ, रुक जाओ, यहीं ठहर जाओ, बस यही बहुत है।
एक दिन में नहीं हो जाएगा लेकिन कोई अगर खयालपूर्वक, रिमेंबर करते- करते, स्मरण करते-करते, तो पेंडुलम की गति धीरे-धीरे धीमी होने लगेगी। लंबी छलांगें पेंडुलम लेना बंद कर देगा। धीमे लेने लगेगा। कम लेगा। कम लेगा। किसी दिन अचानक पेंडुलम खड़ा हो जाएगा मन का और क्षण में छलांग लग जाएगी। उस क्षण में जो छलांग लग जाए तो जीवन क्या है पता चल जाता है? उस दिन पहली बार मैकेनिज्म से शरीर से छुटकारा होगा। आत्मा से परिचय होगा। उस दिन पहली दफा संसार ही नहीं परमात्मा भी सत्य हो जाता है। उस दिन पहली दफा मृत्यु समाप्त हो जाती और अमृत्व के द्वार खुल जाते हैं। उस दिन पहली दफा अंधकार से, दुख से, पीड़ा से, चिंता से, असंतोष से बाहर, और एक शांति का, संतोष का और आनंद का, एक नया ही लोक, जिससे हम बिल्कुल ही अपरिचित हैं, जहां से फूलों का सौंदर्य आता होगा, जहां से मनुष्य की आत्मा उतरती होगी, जहां से चांद-तारे रोशनी पाते होंगे, जहां से सारी जीवन की धाराएं अनंत-अनंत रूपों में प्रकट होती होंगी। उस ओरिजिनल सोर्स पर, उस मूल पर उतरना हो जाता है। उस मूल को कोई-कोई नाम दें कोई कहे मोक्ष, कोई कहे प्रभु, कोई कहे परमात्मा, जो कहना हो, कोई कहे निर्माण, जो कोई कुछ भी न कहे, बहुत समझदार कहते हैं, कुछ भी न कहो, चुप ही रह जाओ वह है, बस इतना ही बहुत है।
ये तीन सूत्र मैंने कहे। समझने की बात कम है। कुछ किसी दिशा में प्रयोग करने की बात ज्यादा है। अगर, अगर जीवन को सिर्फ मरने की यात्रा नहीं बनाना है और जीवन परम जीवन के मंदिर तक पहुंच सके ऐसी आकांक्षा है, अभीप्सा है तो सोचना। अगर ठीक लगे थोड़ा करना। करने से, कुछ करने से पहुंचना हो जाता है। हुआ है किसी एक का, तो क्यों किसी दूसरे का नहीं हो सकता।

मेरी बातों को इतने प्रेम और शांति से सुना, उससे बहुत अनुगृहीत हूं।
और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

नानक दुखिया सब संसार
तीसरा प्रवचन

अकेले होने का साहस

लेकिन उनकी भी सीमा है। और जिस गहराई की सीमा हो उसे गहराई कहना बिल्कुल ही व्यर्थ है। गहराई तो सिर्फ एक है जिसकी कोई सीमा नहीं है। और वह गहराई आत्मा की है, स्वयं की है, बीइंग की है। आत्मा की गहराइयों से ऐसा नहीं है कि कहीं सीमा आ जाती है, जहां गहराई समाप्त हो जाती है। आत्मा या बीइंग का अर्थ है, एक ऐसे अस्तित्व में प्रवेश, जिसमें प्रवेश तो होता है लेकिन जिसमें पहुंचना कभी नहीं होता। जिसमें हम प्रवेश तो करते हैं, लेकिन ऐसा कभी नहीं होता कि हम कह दें, पहुंच गए वहां, जहां अंत आ गया। आत्मा अनंत है, गहराई भी अनंत है। और आत्मा की गहराइयों के संबंध में सोचते समय, दूसरी बात और भी स्मरण आती है और वह यह कि हमने गहराइयां देखीं लेकिन देखने वालों का हमेशा अर्थ गहराई से अलग था। एक पहाड़ के किनारे खड़े होकर, हम नीचे झांक सकते हैं, गहराइयों में। लेकिन गहराई हमसे अलग है। आकाश में, वायुयान में उड़ते वक्त कोई नीचे झांक सकता है, लेकिन गहराई हमसे अलग है। आत्मा की गहराई ऐसी कोई चीज नहीं है, जिसमें हम झांक सकें। आत्मा की गहराई हम स्वयं हैं। वहां दो नहीं हैं कि कोई झांकेगा और कोई गहराई होगी। वहां हम ही गहराई हैं।
जो व्यक्ति भीतर जाएगा वह पाएगा कि वह स्वयं एक गहराई है जिसका कोई अंत नहीं है। शायद इसी डर से हम भीतर नहीं जाते हैं। शायद यही घबड़ाहट है, जो मनुष्य को बाहर-बाहर रखती है, भीतर नहीं जाने देती। हम तो छोटी सी गहराई से डरते हैं। पहाड़ के किनारे झांकने में प्राण कंपते हैं। कहीं गिर न जाएं। कहीं खो न जाएं। छोटी सी गहराई हमें डराती है कि कहीं डुबा न ले। तो अनंत गहराई से अगर हमारे प्राण भयभीत होते हों, जहां कि गिरना ही गिरना है। जहां कहीं पर पहुंचना नहीं है। तो शायद इसीलिए हम बाहर और बाहर घूमते हैं, भीतर नहीं जाते। जो जानते हैं, जो निरंतर पुकारते हैं, लोगों को कहते हैंः भीतर आओ। नो देमसेल्व। अपने को जानो। आत्म-विद बनो। हम उनकी सुन लेते हैं बातें। और अपने रास्ते पे चल पड़ते हैं। जरूर कहीं न कहीं मनुष्य के प्राणों में कोई बात छिपी है, कि वह भीतर जाने से भयभीत है। भीतर कोई जाना नहीं चाहता। भीतर जाने का कोई मौका भी मिल जाए तो हम उससे बचना चाहते हैं। अकेले भी हो जाएं तो हमें डर लगता है। अकेले में डर लगता है किसका? जब कोई भी नहीं है, हम अकेले ही हैं तो डर किसका? निश्चित ही डर अपना ही लगता है। अकेले में डर अपना ही लगता है। पक्का भरोसा हो कि कोई भी नहीं है बिल्कुल अकेला हूं, फिर भी हम डरते हैं। वह डर किसका है? आमतौर से हमने यही सोचा होगा कि डर सदा दूसरे का है। दूसरे का डर बहुत साधारण है। दूसरे के डर का इंतजाम किया जा सकता है। एक और गहरा डर है, वह अपना ही डर है, जो अकेले में लगता है। इसलिए हम साथ खोजते हैं, अपने से भयभीत होकर हम साथ खोजते रहते हैं। कोई साथी चाहिए, कोई मित्र चाहिए, कोई संगी चाहिए, भीड़ चाहिए, समाज चाहिए, संगठन चाहिए, राष्ट्र चाहिए, अकेला होने को केई भी राजी नहीं। सब किसी के साथ। और जो हमारे साथ खड़ा है, वह भी अकेले होने को राजी नहीं है, वह भी हमारे साथ खड़ा है। हम सब एक-दूसरे का साथ खोज रहे हैं, ताकि अपने से बच सकें। ताकि अपने से बचाव हो सके, ताकि अपने से एस्केप हो जाएं, अपने से हम भाग जाएं।
यह शायद आपको कभी खयाल नहीं आया होगा कि हम अपने से बचने की निरंतर कोशिश कर रहे हैं। काम में, व्यस्तता में, खो रहे हैं अपने को, डुबा रहे हैं अपने को। जिसके पास काम नहीं, व्यस्तता नहीं, खेल में, मनोरंजन में डुबा रहा है अपने को। जो सब तरफ से ऊब गया है, और डूबना मुश्किल है, वह शराब पी रहा है, डुबा रहा है अपने को। जीवन भर हम अपने से बचने की कोशिश कर रहे हैं। भीतर झांकने में कोई निरंतर भय मालूम पड़ता है। भीतर मालूम होता है कोई अनंत खड्ड है, जहां हम गए तो पता नहीं लौटे सकें, न लौट सकें। लेकिन एक घटना मुझे स्मरण आती है।

एक आदमी अंधेरी रात में एक पहाड़ी रास्ते पर भटक गया है। रास्ता खो गया है। डरा हुआ भयभीत, पैर फिसल गया है। गिर पड़ा है। एक झाड़ी को पकड़ कर लटक गया है। डर रहा है, नीचे अनंत खड्ड मालूम होता है। अंधकार है, पहाड़ी है, अंजान रास्ता है, पकड़े हुए जोर से झाड़ी को, चिल्ला रहा है बचाओ! लेकिन अपनी आवाज के सिवाय और कुछ भी सुनाई नहीं पड़ता। हमने भी कभी अपनी आवाज के सिवाय कुछ और सुना है? चिल्ला रहे हैं, बचाओ! अपनी ही आवाज खाली खोह-कंदराओं से लौट कर आ जाती है। सुनाई पड़ जाती है बचाओ। पास-पड़ोस में और चिल्लाते हुए लोग भी हैं हमारे, जो चिल्लाते हैं बचाओ, हमें लगता है कोई आस-पास है, लेकिन जहां सभी चिल्ला रहे हैं--बचाओ, बचाओ, वहां सभी अकेले हैं, और बचाने वाला कोई भी नहीं। वह आदमी चिल्ला रहा है, वहां कोई और चिल्लाने वाला भी नहीं, उसकी ही आवाज गूंजती है। रात गहरी होती चली गई। हाथ सर्द होने लगे, ओस पड़ रही है, सर्द है रात, हाथ ठंडे जड़ हो गए हैं, डर है कब छूट जाए झाड़ी, नीचे अनंत खड्ड है, उसके प्राण कंप रहे हैं, वह कंप रहा है पत्ते की तरह; लेकिन कब तक पकड़े रहे, आखिर हाथ जड़ हो गए, झाड़ी छूट गई और वह आदमी गिर गया। लेकिन गिरते ही उस घाटी में हंसी की आवाज गूंजने लगी, वहां नीचे कोई खड्ड न था। वहां नीचे तो पत्थर ही था। जिस पर वह खड़ा हो गया। उसकी हंसी की आवाज गूंजने लगी, उस पहाड़ में जहां वह चिल्लाता था--बचाओ, बचाओ, वहां वह हंस रहा है। और वह हैरान हो रहा है कि मैं इतनी देर व्यर्थ ही चिल्लाता रहा--बचाओ, बचाओ, छोड़ देता बचने के खयाल तो नीचे जगह मिल ही गई थी।
हम सब बाहर घूम रहे हैं, घूम रहे हैं, भटक रहे हैं, हजार-हजार कामों में उलझा रहे हैं अपने को। एक जगह से बचने के लिए जो हम हैं वहां हम नहीं जाना चाहते। वहां अनंत खड्ड है, लेकिन उस खड्ड की खूबी ही यही है उस एबिस की, उस इनफिनिट एबिस की, उस अंतहीन गड्ढे की, उस गहराई की खूबी ही यही है कि जो उसमें गिरा वह स्वयं गहराई हो गया। और जो स्वयं गहराई हो गया, उसके गिरने का कोई उपाय न रहा। गिर तो वह सकता है जो गहराई से अलग हो, अगर हम खुद ही गहराई हैं, तो गिरेगा कौन? और गिराएगा कौन? एक बार भीतर जाएं और उस गहराई के साथ एक हो जाएं तो मिल गई वह चट्टान जिससे हम कभी गिर नहीं सकते। लेकिन भीतर जाने का डर है और भीतर कोई भी जाना नहीं चाहता है। और जो आदमी अपने भीतर न गया हो, वह कहीं भी नहीं गया है। चाहे वह सारी पृथ्वी का चक्कर लगा ले, और अब उपाय है कि चांद पर चला जाए। कल उपाय होंगे कि शुक्र पर चला जाए, वह सारी दुनिया में कहीं भी चला जाए, लेकिन जो आदमी अपने भीतर नहीं गया है, वह कहीं भी नहीं गया है। उसका जाना बिल्कुल भ्रम है, इलुजरी, यात्रा है, जिसमें उसे लग रहा है, जा रहा हूं, लेकिन कहीं जा नहीं रहा। जैसे कोई आदमी एक रात सो जाए और सपना देखे। सपना देखे कि दूर चला गया है, दूर चला गया है। सोया है अहमदाबाद में और टिम्बकटू पहुंच गया है, कलकत्ता पहुंच गया है, टोकियो पहुंच गया है। सोया है अहमदाबाद में, और सपने में टिम्बकटू पहुंच गया है, रात भर चलता रहा है, चलता रहा है, न मालूम कि कितनी यात्रा की है, और सुबह जाग करपाता है कि मैं तो वहीं हूं, जहां था, सब जाना सपने में हुआ है। हम अपने से बाहर कितनी ही यात्राएं करें, जब भी हम जागेंगे, हम पायेंगे कि हम वहीं हैं, जहां थे। बाहर शरीर कहीं और हो सकता है, अहमदाबाद की जगह टोकियो में हो सकता है, लेकिन हम जहां हैं भीतर, हम टोकियो जाएं, उससे कोई फर्क नहीं पड़ेगा। हम वहीं होंगे, वहीं होंगे। चांद पर जाने से कोई फर्क नहीं पड़ेगा, आर्मस्ट्रांग भीतर की दुनिया में जहां पृथ्वी पर था चांद पर पहुंच कर भी वहीं होगा। चांद की यात्रा से भीतर कहीं कोई चाँद नहीं हो सकता। कितना भी हम पहुंचते हुए मालूम पड़े हम कहीं पहुंचते नहीं।
लाइफ इन वंडरलैंड में एक छोटी सी कहानी है। अलाइस नाम की लड़की परियों
के देश में पहुंच गई है। थक गई है। लंबी यात्रा है। जमीन से परियों के देश में पहुंची है। भूख लगी है। चारों तरफ देखती है, हरियाली से लदे वृक्ष हैं, फूलों से दूर एक घने वृक्ष की छाया में परियों की रानी खड़ी है। और उसके हाथ में मिठाइयों से भरे हुए थाल हैं, और वह अलाइस को बुला रही है कि आ, आ, उसकी आवाज सुनाई पड़ती है कि आ, उसका हाथ दिखाई पड़ता है कि आ, उसकी निमंत्रण देती आंखें दिखाई पड़ती हैं कि आ, और भूख, वह अलाइस दौड़ना शुरू कर देती है। पास ही है वह रानी, यह रही, अभी हम पहुंच जाएंगे। वह अलाइस दौड़ना शुरू करती है।

सूरज उग रहा है, अलाइस दौड़ रही है। दौड़ती चली गई है, दौड़ती चली गई है, दौड़ती चली गई है, छोटी बच्ची है, उसे यह भी खयाल नहीं आ रहा है कि मैं इतना दौड़ चुकी हूं। उतना छोटा सा फासला अभी तक पूरा न हुआ होगा। फिर धूप घनी हो गई है, सूरज सिर पे आ गया है, पसीना चूने लगा है, वह खड़े होकर देखती है, फासला तो उतना का उतना है, डिस्टेंस वहीं का वहीं है। रानी अभी भी खड़ी है, वह पुकारती चली जा रही है, आ, वह आंखें अब भी बुला रही हैं। भूख और भी बढ़ गई है, भोजन और भी दिखाई पड़ने लगा है, पर फासला उतना का उतना ही है। वह अलाइस चिल्ला कर कहती है कि ये कैसी दुनिया है, तुम्हारी आवाज सुनाई पड़ती है, तुम्हारी आंखें बुलाती हैं, तुम्हारा हाथ पुकारता है, भूख मुझे तेजी से है, मैं इतनी तेजी से दौड़ रही हूं लेकिन फासला कम नहीं होता, वह रानी कहती है बातों में, समय खराब मत कर। दौड़, जो बातों में समय खराब कर देते हैं वे चूक जाते हैं, तू दौड़, और तेजी से दौड़, और तेजी से दौड़। अगर नहीं पहुंचती तो कारण यह है कि तू बहुत धीमे दौड़ती है। अलाइस और तेजी से दौड़ती हैं, गणित तो यही है कि अगर नहीं पहुंचते हो तो तेजी से दौड़ो। नहीं पहुंच रहे हो तो एक ही मतलब है कि धीमे चल रहे हो। अलाइस और तेजी से दौड़ती है, जान लगा देती है, सांझ होने के करीब आ गई, सूरज उतरने लगा, अंधेरा उतरने के करीब है, वह खड़े होकर चिल्लाती है, दिन भर की धूप, पसीने से लथपथ, फासला उतना का उतना। वह चिल्ला कर पूछती है, यह कैसी दुनिया है तुम्हारी? सुबह से दौड़ते सांझ होने के करीब आ गई, सूरज ढलने लगा और मैं कहीं भी नहीं पहुंची हूं? फासला उतना का उतना है, यह कैसी अजीब दुनिया है तुम्हारी? ऐसी दुनिया मैंने नहीं देखी? यह दौड़ कैसी? यह रास्ता कैसा?
वह रानी कहती है, पागल, सब दुनिया ऐसी ही है, जिस पृथ्वी से तू आती है, वहां भी कोई रास्ता कहीं नहीं पहुंचाता सिर्फ लोग दौड़ते हैं, और जहां पहुंचना चाहते हैं, फासला उससे उतना ही बना रहता है, जितना दौड़ के प्रारंभ में था। कहीं कोई नहीं पहुंचता, दौड़ है, दौड़ है, और दौड़ ही पहुंचाती तो लगते हैं कि और तेजी से दौड़ें, तेजी से दौड़ नहीं पहुंचाती तो हम सोचते हैं पैरों में जान कम है। बैलगाड़ी को हवाई जहाज बनाओ, हवाई जहाज को जैट बनाओ, जैट को अंतरिक्षयान बनाओ, पहुंच नहीं पा रहे हैं। तो गति को बढ़ाओ स्पीड को बढ़ाओ, सारी दुनिया मे स्पीड बढ़ाने का और कोई कारण नहीं है, कारण यही है कि शक हो गया है आदमी को कि जहां पहुंचना है, वहां पहुंच नहीं पा रहे। गति कुछ कम है गति तेज होनी चाहिए, तो गति को तेज करो, तेज करो, इतना तेज करो कि हम पहुंच जाएं। लेकिन अलाइस भी बच्ची थी और हम भी बच्चे हैं। आदमी भी बच्चा है। आदमी प्रौढ़ नहीं है। धीमी और तेज दौड़ का सवाल नहीं है, जहां हमें पहुंचना है, वह जगह भीतर है। और जहां हम दौड़ रहे हैं वह जगह बाहर है। और जहां हमें पहुंचना है वहां हम जाना नहीं चाहते। और जहां हमें पहुंचना नहीं है, वहां हम दौड़े चले जाते हैं।
कोई भी आदमी किसकी खोज में है शायद ही हम कभी अपने से पूछते हैं कि मेरी खोज क्या है? शायद हम जरूरी सवाल पूछते ही नहीं, क्योंकि जरूरी सवाल चिंता पैदा करते हैं। हम बेकार की बातें पूछते हैं कि भगवान ने दुनिया बनाई कि नहीं, यह तो कौड़ी की बात है। इससे क्या मतलब। भगवान समझे, बनाने वाला समझे न समझे, मुझे और आपको क्या प्रयोजन? तो हम ऐसी बातें पूछते हैं, जिससे हमारी चिंता बनाई हो तो ठीक, न बनाई हो तो ठीक।
मैं एक गांव में ठहरा था। तो गांव के दो बूढ़े मेरे पास आए। एक जैन हैं,
एक हिंदू हैं। दोनों बूढ़े हैं, नहीं तो सत्तर के ऊपर उम्र है। उन दोनों ने मुझसे आकर कहा कि हम एक सवाल लेकर आए हैं, हम बीस साल से दोनों पड़ोसी हैं। और हम दोनों बीस साल से विवाद कर रहे हैं। हिंदू कहता है कि भगवान है बनाने वाला दुनिया का, और मैं कहता हूं, जैन ने कहा कि दुनिया को किसी ने नहीं बनाया दुनिया स्वयं जो है, अपने आप बन गई। हम इस पर विवाद करते चले आ रहे हैं, बीस साल हो गए कुछ निर्णय नहीं होता। आपसे हम पूछने आए हैं कि क्या सही है? मैंने उनसे पूछा कि अगर निर्णय हो जाए, निर्णय हो जाए कि दुनिया भगवान ने बनाई है फिर आप क्या करिएगा? या निर्णय हो जाए कि दुनिया भगवान ने नहीं बनाई फिर आप क्या करिएगा? उन्होंने कहा कि करना क्या है, निर्णय की बात है। आप निर्णय, मैंने उनसे पूछा आपकी जिंदगी से इसका क्या संबंध

है? भगवान ने बनाईर् या नहीं बनाई, आपकी जिंदगी से इसका क्या संबंध है? आपको क्या होगा इससे फर्क? आस्तिक भी वैसे ही जी रहा है, नास्तिक भी वैसे ही जी रहा है। हिंदू भी वैसे ही जी रहा है, मुसलमान भी वैसे ही जी रहा है, साफ बात है कि आस्तिक-नास्तिक की लड़ाई बेमानी बातों पर हो रही होगी। नहीं तो जिंदगी अलग होनी चाहिए, साफ बात है कि हिंदू-मुसलमान नासमझी की बातों पर लड़ रहे होंगे, नहीं तो जिंदगी अलग होनी चाहिए थी। हम सबकी जिंदगी एक सी है, और हमारे सबके सवाल अलग है, जवाब अलग हैं। हमारे सबके सवाल भी बेकार होंगे, जवाब भी बेकार होंगे। नहीं तो जिंदगी बदलनी चाहिए थी। शायद जिंदगी के लिए जो जरूरी है वह हम पूछते नहीं। हम वह पूछते हैं जो बेकार है, आराम कुर्सी पर टिक कर जिसकी बात की जा सकती है। जिसके लिए जिंदगी को बदलने की कोई जरूरत नहीं पड़ती।
एक बुनियादी सवाल आदमी अपने से नहीं पूछता कि मैं किसकी खोज में हूं?
हो सकता है सवाल कभी हमने पूछा भी हो। और जवाब भी हमें आ गया हो। किसी आदमी ने सोचा हो कि मैं धन की खोज में हूं। किसी आदमी ने सोचा हो कि मैं पद की खोज में हूं। किसी आदमी ने सोचा हो कि मैं यश खोज में हूं। सवाल आपको जवाब मिल गए होंगे, लेकिन ठीक से शायद नहीं पूछा, या बहुत गहरे नहीं पूछा, क्योंकि जब किसी आदमी को ये जवाब मिलता है कि मैं धन की खोज में हूंँ। तब तो उसे पूछना चाहिए कि धन की खोज में मैं किसलिए हूं? क्या धन ही अपने आप में अंत है। धन मिल जाएगा और बात समाप्त हो जाएगी। यश की खोज में मैं किसलिए हूं? अगर यश मिल जाएगा तो बात खत्म हो जाएगी। सारी दुनिया मेरे यश से भर जाए तो बात पूरी हो जाएगी। मेरी यात्रा समाप्त, फिर मुझे करने को कुछ नहीं रह जाएगा। सारी दुनिया का धन मुझे मिल जाए, तो मेरी यात्रा पूरी हो जाएगी? मैं फुलफिल हो जाऊंगा। हो जाएगी, आपके कारण मेरी स्थिति, नहीं अब सवाल शायद ऐसा उठेगा कि धन भी हम किसी और चीज के लिए चाहते हैं। और यश भी किसी और चीज के लिए चाह रहे हैं, शायद हमें लगता है कि भीतर निर्धन हैं, तो बाहर से धन इकट्ठा करके धनी हो जाएं। भीतर गरीबी लगती है, दीनता लगती है, तो धन के ढेर लगा दो। मिटा दो इस दीनता को, लेकिन दीनता अगर भीतर मालूम पड़ती है तो बाहर का धन भीतर की दीनता को कैसे मिटाएगा? इसलिए सबसे बड़ी दीनता उस दिन पता चलती है, जब धन के ढेर लग जाते हैं, और पास में खड़ा आदमी पाता है कि मैं उतना का उतना गरीब हूं। गरीब की एक तकलीफ है कि वह गरीब है, अमीर की एक और बड़ी तकलीफ है कि वह अमीर भी है और गरीब भी है।
कोई दस साल हुए, मैं जयपुर में मेहमान था। एक सभा में बोलता था। एक बूढ़ा आदमी मेरे बोलने के बाद उठा, कोई पिछहत्तर वर्ष उम्र होगी। हाथ कंपते हैं और उसने आकर मेरे पास, होंगे पांच-छह हजार रुपये के नोट, वह मेरे पास रख दिए और मुझे नमस्कार किया। मैंने उस बूढ़े आदमी को कहा कि आपका नमस्कार स्वीकार कर लेता हूं, रुपये की अभी जरूरत नहीं है, कभी पड़ सकती है, जब पड़ेगी जरूरत तब आपको निवेदन करूंगा। अभी रुपये रख लें। मुझे खयाल न था कि यह परिणाम होगा। आशा भी नहीं थी क्योंकि ऐसे आदमी मिलने मुश्किल होते हैं। उस आदमी को मैंने चुपचाप खड़े पाया, वह कुछ भी नहीं बोला तो मैंने ऊपर आंखें उठा कर देखा तो बूढ़े की आंख से आंसू बहे जा रहे हैं। मैं बहुत घबड़ाया, मैंने हिलाया कि क्या हो गया, आप दुखी हो गए, माफ करें, दुख मैंने दिया हो तो। उन्होंने कहाः दुख बहुत दे दिया, क्योंकि मैं बहुत गरीब आदमी हूं, मेरे पास सिवाय इन रुपयों के और कुछ भी देने को नहीं है। और कुछ देने का मन हो गया है आपको, और मेरे पास सिवाय रुपये के और कुछ है ही नहीं, इतना गरीब आदमी हूं। और जब कोई मेरे रुपये को इनकार कर देता है तो एकदम इंपोटेंट, एकदम नपुंसक हो जाता हूं। मेरे पास और कुछ भी नहीं। पत्नी को देने को मेरे पास प्रेम नहीं है, सिर्फ गहने दे सकता हूं। बेटों को देने के लिए मेरे पास ज्ञान नहीं है, सिर्फ रुपये दे सकता हूं। मित्रों को देने के लिए मेरे पास मित्रता नहीं है। मेरे पास कुछ भी नहीं है सिवाय इन रुपयों के। क्योंकि मैंने सारी जिंदगी रुपये में लगा दी और यह सोचा था जिंदगी की शुरुआत में कि रुपया सब कुछ है, और अब मैं जानता हूं कि रुपया इकट्ठा हो गया है, और मैं ना-कुछ हो गया हूं। ये रुपये उठा कर आप बाहर फेंक दें, लेकिन मुझे वापस मत करें। मेरे पास और कुछ भी नहीं है।

उस बूढ़े आदमी की आंखों में झांक कर मुझे पहली बार पता चला कि धन का संग्रह किसी आदमी को धनी नहीं बना सकता। वह तो भ्रम हमारा इसलिए नहीं टूटता क्योंकि कभी धन इकट्ठा ही नहीं हो पाता। इसलिए भ्रम जारी रहता है। या कभी इकट्ठा भी हो जाता है, तो हमसे आगे और लोग होते हैं, जिनके पास ज्यादा होता है, भ्रम जारी रहता है। किसी भी आदमी को सारी दुनिया की दौलत दे दो, वह उसी दिन संन्यासी होना चाहेगा, वह उसके बाद एक क्षण नहीं रुक सकता। वह तो दुर्भाग्य यह है कि दौलत सबको नहीं मिल पाती इसलिए आदमी दौलत से बंधा रह जाता है। धन नहीं मिल पाता इस लिए आदमी धन से बंधा रह जाता है। और गरीबी मैं मिटाने की बातें करता हूं, इसलिए नहीं कि गरीबी बहुत बुरी है, गरीबी मिटाने की बातें करता हूं क्योंकि गरीब को धन नहीं मिल पाता और धन की आकांक्षा सदा शेष रह जाती है। धन की आकांक्षा बड़ी बीमारी है। दुनिया से गरीबी मिट जाए और इतना धन मिल जाए लोगों को कि धन की व्यर्थता दिख जाए, तो धन की दौड़ कम हो जाए।
दुनिया जिस दिन समृद्ध होगी, उसी दिन धन की दौड़ मिटेगी, उससे पहले नहीं मिट सकती। ये ऐसी पागल दौड़ है, आपकी आंखों में देखना चाहता हूं मेरे लिए आदर। निश्चित ही, मेरे लिए स्वयं मेरे मन में आदर नहीं है। उसकी कमी मैं दूसरों के आदर से पूरी करना चाहता हूं। जिस आदमी के मन में अपने लिए आदर है वह दुनिया की दो कोड़ी फिकर नहीं करता, कि कौन उसके संबंध में क्या सेचता है? सोचता होगा उससे क्या प्रयोजन। जो आदमी अपने आदर से भरा हुआ है उसके मन में कुछ भी अपना आदर है, वह आदमी किसी के आदर की चिंता नहीं करता। जिस आदमी के मन में अपना थोड़ा मान है, वह न अपमान की फिकर करता है, न सम्मान की फिकर करता है, क्योंकि ये बेमानी बाते हैं, आपकी आंख मुझे क्या आदर दे सकती हैं? अगर मैं ही अपने को आदर नहीं दे पा रहा हूं। और हम सब अपने भीतर अनादरित हैं, हम सब अपनी ही आंखों के सामने अनादरित हैं। हमने अपने भीतर ऐसा कुछ भी तो नहीं पाया है, जो हमें आदर से भर दे अपने लिए। इसलिए हम दूसरे की आंख में आदर खोजते हुए घूम रहे हैं। कितनी ही आंखों से आदर इकट्ठा कर लो, क्या फर्क पड़ेगा? आदर इकट्ठा हो जाएगा, तालियों की गूंज बढ़ जाएगी। फूलमालाओं के ढेर लग जाएंगे, और वह जो आदमी आपकी बगल में खड़ा है, वह कैसे बदल जाएगा? वह तो वहीं का वहीं होगा जो कल था! जब तालियां नहीं बजी थीं, जब फूलमालाएं नहीं पड़ी थी, रथ नहीं सजे थे, और सिंहासनों पर बैठने का अवसर नहीं आया था।
सिंहासनों पर वही आदमी चढ़ता है न, जो सिंहासन के नीचे खड़ा था। आदमी कैसे बदल जाएगा? यश की कोई यात्रा कहां ले जाएगी, आदमी तो वहीं होगा जहां था? धन की यात्रा कहां ले जाएगी, आदमी तो वहीं होगा जहां था? लेकिन जहां हम हैं वहां हम झांकना नहीं चाहते। धन, यश, पद दौड़ रहे हैं, दौड़ रहे हैं। मेरे देखे से हम किसी और कारण से नहीं दौड़ रहे, लोग सोचते हैं कि हम किसी चीज को पाने के लिए दौड़ रहे हैं, मैं ऐसा नहीं सोचता। मैं सोचता हूं यहां कोई भीतर है, जिसे बुलाने के लिए दौड़ रहे हैं। वहां आगे पाने को कुछ भी नहीं, यहां पीछे बुलाने को कुछ है। जिसकी वजह से हम भाग रहे हैं, भाग रहे हैं। आदमी प्रेम में भूल जाना चाहता है, किसको भूल जाना चाहता है प्रेम में? अपने को भूल जाना चाहता है। शराब में किसको भूल जाना चाहता है? संगीत में किसको भूल जाना चाहता है? प्रार्थना में, पूजा में किसको भूल जाना चाहता है? अपने को भूल जाना चाहता है। अपने से दौड़ चल रही है। अपने को भूलाने की एक एस्केप, एक पलायन चल रहा है। एक बेहोशी चल रही है, कि कैसे अपने को भूल जाऊं। लेकिन ये अपने को भूलने की जरूरत क्या है? इतना डर क्या है अपने को भूलने का? यह अपने को भूलने की इतनी चेष्टा और दौड़ क्यों है? निश्चित ही भीतर कोई एबिस, कोई गहराई है, कोई ऐसी गहराई है कि प्राण कंपते हैं। पीछे लौट कर देखने की हिम्मत भी नहीं जुटती। तो हम बाहर ही बाहर देखते चले जाते हैं। दूसरे को देखने में समय गंवा देते हैं ताकि अपने को न देखना पड़े। दूसरे के साथ वक्त गुजार देते हैं ताकि अपने साथ वक्त न गुजारना पड़े। भूले रहते हैं, आकुपाइड उलझे रहते हैं, व्यस्त रहते हैं, ताकि झलक न मिल जाए अपनी।

एक फकीर था, गुरजिएफ। कुछ लोग उसके पास गए थे। और उससे कहने लगे कि हम स्वयं में झांकना चाहते हैं। कौन सी गहराइयों की बातें करते हैं, फकीर दुनिया में, हम उन गहराइयों में झांकना चाहते हैं? गुरजिएफ ने कहाः सच तय करके आए हो, तो आओ मेरे साथ लेकिन एक शर्त है। स्वयं में झांकना हो तो दूसरे को भूल जाना पड़ेगा। क्योंकि दूसरे को जब तक याद किए हो, तब तक स्वयं में उतरने का कोई उपाय नहीं। दूसरा खूंटी की तरह काम कर रहा है जिसको पकड़ कर हम अपने भीतर जाने से बचे हैं। और वहां आदमी लटक रहा है झाड़ियों को पकड़ कर। हम सब दूसरे को पकड़ कर लटक रहे हैं। पति-पत्नी को पकड़े हुए है, पत्नी- पति को पकड़े हुए है, बेटा-बाप को पकड़े हुए है, बाप-बेटे को, मित्र-मित्र को, नहीं कोई मिलता तो दुश्मन तक को आदमी पकड़ कर लटक जाता है। लेकिन कुछ मिलना चाहिए। भगवान, धर्म, प्रार्थना, पूजा कुछ भी मिल जाए, हम खूंटी पकड़ कर लटक जाना चाहते हैं। गुरजिएफ ने कहाः अगर स्वयं की गहराई जाननी है तो दूसरे को छोड़ना पड़ेगा। उन लोगों ने कहा कि हम राजी हैं। गुरजिएफ छोटे से दूर जंगल में उन्हें ले गया। तीस लोग थे और उनसे कहा कि तीन महीने इस मकान के भीतर ही रहना। तीस आदमी हैं, एक ही मकान के भीतर तीन महीने रहना है। और तीसों आदमियों से कहा, ध्यान रहे, सब इस तरह रहना जैसे तुम अकेले हो। दूसरे को रिकग्नाइज भी मत करना कि दूसरा है। इसकी स्वीकृति ही मत मानना मन में, दूसरा मौजूद है, इसको भूल जाओ। इस मकान में तीस लोग नहीं है, एक ही आदमी है तुम्हीं हो, वह बाकी उनतीस नहीं हैं। बाकी उनतीस को मिटा डालो। देखना भी मत दूसरे की तरफ, बोलना भी मत दूसरे से। अगर राह चलते वक्त दूसरा मिल जाए तो आंख से भी पहचानना मत, इशारा मत करना, अगर एक बैठा मिल जाए, तुम्हारा पैर लग जाए तो क्षमा मत मांगना, दूसरा यहां है ही नहीं। तुम तीस यहां ऐसे रहोगे जैसे एक-एक और सच्चाई यही है कि दुनिया में तीस नहीं, तीन अरब आदमी हैं। तो भी गहरे में एक, एक ही है। तीन अरब कहीं भी नहीं हैं।
यह सब गणित का भ्रम है। जहां एक और एक मिलके दो हो जाते हैं। तीन एक मिल कर तीन हो जाते हैं, और संख्या बढ़ती चली जाती है। यह सिर्फ गणित का भ्रम है, मैथेमेटिकल इलुजन है। यहां दुनिया में सिर्फ एक, एक ही है। और एक और एक और एक, इनका जोड़ तीन नहीं होते, तीन एक रह जाते हैं। सारी दुनिया में एक आदमी है, एक एक ही आदमी है, गणित का भ्रम है कि लगता है कि यहां पांच सौ आदमी हैं। पांच सौ आदमी नहीं हैं। एक-एक करके यहां पांच सौ एक हैं, पांच सौ नहीं हैं, पांच सौ का शब्द बिल्कुल झूठा है, गणित से पैदा हुआ भ्रम है। गणित सिर्फ भ्रम पैदा कर देता है। जो कि बड़ी साइंटिफिक बात समझी जाती है। वह भी भ्रम पैदा कर देता है।
गुरजिएफ ने कहा एक-एक हैं यहां तीस और एक-एक करके तुम जीना उनतीस को भूल जाओ। जाने दो, खूंटी मत बनाना, किसी को कहीं रुकना नहीं है, भीतर जाना है। और जिस आदमी ने दूसरे को जरा पहचानने की कोशिश की तो उसे मैं दरवाजे के बाहर कर दूंगा। पंद्रह दिन के भीतर तीस आदमी में तीन आदमी बचे। सत्ताइस आदमियों को दरवाजे के बाहर कर देना पड़ा। क्योंकि बड़ा मुश्किल था दूसरे को भूलना। इसमें दूसरा कारण नहीं था। बड़ा मुश्किल है, दूसरे को भूलना, इसमें दूसरा कारण नहीं है। आप ये मत सोचना कि वह आदमी इतना सुंदर है कि भूलता नहीं। इस भ्रम में पड़ना ही मत। कौन सुंदर है, कौन असुंदर है? कुछ खूंटियों को हम सुंदर कहते हैं, कुछ को असुंदर कहते हैं। जिस खूंटी पर हमको लटकना होता है, उसको सुंदर कहने लगते हैं। जिससे भागना होता है उसको असुंदर कहने लगते हैं। जिसको हम सुंदर कहते हैं, कोई उसको असुंदर कहता है, जिसको कोई असुंदर कहता है, कोई उसको सुंदर कहे चला जा रहा है।
मजनू को बुलाया था उसके गांव के राजा ने और कहा था, तू बिल्कुल पागल है, लैला तो बदशक्ल लड़की है, ऐसी साधारण लड़की के पीछे क्यों मरा जाता है? हम तुझे सुंदर लड़कियां खोज देते हैं। तेरे सा कीमती आदमी, सुंदर युवक एक साधारण लड़की के पीछे दीवाना क्यों है? हम तेरे लिए सुंदर लड़कियां बुला देते हैं। आ राजमहल में। मजनू खूब हंसने लगा। उसने राजा से कहा, तुम्हें लैला का कोई पता नहीं, राजा ने कहाः मैं उसे जानता हूं, भलीभांति परिचित हूं। मजनू ने कहाः न तुम जान सकते हो, न परिचित हो सकते हो, क्योंकि लैला

में सौंदर्य देखने के लिए मजनू की आंख चाहिए। इसलिए मुझे दिखाई पड़ता है। राजा को नहीं दिखाई पड़ता है। उसे दिखाई पड़ता है।
जहां हम भटकना चाहते हैं, जहां हम उलझना चाहते हैं, वहां हम सौंदर्य पैदा करते हैं। सौंदर्य कहीं है नहीं। हमारा इनपोजिशन है। इसलिए हम किसी भी चीज में सौंदर्य पैदा कर लेते हैं। पुराने जमाने में गुलाब का फूल सुंदर था। कभी सुना था किसी राजमहल में कैक्टस और धतूरा राजमहल में चले गए हों? यह बिल्कुल अस्पृश्य, शूद्र किस्म की चीजें थीं। कैक्टस शूद्र है पुराने जमाने का, कभी भी ब्राह्मणों की दुनिया में उसकी कोई जगह न थी। गुलाब के फूल की बात और है। राजमहलों में प्रवेश पाता था। लेकिन अब पचास वर्षों से कैक्टस ने गुलाब को हरा दिया। गुलाब आ गया महल के बाहर, कैक्टस आ गया महल के भीतर। आजकल जो सुसंस्कृत है कि उसके घर में कैक्टस होना ही चाहिए, नहीं तो वह शिक्षित नहीं है। क्या हो गया है, मामला क्या हो गया है? यह कैक्टस पहले क्यों होता था गांव के बाहर, खेत के किनारे पर जानवरों से बचाने का काम करता था। आज अचानक कैक्टस ने हमला बोल दिया। सब गुलाबों को बाहर कर दिया। कैक्टस भीतर आ गया। कांटा भी सुंदर हो गया, असल में गुलाब सूख गए। बहुत हो गए, अब गुलाब भी ऊबा देता है। ऊब पैदा हो गई, अब गुलाब अटकने के लिए काफी नहीं मालूम पड़ता। बोरियत लाने लगा है। अब कुछ और लाना पड़ेगा, इसलिए तो रोज फैशन बदल जाते हैं। कल जो बहुत सुंदर मालूम होता था वह आज बिल्कुल आउट ऑफ डेट हो जाता है। कुछ भी आउट ऑफ डेट हो सकता है, जो आज सुंदर है वह कल हो जाएगा। सुंदर हम कल्पित करते हैं। सुंदर कुछ भी नहीं है।
चीन में एक तरह की शक्ल खूबसूरत होती है, उसको यहां लाओ तो शादी करना मुश्किल है। अफ्रीका में एक तरह के ओंठ सुंदर होते हैं, उनको यहां ले आओ तो बहुत मुश्किल। उनको यहां ले आओ तो कोई भी चूमने को राजी न होगा। लेकिन अफ्रीका की लड़कियां ओंठों को खींच-खींच कर चौड़ा करती हैं। क्योंकि चौड़ा, जितना लटका ओंठ हो, उतना ही सुंदर है। यहां की लड़की का ओंठ बड़ा और मोटा हो, तो गई। उसकी जिंदगी में अब बड़ा मुश्किल हो गया। पतला ओंठ चाहिए। लेकिन कल अफ्रीका यहां आ सकता है। कैक्टस घर में घुस सकता है, दिक्कत क्या है? उसमें कोई कठिनाई नहीं है। सफेद रंग से लोग ऊब जा सकते हैं। काला रंग सुंदर हो सकता है। कभी सुंदर रहा भी है। कृष्ण को हमने गोरा नहीं बनाया। उस जमाने मे सांवला भी बहुत सुंदर था। कृष्ण को हमने सांवला बनाया है। सांवले शब्द में अर्थ में भी सौंदर्य छिपाया गया। शब्द में भी बड़ा सलोनापन है। गोरे में वह बात नहीं। गोरा बहुत बाद में आया। सांवला बहुत पहले सुंदर था। गया नहीं, कल लौट सकता है। हम खूंटियां बनाते हैं सुंदर की। दूसरा हमें रोकता नहीं।
गुरजिएफ ने कहाः दूसरा नहीं रोकता है तुम्हें; तुम रुकना चाहते हो इसलिए कोई भी बहाना खोजते हो कि दूसरे में रुक जाओ। दोस्ती मिल जाए तो दोस्ती, दुश्मनी मिल जाए तो दुश्मनी। लेकिन दूसरे में उलझे रहो, ताकि खुद में न जाना पड़े, बाहर हो जाओ। उसने सत्ताइस लोगों को बाहर कर दिया। तीन लोग रह गए हैं। उन तीन लोगों का जो अनुभव हुआ, वह समझने जैसा है। जैसे-जैसे दिन बीते और जैसे-जैसे वह दूसरे का भूलते चले गए। बाहर की दुनिया विदा होने लगी। क्योंकि ध्यान रहे, हम जिस चीज पर ध्यान देते हैं, वही मौजूद होता है। जिस चीज पर ध्यान नहीं देते, वह विदा हो जाता है। ध्यान मौजूदगी बनाता है। ध्यान गया, मौजूदगी विदा हो जाती है। आपको मैं ध्यान दूं, तो आप हैं मेरे लिए। और अगर आपसे मेरा ध्यान हट जाए तो आप गए। अभी मैं यहां बोल रहा हूं, एक आदमी भागा हुआ आए और आकर आपके कान में कहे कि घर में आग लग गई है। मैं गया, ये सब गए, आप भागे, ध्यान और जगह पहुंच गया, फिर यह सब गया, भूल गया यहां कौन था कौन नहीं था। यह सवाल नहीं रहा। यह बात खत्म हो गई। जैसे-जैसे उन्होंने दूसरे से ध्यान हटाया है, और कुछ नहीं किया सिर्फ दूसरे को भूलते चले गए। भूलते चले गए। बाहर की रेखा धूल होने लगी, बाहर के चित्र तस्वीरें होने लगे। अभी तो हमें बाहर की तस्वीरें भी असली मालूम पड़ती हैं।
जब फिल्म देखने कोई जाता है, वहां कुछ भी नहीं है, पर्दा बिल्कुल खाली है। पर्दे से खाली कोई ची.ज होती नहीं। पर्दे के खालीपन के लिए हजारों

रुपये खर्च करने पड़ते हैं। जितना कीमती पर्दा, उतना खाली, जितना खाली खरीदना हो, उतने रुपये खर्च करो। पचास हजार, लाख रुपये का भी पर्दा होता है, उसकी कीमत उसी मात्रा में बढ़ती है, जिस मात्रा में वह खाली होता है। उसमें रेखा भी नहीं होती तो वह खाली पर्दा है। और विद्युत का खेल है, धूप छाया का। और लोग रो रहे हैं, और लोग मरे जा रहे हैं। यहां तक पागल लोग हैं कि अगर सुंदर लड़की नाचती हो तो वह नीचे झांक-झांक कर देखने की कोशिश करते हैं कि पैर और थोड़े दिखाई पड़ जाएं। पर्दे पर भी। वहां कुछ भी नहीं है। वहां सिर्फ धूप-छाया का खेल। लेकिन आंसू बहे जा रहे हैं, लोगों के रूमाल गीले हो जाते हैं। सिनेमा-गृह के बाहर यदि लोगों के रूमाल जांचें जाएं तो पता चले कि कितने लोग रोए? वहां तो अंधेरा रहता है, बड़ी सुविधा रहती है। हालांकि आस-पास लोग देख लेते हैं कि किसी को पता तो नहीं चल रहा। फिर अपना रोने लगते हैं। नाटक में भी आदमी रोता है। चित्र को भी इतना असली समझ लेता है, क्यूं भूल जाते हैं आप कि यह फिल्म है। तीन घंटे अटेंशन की वजह से भूल जाते हैं। ध्यान रहे कि तीन घंटे एक ही बात पर ध्यान है, तो ध्यान जिस चीज पर भी अटक जाता है, वही सत्य हो जाती है। तीन घंटे एक ही चीज को निरंतर देखने का परिणाम ये है, फिल्म का परिणाम नहीं है यह। और आपने खयाल नहीं किया होगा। तीन घंटे पलक भी नहीं झपकी है, फिल्म देखने में। इसीलिए तो आंख थकी हुई मालूम पड़ती है, बाहर आके और रात नींद भी मुश्किल हो जाती। तीन घंटे आंख की पलक भी नहीं झपकती। ध्यान पूरा अटक जाता है, त्राटक लग जाता है फिल्म में। पुराने संन्यासियों को बड़ी मेहनत करनी पड़ती है। फिल्म त्राटक का काम कर रहीं है। आंखें रुक गई हैं, पलकें झपकी नहीं हैं, क्योंकि पता है जरा पलक झप कर और क्या चूक जाए? हालांकि चूकने को कुछ भी नहीं सिर्फ खाली पर्दा है। लेकिन चूकने का डर। फिल्म इतनी रीयल, वास्तविक मालूम पड़ने लगती है, क्यों? तीन घंटे निरंतर अटेंशन, ध्यान, सत्यता दे देता है। जहां कुछ भी नहीं है, वहां सत्य खड़ा हो जाता है। और जहां सत्य है, गलत नहीं है, बाहर दुनिया है। एक एक्चुअल वास्तविक दुनिया बाहर है। आप वहां हो। मैं यहां हूं। लेकिन अगर ध्यान खिंच आए वापस तो बाहर की दुनिया खाली पर्दा हो जाती है। वहां कोई नहीं रह जाता। सवाल ध्यान रहे, कि ध्यान जहां है, वहीं सत्य बनना शुरू हो जाता है। बिल्कुल असत्य पर भी सत्य निर्मित होता है ध्यान देने से। और अगर ध्यान सतत हो तो आदमी किसी भी तरह की कल्पनाओं को सत्य कर लेता है। भगवान वगैरह के जो दर्शन होते हैं, वह इसी ढंग से होते हैं। कल्पना पर निरंतर ध्यान देने से।
एक आदमी दिन-रात रो रहा है कि प्राण जा रहे हैं, दर्शन दो, हे मुरली मनोहर, दर्शन दो। अब मुरली मनोहर के बस में नहीं है दर्शन देना किसी को। वे हैं भी नहीं कहीं, सिर्फ एक तस्वीर है, जो इस चिल्लाने वाले के मन में बैठी है। जितना यह चिल्लाएगा, जितना यह रोएगा, जितना आंसुओं को झुकाएगा, ध्यान केंद्रित करेगा, मुरली मनोहर प्रकट होने शुरू हो जाएंगे। वे खड़े हो जाएंगे। मुरली बजने लगेगी, नाच शुरू हो जाएगा। यह आदमी के ध्यान का फल है। यह एक तरह का मेंटल क्रिएशन है। यह एक तरह का मनोसृजन है। हमारे जो दुनिया चारों तरफ है, वह तथ्य की है। जब असत्य, झूठ, असत्य, कल्पना ध्यान देने से सत्य हो जाती है, तो ध्यान हटा लेने से तथ्य भी माया हो जाते हैं। ध्यान की बात है, सारा सवाल ध्यान का है, अटेंशन कहां है?
एक लड़का हॉकी खेल रहा है। पैर में चोट लग गई है, खून बह रहा है। लेकिन उसे पता नहीं है। अब पैर में चोट लगी है, तो पता नहीं चलेगा? पता तो चला होगा, पैर ने खबर दे दी होगी, लेकिन जिस ध्यान को खबर मिलनी चाहिए, वह अभी कहीं और है। तो खबर अभी घंटी बजाती रहेगी। जैसे टेलीफोन की घंटी बजती रहती है और मालिक कहीं और है। तो पैर खबर देता रहेगा, घंटी बजती रहेगी लेकिन अटेंशन मौजूद नहीं है। ध्यान अभी खेल में तल्लीन है। मालिक मौजूद नहीं है मस्तिष्क में। वह कहीं और गया है। तो पैर घंटी बजाता रहेगा कि चोट लग गई, खून बह रहा है, चोट लग गई खून बह रहा है। लेकिन उस आदमी को कुछ पता नहीं। सब को दिखाई पड़ेगा कि खेल देखने वालों को कि लड़के के पैर में चोट है, खून नीचे गिर रहा है। बूंद टपक रही हैं। खेल बंद हुआ ध्यान वापस लौटा और वह लड़का पैर पकड़ कर बैठ गया। और कह रहा है बहुत चोट लग गई, बहुत दर्द हो रहा है, उससे

पूछो कि चोट बहुत देर से लगी है, दर्द भी बहुत देर से हो रहा है, तुम कहां थे? वह कहीं और था, वह खेल में था, ध्यान जहां है, वहां जगत शुरू हो जाता है। ध्यान जहां से सिमट आता है वहां से जगत विलीन हो जाता है। हम बाहर ध्यान दे रहे हैं तो बाहर जगत बहुत वास्तविक हो गया है। और भीतर हमने ध्यान नहीं दिया, तो भीतर सब शून्य है, सब खाली हो गया है। वहां कुछ भी नहीं रह गया है। तीन लोग जो बच गए उस फकीर के जंगल में वे भूलते चले गए, रोज ध्यान छोड़ते चले गए, उन्होंने फिकर छोड़ी बाहर की। उन्होंने बाहर की तरफ रस झोड़ा। उन्होंने बाहर कुछ है इसका विचार छोड़ा, वे बाहर से छूटते गए, छूटते गए, छूटते गए। तीन महीने पूरे हो गए। तीन महीने बाद उनमें से एक ने लिखा कि आश्चर्य, जिस क्षण बाहर से ध्यान गया, जिस क्षण, उसी क्षण भीतर उस गहराई में खड़े हो गए, जिसका हमें कोई पता ही नहीं था। बाहर से और भीतर जाने में एक क्षण का ही अंतराल नहीं होता। बाहर से ध्यान गया और आदमी भीतर खड़ा हो गया। और भीतर जाने के लिए कुछ भी नहीं करना पड़ता। सिर्फ बाहर होना छोड़ना पड़ता है। सिर्फ बाहर होना छोड़ने की बात है। और हम सब बाहर हैं। बाहर हैं इसका मतलब। इसका मतलब ध्यान बाहर है। और जहां हमारा ध्यान है, तो वहां हम एक जीवन निर्मित कर लेते हैं। एक नाता निर्मित कर लेते हैं, हमारे ध्यान में कुछ बातें निर्मित की हैं, वह समझ लेनी जरूरी हैं। एक तो हमने वस्तुओं पर बहुत ज्यादा ध्यान दिया है, इसलिए वस्तुओं का एक जगत, एक ममत्व का हमारा एक घेरा निर्मित हो गया है। मेरा मकान, मेरा मकान का क्या मतलब है? जिस मकान पर ध्यान दिया है, वह मेरा हो गया। ध्यान देने की कई तरकीबें हैं, पैसा खर्च करो, ध्यान चला जाएगा। वह सब ध्यान देने की तरकीबें हैं।
मैंने सुना है कि एक आदमी के मकान में आग लग गई, वह छाती पीट कर रो रहा है। और मरा जा रहा है। मकान चला जा रहा है, लाखों रुपये खर्च किए थे वह सब, वे व्यर्थ हो गए हैं, पास में कोई आदमी उसको आके कहता है कान में कि घबड़ाओ मत, मैंने सुना है कि तुम्हारे लड़के ने कल मकान बेच दिया है, और पैसे मिल गए हैं। बस, सब खत्म हो गया। रोना विदा हो गया। एक क्षण में ऐसा नहीं कि उसने कहा, ठहरो, ठहरते-ठहरते मैं रोने को रोकूंगा, ऐसा उसने नहीं कहा था। बात खत्म हो गई तो वह हंसने लगा और उसने कहा क्या कहते हो? क्या मकान बिक गया? क्या रुपये मिल गए? वह रोना ऐसे विदा हो गया जैसे धूप के निकलने पर ओस के कण विलीन हो जाते हैं। जैसे दिया जलने पर अंधेरा नहीं होता। वह रोना गया। वह आदमी हंसने लगा है। मकान अब भी जल रहा है। वही मकान अब भी जला जा रहा है, और जोर से जला जा रहा है क्योंकि आग और पकड़ गई है। लेकिन वह आदमी हंसने लगा है। और तभी उसका लड़का भागा हुआ आया। और उसने कहा कि आप हंस रहे हैं, क्या हो गया है आपको? मकान जल रहा है। उसने कहा, मैंने सुना है कि रुपये मिल गए। उसने कहा कि वायदा तो हो गया था लेकिन रुपये नहीं मिले और अब वह आदमी बदल रहा है रुपया देने में। फिर रोना वापस लौट आया है। वह आदमी फिर छाती पीट रहा है। हमको यह नाटक दिखेगा लेकिन हम सब यही नाटक कर रहे हैं। क्या हो क्या रहा है इस आदमी को? ध्यान खिंच गया है, मेरा नहीं, तो बात खत्म हो गई। फिर ध्यान लौट आया है। जितना बड़ा हमारा मेरे का घेरा होता है, उतना हमारा बाहर ध्यान होगा। जो आदमी धीरे-धीरे जानने की कोशिश करता है। मेरा नहीं है, मेरा नहीं है, उसका ध्यान भीतर लौटना शुरू होता है। ममत्व ध्यान को बाहर रोकने के लिए, मेरा होना, मकान मेरा है, तो फिर मकान ध्यान में रहेगा, ऐसा नहीं है कि आप मकान में रहते हैं, ज्यादातर यही है कि मकान आप में रहता है। इस भूल में मत रहना कि हम मकान के भीतर रहते हैं, मकान हमारे भीतर रहता है।
मैंने सुना है कि एक सम्राट था, इब्राहिम। वह एक दिन अपने राजमहल में बैठा है, अपने सिंहासन पर, और एक आदमी बाहर द्वारपाल से आकर जिद करने लगा है कि मुझे भीतर जाने दो। वह द्वारपाल कह रहा है कि आप पागल हो गए हैं, भीतर किसलिए जाने दें। वह आदमी कहता है कि इस सराय में मुझे ठहरना है। वह द्वारपाल कहता है, क्षमा करिए यह सराय नहीं है, यह सम्राट का निवास है। वह द्वारपाल को धक्का देकर भीतर आ जाता है, सम्राट भी हैरान है उसने बात सुनी है। आवाज सुन ली है। वह कहता है कि तुम पागल तो नहीं हो, यह सम्राट का निवास है, यह मेरा निवास स्थान है, यह कोई सराय नहीं है।

वह फकीर फिर भी भीतर घुसा चला आया। भीतर आया तो पता चला कि फकीर है, संन्यासी है। वह खूब हंस रहा है। सम्राट ने पूछाः हंसते क्यों हो? बात क्या है? तो वह पूछने लगा कि इसे तुम निवास कहते हो, हम तो सराय समझ कर इसमें पहले भी ठहरे हैं। उस आदमी ने कहाः कब ठहरे? उसने कहा कि कुछ जमाना हुआ है। सिंहासन पर दूसरा आदमी हमने देखा था। उस सम्राट ने कहा कि वे मेरे पिता थे, अब वे गुजर गए, दिवंगत हो गए। तो संन्यासी ने कहाः लेकिन वह भी कहते थे कि ये मेरा निवास स्थान है। निवास स्थान यहीं का यहीं है वे कहां चले गए? अगर उनके बिना निवास स्थान हो सकता है उनका, तो उनका नहीं रहा होगा, उनके साथ चला जाता। उसके पहले भी मैं आया हूं, तब भी दूसरा राजा था, तो उस सम्राट ने कहा कि वे मेरे पिता के पिता थे, वे भी विदा हो गए। तो उस फकीर ने कहा कि फिर मैं ठहर जाऊं इस सराय में? क्योंकि इसमें कई लोग ठहर चुके और विदा हो चुके। हम भी ठहरेंगे और विदा हो जाएंगे। और तुम भी ठहरोगे और विदा हो जाओगे। तो फर्क क्या है? हो सकता है अगली बार मैं आऊं तो फिर कोई दूसरा आदमी बैठा मिले और वह कहे कि हमारे पिताजी दिवंगत हो गए। तो यह मकान में निवासी बदलते चले जाते हैं, इसलिए मैं इसको सराय कहता हूं, ठहर जाऊं? वह इब्राहिम मुश्किल में पड़ गया। उसने उस फकीर को कहा कि तुम यहां ठहरो, लेकिन मैं बाहर जाता हूं, क्योंकि मैं इस खयाल में ही ठहरा था कि यह निवास स्थान है। अगर यह सराय है तो सम्हालो, जिसको सम्हालना हो। फकीर हंसने लगा, फकीर तो वहां ठहर गया, इब्राहिम उस मकान से बाहर हो गया।
पर इतने समझदार लोग बहुत कम होते हैं। हम तो मेरे में, सारा ध्यान हमारा केंद्रित है। मेरी पत्नी, मेरा बेटा, मेरा धन, मेरा मकान। कौन किसकी पत्नी है? कौन किसका पति है? नहीं छोटे बच्चों पर हम हंसते हैं कि गुड्डे- गुड्डियों का विवाह रचाते हैं। छोटे बच्चे, पूरा इंतजाम करते हैं। सात चक्कर लगवाते हैं गुड्डा-गुड्डियों को, जुलूस भी निकालते हैं, बैंड-बाजा भी बजाते हैं। जितनी हैसियत होती है उसी हिसाब से इंतजाम पूरा कर लेते हैं। हम हंसते हैं, और कहते हैं कि क्यों गुड्डा-गुड्डियों के खेल से खेल रहे हो? लेकिन अगर उन बच्चों को पता चल जाए कि हमने भी थोड़े बड़े पैमाने पर गुड्डे-गुड्डियों के खेल बना रखे हैं। एक औरत से एक आदमी कपड़ा बांध कर सात चक्कर लगा लेते हैं और यह मेरी पत्नी हो गई, वह मेरा पति हो गया। सात चक्कर लगाने से? दो घंटे, सात चक्कर लगाओगे तो मामला और हो जाएगा? हो जाना चाहिए, क्योंकि उसी से निर्मित हुआ है, उसी के लगा लेने से खुल जाएगा, रिवर्स गेयर तो हर चीज में होता ही है। लेकिन जो ये मेरी पत्नी, मेरा पति, मेरा बेटा, कौन किसका बेटा? किसने किसको बनाया है?
कोई किसी वैज्ञानिक से पूछता था कि मुर्गी क्या है? उस वैज्ञानिक ने बहुत बढ़िया बात कही। वह मुर्गियों के संबंध में बड़ी खोज-बीन करता था। उसने कहाः मैंने बहुत दिनों से अध्ययन किया, तो जहां तक मैं समझ पाया हूं कि मुर्गी क्या है, तुम पूछते हो तो मैं तुमसे कहना चाहता हूं, मुर्गी अंडे की तरकीब है और अंडे पैदा करने की। मुर्गी जो है वह अंडे की तरकीब है और अंडे पैदा करने की।

नानक दुखिया सब संसार
चौथा प्रवचन

सामूहिक जीवन
(Chapter 4 obviously is incompleted: starts abruptly and ends abruptly.
It as small part of the discourse, major part of which is lost. Its audio is available - only 11 minutes duration.)

अब अकारण यह खयाल बहुत लोगों को है--एक मोहल्ला है, उसमें दो सौ परिवार रहते हैं, तो दो सौ किचिन बनाए हुए हैं, यह निहायत मिस्टेक है। दो सौ परिवारों का तो दो किचिन से भी काम चल सकता है। और दो सौ स्त्रियां पूरी जिंदगी उसमें खराब कर रही हैं। जो कि दस या पांच स्त्रियां अगर कम्यूनल किचिन हो, सामूहिक किचिन हो, तो पांच स्त्रियां, दस स्त्रियां सम्हाल लेंगी। और एक सौ नब्बे स्त्रियों का श्रम बचेगा। उन्हें किसी दूसरी दिशा में उपयोग में लाया जा सकता है। लेकिन आधी जिंदगी, हमारा आधा टुकड़ा स्त्रियों का तो सिर्फ खाना बनाने, बर्तन साफ करने और उसमें व्यय होता है। क्योंकि हर आदमी ने घर-घर प्राइवेट इंतजाम करने की सोची है। और प्राइवेट इंतजाम करना महंगा है बहुत। अगर दो सौ परिवार का इकट्ठा हो सके इंतजाम तो बहुत सस्ता होगा। और दो सौ परिवार का अलग-अलग होगा तो बहुत महंगा होने वाला है।

आज से कोई हजार साल पहले, पांच सौ साल पहले एक-एक घर में आदमी अपने बच्चे के पढ़ने का इंतजाम करता था, वह बहुत महंगा था। कभी भी सारी दुनिया शिक्षित नहीं हो सकती थी उस ढंग से। क्योंकि गरीब आदमी तो इंतजाम कर ही नहीं सकता था। जो आदमी एक शिक्षक को घर पर लगा सके, दो-चार शिक्षकों को घर पर ट्यूशन लगवा सके, तो राजाओं के लड़के, पैसे वालों के लड़के पढ़ सकते थे, गरीब का लड़का कैसे पढ़ सकता था? वह तो कम्यूनल टीचिंग शुरू हो गई। एक स्कूल में सारे गांव के बच्चे पढ़ने लगे, इसलिए संभव हुआ कि गरीब का बच्चा भी पढ़ ले। जिस दिन कम्यूनल किचिन शुरू होगा उस दिन यह संभव होगा कि सबका पेट भर जाए। क्योंकि वह बहुत सस्ता पड़ सकता है। और रहने का भी, वह रहने की भी हमारी व्यवस्था अत्यंत अवैज्ञानिक है। नगर जो हैं वे भी अवैज्ञानिक हैं। उनकी बनावट का ढंग जो है वह व्यर्थ है, समय को जाया करवाने वाला है, परेशान करने वाला है। तो यह इस तरह की कल्पनाओं पर काफी जोर दिया जाना, सोचा जाना चाहिए। नगर की व्यवस्था ऐसी तो होनी ही चाहिए कि कहीं से भी कोई चले वह कम से कम समय में कहीं भी पहुंच सके।
अब आज की वैज्ञानिक दुनिया में यह संभव है। उसकी प्लानिंग पर सारी बात निर्भर करेगी। और अगर सामूहिक इंतजाम किया जा सके तो बहुत बड़े परिवर्तन होंगे। अब बच्चों के लिए भी अब हमें कोई दिक्कत नहीं है बच्चों को स्कूल में पढ़ाने में। लेकिन आज हमारी कल्पना के बाहर है यह बात कि बच्चे सामूहिक रूप से बड़े भी हों। अभी हमारी कल्पना के बाहर है। सामूहिक रूप से शिक्षा देने लगे तो सबको शिक्षा मिल रही है। लेकिन जिस दिन बच्चे सामूहिक रूप से बड़े हों, उस दिन सैकड़ों तरह की बीमारियों से उन्हें बचाया जा सकता है। जो कि अलग-अलग पाल कर नहीं बचा सकते, क्योंकि उनके मां-बाप उनते शिक्षित नहीं है। सामूहिक रूप से बच्चों को अच्छे से अच्छे डाक्टर का इंतजाम हो सकता है जो कि अलग-अलग इंतजाम करना असंभव है।
और बहुत से मनोवैज्ञानिक प्रश्न हैं कि जब हम बच्चों को अपने-अपने घरों में पालते हैं, तो जाने-अनजाने परिवार उनका केंद्र बन जाता है जीवन का। राष्ट्र केंद्र नहीं बनता, न समाज केंद्र बनता है। उन्हें चिंता इस बात की होती है कि मेरे पिता को अगर सुविधा मिल जाएं तो पर्याप्त है, लेकिन पड़ोस का पिता भी उतना ही बूढ़ा हो गया है, उसको भी कोई अलग सुविधा मिलती है, इसका सवाल नहीं। मेरी मां को अच्छा कपड़ा मिल जाए ठीक है, लेकिन पड़ोसी की मां भी बूढ़ी हो रही है, उसको भी जरूरत है सहारे की, सहयोग की, कपड़े की, रोटी की, वह उसकी कोई चिंता नहीं। असल में जो कांशसनेस है हमारी वह फैमिली

सेंटर्ड हो जाती है। और यह हम तभी तोड़ पाएंगे जब हम बच्चों को सामूहिक ढंग से बड़ा करें। तो उनको जो भाव पैदा हो वह अगर पिता का भाव पैदा हो तो नगर के सब वृद्ध लोगों के प्रति पैदा हो। अगर मां का भाव पैदा हो तो नगर की सब वृद्धाओं के प्रति पैदा हो। अगर बहन का भाव पैदा हो तो नगर की सब लड़कियों के लिए पैदा हो। अगर भाई का भाव पैदा हो तो नगर के सारे... लेकिन वह तभी होगा, अभी भी कैसे रहा है। अभी भी अगर हम पचास साल पीछे लौट जाएं तो संयुक्त परिवार था। तो उसमें काकाओं के, पांच काकाओं के लड़के थे। खुद के भाई थे, काकाओं के लड़के थे, लड़कियां थी। उन सबके बीच एक भाई-चारे का भाव है, वह फैमिली यूनिट और छोटा हो गया। तो आज काका के लड़के के साथ वह संबंध नहीं है जो आज से पचास साल पहले था, क्योंकि बच्चे उसके साथ बड़े होते थे। उसे पता ही नहीं था कि कौन-कौन हैं, वे सब हमारे हैं। अगर आज नहीं कल कम्यूनल लिविंग पर जोर हो; एक हिस्से के लोग हजार परिवार अपने बच्चों को इकट्ठा पालें और इकट्ठा बड़े होने दें, तो फैमिली सेंटर्ड जो बीमारी है हमारे दिमाग की, वह खत्म हो जाएगी। और तभी समाज की पूरी धारणा पैदा हो सकती है, नहीं तो समाज की धारणा पैदा नहीं हो सकती। अभी समाज सिर्फ बातचीत है, समाज की धारणा तभी पैदा हो सकती है जब समाज के प्रत्येक वृद्ध के प्रति मेरे मन में वह भाव हो जो मेरा अपने पिता के प्रति है। और प्रत्येक नये बच्चे के प्रति पूरे समाज का वह भाव हो जो किसी का अपने बच्चे के प्रति। यह संभावना में, यह कल्पना में कोई दो-तीन सौ वर्षों से अनेक लोगों के दिमाग में वह बात चलती है, लेकिन वह पूरी नहीं हो पाती, क्योंकि उसके पीछे जो वैचारिक पृष्ठभूमि चाहिए, और वह जो दृष्टि चाहिए कि रोग कहां पैदा हो रहा है? जैसा कल ही मैं बात कर रहा था। मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि अगर एक बच्चे
को एक ही स्त्री के पास पाला जाए और आमतौर से पाला जाता है, अपनी मां के पास ही बच्चा बड़ा होगा। तो वह बचपन से एक ही स्त्री को जानता है। एक ही स्त्री के शरीर को जानता है। एक ही स्त्री के प्रेम को जानता है। बड़ा होते-होते प्रेम और यह एक स्त्री की प्रतिमा, दोनों उसके चित्त में संयुक्त हो जाते हैं। और मनोवैज्ञानिक कहते हैं उसके अचेतन के समय अब वह जीवन भर जिस पत्नी की तलाश कर रहा है, वह वैसी होनी चाहिए, जैसी उसकी मां है। और यह होना असंभव है, क्योंकि उसकी मां जैसी कोई दूसरी स्त्री इस पृथ्वी पर नहीं है। तो जो भी पत्नी उसे मिलेगी, उसी पत्नी से कलह शुरू होने वाली है। क्योंकि उसकी अपेक्षा की जो स्त्री है, एक ही स्त्री उसने जानी वह उसके दिमाग में फिक्स्ड इमेज, उस स्त्री की, वह उसी स्त्री की तलाश कर रहा है। और वह स्त्री मिलनी नहीं है। और इसलिए पति और पत्नी सारी दुनिया में कष्ट उठा रहे हैं। और उनके कष्टों का बुनियादी कारण यह है कि बच्चों को एक स्त्री के पास पाला गया है। और जब तक हम बच्चों को एक स्त्री के पास पालेंगे, तब तक स्त्री और पुरूष के बीच अच्छे संबंध पैदा नहीं करवा सकते। क्योंकि बच्चे की मांग एक स्त्री की निश्चित हो गई है। वही स्त्री उसे तृप्ति दे सकती है, उसकी मां और मां उसकी पत्नी नहीं बन सकती। और मां जैसी स्त्री खोजी कहां से जाए? उसे भी पता नहीं है कि वह अपनी पत्नी से मां की अपेक्षाएं कर रहा है। और मां की अपेक्षा में बड़ी गहरे खतरनाक बातें हैं।
बच्चा पैदा हुआ तो बच्चा इतना छोटा होता है कि उससे तो प्रेम मांगा नहीं जा सकता, सिर्फ दिया जा सकता है। तो मां सिर्फ प्रेम देती है, बच्चा प्रेम दे, सवाल ही नहीं उठता कभी। जब वह बड़ा होके शादी करता है तो अपनी पत्नी से भी प्रेम मांगता है, देता-वेता नहीं है। पत्नी भी प्रेम मांगती है, और दो प्रेम मांगने वाले जहां इकट्ठे हो जाएं, वहां कलह होनी निश्चित है। तो सवाल तो है देने वालों का, क्योंकि अगर मैं भी मांगू और आप भी मांगें और दोनों में से कोईर् देने को राजी नहीं है, मांगने को दोनों तैयार हैं, तो कलह होनी निश्चित है। तो मां के पास बच्चे को पालना बड़ा खतरनाक है। अब इसका मतलब यह हुआ कि हमें कोई और दूसरा इंतजाम करना होगा, नहीं तो पति और पत्नी का जीवन कभी सुखी होने वाला है ही नहीं। वह हो ही नहीं सकता, सौ में एकाध घटना घट जाए संयोगिक, तो वह बिल्कुल दूसरी बात है, उससे कोई नियम नहीं बनता। लेकिन निन्यानबे मौकों पर पति-पत्नी का जीवन

कलह का, संघर्ष का, परेशानी। और मजा यह है कि और दोनों को समझ में भी नहीं आता कि क्या परेशानी है, क्या कठिनाई हो रही है? तो यह तो ठीक है।
इधर मेरी दृष्टि इस बाबत है, और मैं ऐसा ही सोचता हूं अभी वह, इसलिए मैंने आपको इजरायल का नाम लिया। वहां उन्होंने थोड़ी फिकर की है इस बात के लिए, छोट बच्चों को वे नर्सरीज में पाल रहे हैं। और नर्सरीज में एक नर्स को तीन महीने से ज्यादा किसी बच्चे की देख-रेख में नहीं रहने देते। हर तीन महीने में नर्स बदल जाएगी। और वह क्रम बदलता रहेगा, और सिर्फ इसलिए कि बच्चे के दिमाग में सिर्फ एक स्त्री की इमेज तय न हो जाए। उसको बड़े होते- होते दस, पचास-सौ स्त्रियों का प्रेम मिलना चाहिए। यानी उसके मन में स्त्री के प्रति प्रेम तो पैदा हो लेकिन किसी खास स्त्री के प्रति प्रेम का बंधन न हो जाए। लिक्विड इमेज चाहिए ताकि जब वह शादी करे तो वह जो इसके मन में धुंधला सा चित्र था, वह इस पत्नी को घेर ले और इस पत्नी से तय हो जाए। लेकिन मां के पास पले हुए बच्चे के मन में बहुत सुनिश्चित धारणा स्त्री की बनती है, वह बड़ी खतरनाक है। यह जो हमारी, जो जीवन की, चाहे परिवार की, चाहे दांपत्य की जितनी भी उलझनें हैं, उन उलझनों को बहुत रूपों में जब तक वैज्ञानिक ढंग से हल करने की कोई कोशिश नहीं करते, अब जैसे जो हम खाना खा रहे हैं वह अवैज्ञानिक है। जब कि वह वैज्ञानिक हो सकता है, और उससे हम कितनी तकलीफें झेल रहे हैं, जिनका कोई हिसाब नहीं है। लेकिन उनको कोई विचार करने को भी राजी नहीं है। शरीर में अगर कोई एक तत्व कम हो जाए, तो सारे व्यक्तित्व में जिसको आप आत्मा कहते हैं, उस तक में परिणाम होने वाले हैं।
अभी वह पावलफ ने रूस में कुछ प्रयोग किए। एक कुत्ता है, घर में बहुत भौंकता है, लड़ने में तेज है, जानदार है, उसकी वह एक ग्रंथि काट लेता है। वह कुत्ता वही है, सब वही है, लेकिन उसकी जान गई। एक ग्रंथि उसकी अलग कट गई।

नानक दुखिया सब संसार
पांचवां प्रवचन

अंतर की खोज

मेरे प्रिय आत्मन्!
एक बहुत बड़ी राजधानी में बड़े राजपथ पर हजारों लोगों की भीड़ थी। एक बड़े महल में आग लग गई थी। और महल जलने की आखिरी हालत में था। उसकी लपटों ने सारे नगर के लोगों को उस महल के आस-पास इकट्ठा कर दिया था। महल का मालिक द्वार के पास खड़ा है, करीब-करीब बेहोश, सैकड़ों लोग मकान के भीतर से सामान ला रहे हैं। अंततः सामान लाने वाले लोगों ने मकान के मालिक को पूछाः और कुछ तो भीतर नहीं रह गया है? अन्यथा हम एक बार और जा सकते हैं। लपटें आखिरी जगह पहुंच गई हैं। दुबारा मकान के भीतर जाना संभव नहीं होगा। तिजोरियां निकल आई हैं। कीमती कागजात निकल आएं हैं। फर्नीचर निकल आया है। छोटी-छोटी चीजें भी निकल आइंर् हैं।
उस भवनपति ने कहाः मुझे कुछ भी याद नहीं पड़ता, मेरा हुक्म है, तुम जाओ
और जो और बचा सको बचा लो।
वे लोग भीतर गए और छाती पीटते हुए, रोते हुए बाहर आए। साथ में एक लाश लेकर आए। उस भवनपति का इकलौता बेटा भीतर ही सोता रह गया था। वे सब सामान बचाने में लग गए और उस सामान का असली मालिक भीतर ही रह गया। वह जल गया और मर गया।
उस हजारों लागों की भीड़ में एक संन्यासी भी खड़ा था। उस संन्यासी ने अपनी डायरी में लिखा है कि जैसा आज इस मकान में हुआ है वैसा आज सभी मकानों में हो रहा है। मकान में रहने वाला तो मरता जा रहा है, मकान का सामान बचाया जा रहा है। सारी जमीन पर ऐसा हो रहा है, सामान बढ़ रहा है और आदमी मर रहा है। सामान बच रहा है और आदमीयत समाप्त हो रही है। संपत्ति बढ़ रही है और संपत्ति को बढ़ाने वाला व्यक्ति नष्ट होता चला जा रहा है।
अभी एक मित्र ने कहा कि हम चांद पर पहुंच रहे हैं। चांद पर हम जरूर पहुंच गए हैं, लेकिन आदमी जितने दूर पहुंचता जा रहा है उतना ही स्वयं से दूर निकलता जा रहा है। जमीन पर ही हम अपने से बहुत दूर निकल गए हैं। और चांद पर अगर पहुंच गए हैं, तो यह फासला अपने से और दूर ले जाने वाला, होने वाला है। सब कुछ है आज पृथ्वी पर, सिर्फ आदमी नहीं है। और हम पृथ्वी पर सब चीजें जमा कर लें, सब व्यवस्था कर लें और अगर आदमी खो गया, तो हमारी व्यवस्था कोई भी काम में आने वाली नहीं है।
मैंने सुना है, एक छोटे से स्कूल में एक भूगोल का अदभुत अध्यापक था।
वह बच्चों को भूगोल पढ़ाता। तो उसने दुनिया के नक्शे के बहुत से टुकड़े काट रखे थे, और उन टुकड़ों को मिला देता और बच्चों से कहता कि दुनिया का नक्शा जमाओ। बड़ा कठिन है दुनिया का नक्शा जमाना, दुनिया बड़ी ची.ज है। एक घर को जमाना बड़ा मुश्किल है। सारी दुनिया का नक्शा जमाना बहुत मुश्किल। कहीं मैडागास्कर, कमस्याडका पर पहुंच जाता, कभी टिम्बकटू, बीजिंग पहुंच जाता। छोटे-छोटे टुकड़े थे, जमाना बहुत मुश्किल था। लेकिन एक लड़का बहुत होशियार रहा होगा, उसने उन टुकड़ों को उलट कर देखा और देख कर हैरान हुआ। इस तरफ दुनिया का नक्शा था, उस तरफ आदमी की एक तस्वीर थी, उसने सब टुकड़े उलट दिए और आदमी की तस्वीर जमा दी। वह आदमी की तस्वीर कुंजी थी पीछे आदमी की तस्वीर जम गई, पीछे दुनिया का नक्शा जम गया। और हम सारे लोग दुनिया का नक्शा जमाने में लगे हुए हैं, लेकिन वह जो कुंजी है, जो "की" है, दुनिया के नक्शे को जमाने की आदमी, वह आदमी बिल्कुल अस्त-व्यस्त हो गया है, उसका जमाना हम भूल गए हैं। आदमी जम जाए तो दुनिया जम सकती है और आदमी ठीक हो जाएं तो दुनिया ठीक हो सकती है। और अगर आदमी भीतर अराजक हो जाए, खंड-खंड हो जाए, अस्त-व्यस्त हो जाए, तो हमारे दुनिया के जमाने का कोई अर्थ नहीं हो सकता। नहीं अर्थ आज तक हुआ है। लेकिन हम जिंदगी का ज्यादा समय दुनिया को जमाने में नष्ट करते हैं। एक आदमी जितना अपने घर के फर्नीचर को जमाने के लिए चिंता उठाता है, उतनी उसने अपनी आत्मा को जमाने की भी कभी चिंता नहीं उठाई। हैरानी होती है यह बात जान कर कि आदमी क्षुद्र के साथ कितना समय नष्ट करता

है। और स्वयं को बिल्कुल ही भूल जाता है, जो कि विराट है। और क्या फायदा अगर सारी दुनिया भी जम जाए और आदमी न हो, तो उस दुनिया का हम क्या करेंगे? जीसस ने पूछा है बाइबिल में, सारी दुनिया का राज्य मिल जाए और अगर मैं स्वयं खो जाऊं उस राज्य को पाने में, तो ऐसी दुनिया को पाकर भी क्या करूंगा? और यही हुआ है। आदमी ने स्वयं को बेच दिया है। चीजें खरीद ली हैं बदले में, एक बड़ा महंगा सौदा हो गया है। और हम सब भी वही महंगा सौदा किए चले जाते हैं। जन्म से लेकर मरने तक यह सौदा चलता है। अपने को बेचते हैं और सामान इकट्ठा करते हैं। एक दिन ऐसा होता है कि सामान इकट्ठा हो जाता है, और पड़ोस के लोग इकट्ठे होकर अरथी को उठा कर मरघट ले जाते हैं। वह आदमी मर जाता है, जिसने इंतजाम किया, और उसके बेटों को भी यह नहीं दिखाई पड़ता, वे भी फिर उसी सामान को बढ़ाने में लग जाते हैं। और उनकी अरथी भी एक दिन उठ जाती है। जिसे हम मकान समझ रहे हैं, वह सराय से ज्यादा नहीं है, वहां थोड़ी देर ठहरना है और आगे निकल जाना है। और कोई नासमझ ही होगा कि सराय को जमाने में इतना लग जाए और खुद को खो दे और आगे की मंजिल भटक जाए। हममें से कई लोग सरायों में ठहरे होंगे, धर्मशालाओं में, लेकिन कोई धर्मशालाओं को जमाने में नहीं लगता है। धर्मशालाओं में जीता है और आगे निकल जाता है।
अकबर ने फतेहपुर सीकरी के एक पुल पर, पुल के द्वार पर यस लिखवाया था। लिखवाया था कि यह पुल है, यह पार हो जाने के लिए है, रुकने के लिए नहीं। दिस इ.ज ए ब्रिज, दिस इ.ज टु पास नॉट टु स्टे, यहां से पार हो जाना है, यहां रुक नहीं जाना है। और जिसे हम जिंदगी समझ रहे हैं, वह सिर्फ एक सेतु है, एक ब्रिज है, जिससे हमें पार हो जाना है, और आगे, और आगे, उस पर रुक नहीं जाना है। लेकिन हम सब मकान बना कर उस पर रुक गए हैं। और हमने मजबूत मकान बनाए हैं, सीमेंट के, कांकरीट के, पत्थरों के कि वे हिल न सकें। और हमें जाना पड़ेगा और वह मकान वहीं ठहरे रह जाएंगे, और उन मकानों के साथ सारी व्यवस्था भी ठहरी रह जाएगी। लेकिन यह खयाल नहीं आ पाता।
मैंने सुना है, एक सुबह एक सम्राट के द्वार पर एक आदमी द्वारपाल से बहुत झगड़ा कर रहा है, वह द्वारपाल से कह रहा है कि मैं इस धर्मशाला में, इस सराय में ठहरना चाहता हूं। वह द्वारपाल कह रहा है कि आप पागल हो गए हैं। यह सराय नहीं है, सराय कहीं और खोजिए जाकर, यह राजा का महल है, ये राजा का निवास स्थान है। इसे अगर दुबारा सराय कहा तो हथकड़ियां पड़ जाएंगी। यह कोई साधारण मकान नहीं है, जिसका तुम अपमान कर सको। मकान भी साधारण-असाधारण होते हैं, मकानों का भी अपमान-सम्मान होता है। लेकिन वह आदमी जिद्दी है, वह कहता है कि तुम बीच से हटो। कौन है, जिसे तुम कहते हो इस मकान का मालिक है? मैं उससे मिल लूं, वह धक्का देकर द्वारपाल को भीतर चला गया है, सम्राट ने भी उसकी आवाज सुन ली है, वह अपने दरबार में बैठा है, उसके दरबारी बैठे हैं, वह फकीर जाकर खड़ा हो गया, और कहता है, कौन वह पागल है, जिसने इस मकान को अपना मकान समझ रखा है। वह जरा उठ कर खड़ा हो जाए। तो सम्राट ने कहा कि तुम कैसी बदतमीजी की बातें कर रहे हो, थोड़ा शिष्टाचार का व्यवहार करो। तुम द्वारपाल से भी अभद्रता से पेश आए हो, लेकिन वह बरदाश्त किया जा सकता है, मैं सम्राट हूं। तो उसने कहा कि आप ही वे आदमी मालूम पड़ते हैं, जो इस भ्रम में पड़ गया है कि यह मकान ही उसका निवास स्थान है, लेकिन मैं कुछ सालों पहले आया था, तो तब इसी सिंहासन पर मैंने दूसरे आदमी को बैठे देखा था, और वह भी इतने ही दावे के साथ कहता था कि मैं इस मकान का मालिक हूं। उस सम्राट ने कहा कि वे मेरे पिता थे। उनका इंतकाल हो गया, वह जा चुके हैं दुनिया से। उस फकीर ने कहा कि मैं उनके भी पहले आया था तब एक दूसरा बूढ़ा इस सिंहासन पर बैठ कर यही दावा करता था कि यह मेरा मकान है वह अब कहां है, तो वे मेरे पिता के पिता थे, वे भी जा चुके हैं। तो उस फकीर ने कहा कि कुछ दिनों बाद मैं आऊंगा। पक्का भरोसा है कि तुम मुझे मिलोगे कि कोई और मिलेगा, जो कहेगा कि यह मेरा मकान है। जिसके दावेदार बदल जाते हैं, वह सराय है, धर्मशाला है, वह मकान नहीं है। वह मकान कैसे हो सकता है?
मालकियत से ज्यादा झूठी चीज इस पृथ्वी पर दूसरी नहीं है। मालिक होने
से ज्यादा बड़ा पागलपन इस पृथ्वी पर दूसरा नहीं है। जो किसी भी चीज का अपने को मालिक समझ रहा है, वह व्यर्थ के पागलपन में पड़ गया है। मालिक कोई भी

नहीं है, क्योंकि हम नहीं थे और सब था। और हम नहीं होंगे और सब होगा। और हमारे न रहने से कहीं भी एक पत्ता नहीं हिलेगा। और कहीं भी कोई पीड़ा नहीं होगी। कहीं कुछ कमी नहीं हो जाएगी। सब चलता रहेगा, सब चलता रहेगा। लेकिन हम इतने जोर से जहां हमारी कोई मालकियत नहीं है, वहां मालकियत बनाने में लग जाते हैं, कि वह जो सच में भीतर मालिक है, वह खो जाता है और भूल जाता है उसका हमें पता ही नहीं रहता।
ठीक ही हुआ था उस राजधानी में। घर के लोगों ने सामान बचा दिया था और मालिक जल गया था। हम भी उसी राजधानी के निवासी हैं, और हमारे मकानों में भी आग लगी है। ध्यान रहे, यह मत सोचना की मकानों में आग दूसरों के लगती है, आदमी की बुनियादी भूलों में एक भूल यह भी है कि वह हमेशा यह सोचता है कि मकान जब जलता है तब दूसरे का ही जलता है, हम तो कभी जलते नहीं। आदमी की बुनियादी भूलों में से एक यह है कि वह सोचता है जब कोई मरता है तो वह दूसरा ही मरता है मैं तो कभी मरता नहीं। आदमी सदा इस खयाल में होता है कि सारी आग दूसरों के आस-पास लगी है, मैं बिल्कुल निश्चिंत हूं। लेकिन जिंदगी ही एक आग है और जन्म के बाद एक क्षण को भी आग बुझती नहीं, आग लगी ही रहती है। और आग दिन-रात जला कर जिंदगी को राख करती चली जाती है। ऐसा नहीं है किसी एक दिन अचानक मौत आ जाती है और हम मर जाते हैं। मौत उसी दिन से आने लगती है, जिस दिन हम पैदा होते हैं। जो हमारा जन्म का दिन है, वह मृत्यु का दिन भी है। और मृत्यु कोई आकस्मिक घटना नहीं है, ग्रेचुअल एवोल्यूशन है, वह भी ग्रोथ है, वह भी विकास है। जन्म के साथ ही बढ़ती रहती है। जिसे हम जन्म-दिन कहते हैं, वह हमारी नासमझी का सबूत है। एक आदमी कहता है कि मेरा पचासवां जन्म-दिन, सच बात यह है कि उसे कहना चाहिए कि मेरा पचासवां मृत्यु-दिवस है। पचास साल मैं मर चुका। अब बीस साल और बचे इक्यावनवे साल एक साल और मर चुकुंगा। और रोज-रोज मरता जाऊंगा और एक दिन मौत पूरी हो जाएगी। मौत एक विकास है, जो रोज बढ़ता चला जा रहा है। मौत बढ़ती है, और हम समझते हैं कि जिंदगी बढ़ रही है। मौत आती है और हम जन्म-दिन मनाते चले जाते हैं। शायद आदमी अपने को धोखा देने की कोशिश करता है और सफल भी हो जाता है। रोज मौत करीब आती है और हर साल नया जन्म-दिन मनाता चला जाता है। आदमी बहुत धोखेबाज है। अपने आंसुओं के ऊपर मुस्कान बिछा देता है। गंदगी के ऊपर फूल लगा देता है। झूठ के ऊपर सफेद कपड़े पहना देता है। अंधेरे के चारों तरफ दीये जला देता है। हम जिंदगी भर यह धोखा देते रहते हैं, लेकिन ये धोखा किसको हम दे रहे हैं? कौन इस धोखे में पड़ेगा? इस धोखे में मैं ही खो जाऊंगा। और दुनिया में दो ही तरह के लोग हैं, एक वे जो अपने को धोखा दे रहे हैं और एक वे जो अपने को धोखा नहीं दे रहे हैं। मैं उन लोगों को धार्मिक लोग कहता हूं, जो अपने को धोखा नहीं दे रहे हैं। जो जिंदगी के तथ्यों को सीधा और साफ देख रहे हैं। और उन लोगों को अधार्मिक कहता हूं, जो अपने को धोखा देने में लगे हुए हैं।
आपने सदा सुना होगा कि हम उस आदमी को अधार्मिक कहते हैं, जो दूसरों को धोखा देता है। मैं उस आदमी को अधार्मिक कह रहा हूं, जो अपने को धोखा देता है। और मजे की बात यह है कि जो अपने को धोखा नहीं देता वह दूसरों को धोखा दे ही नहीं सकता है। दूसरे को धोखा तो बाद में ही दिया जा सकता है, जब अपने को धोखा दे दिया गया हो। दूसरे को धोखा तभी संभव है जब मैं अपने को धोखा दे गया हूं। नहीं तो संभव नहीं है। और बड़े से बड़ा धोखा क्या है? बड़े से बड़ा धोखा यह है कि हमने समझा है कि जिंदगी बाहर है, इसलिए मकान बनाते हैं, बगीचा लगाते हैं, सामान इकट्ठा करते हैं। हम सोचते हैं कि जिंदगी बाहर है तो बाहर फूल खिलें, इसकी व्यवस्था करते हैं। हमें पता ही नहीं कि ऐसे भी फूल हैं, जो भीतर भी खिलते हैं। और हमें पता ही नहीं कि ऐसी भी हवाएं हैं जो भीतर भी बहती हैं। और हमें पता ही नहीं कि लट्टू प्रकाश के हम बाहर ही लटकाते रहेंगे, ऐसा भी प्रकाश है, जो भीतर भी जलता है। बाहर का प्रकाश हमारी जिंदगी के साथ समाप्त हो जाता है। भीतर का प्रकाश हमारी मौत के साथ भी यात्रा करता है। और वही आदमी संपत्तिवान है, जिसने कुछ ऐसा भी कमा लिया हो जिसे मौत छुड़ा न सकती हो। संपत्ति का अर्थ ही यही है कि जो विपत्ति में काम आए। और क्या अर्थ हो सकता है संपत्ति का? संपत्ति का अर्थ हो सकता है कि जो विपत्ति में काम आए। और मौत से बड़ी कोई विपत्ति है? और जो संपत्ति

मौत में काम नहीं आती उसे संपत्ति कहना नासमझी है। मौत के वक्त कौन सी संपत्ति काम पड़ती है? है कोई संपत्ति भी ऐसी जो मौत के वक्त भी काम पड़ती है? जरूर है, लेकिन वैसी संपत्ति भीतर खोजनी होती है। और हम जो संपत्ति खोज रहे हैं, वह बाहर खोजते हैं। ध्यान रहे, बाहर संपत्ति के कितने ही ढेर लग जाएं, भीतर का गरीब आदमी मिटता नहीं। क्योंकि भीतर की गरीबी का बाहर की संपत्ति से कोई मिलन ही नहीं होता है।
एक फकीर था, फरीद। और उसके गांव के लोगों ने उससे कहा कि फरीद, अकबर तुम्हें बहुत मानता है, कभी तुम जाओ और अकबर से कहो कि हमारे गांव में एक मदरसा बना दे, एक स्कूल बना दे। फरीद ने कहाः मैंने कभी किसी से मांगा नहीं, लेकिन तुम कहते हो तो चला जाऊंगा। फरीद गया राजधानी। सम्राट अकबर के द्वार पर जल्दी ही सुबह-सुबह पहुंच गया। भीतर गया तो देखा कि अकबर मस्जिद में अपनी नमाज पढ़ रहा है, घुटने टेकर हुए, हाथ जोड़े हुए, नमाज का आखिरी चरण है, और प्रार्थना की आखिरी कड़ी है और अकबर कह रहा है कि हे परमात्मा, मुझे और संपत्ति दे, मुझे और राज्य दे, मेरे राज्य को और बड़ा कर, मेरी सीमाओं को और फैला, मुझ पर कृपा कर, मुझ पर दया कर, मेरी संपत्ति को बढ़ा, मेरे राज्य को बढ़ा। फरीद एकदम लौट पड़ा, अकबर उठा तो फरीद को सीढ़ियां उतरते देखा तो चिल्लाया कि कैसे आए, और कैसे लौट चले? फरीद ने कहा बड़ी गलती में आ गया मैं, समझता था कि तुम बादशाह हो, यहां आकर पाया कि तुम भी भिखारी हो। तुम भी अभी मांग ही रहे हो। और जब तुम्हीं मांग रहे हो तो तुम्हें मांग कर मैं कष्ट न दूंगा, मांगने आया था। और भिखारी से मांगना बड़ी कठोरता है। क्योंकि भिखारी अभी खुद ही मांग रहा है, अभी उसके पास ही बहुत कम है। और मैं मांगके उसमें कम नहीं करूंगा, और मैं लौट चला। और फिर मैं सोचता हूं कि जिससे तुम मांगते थे अगर मांगना ही होगा तो अब उसी से मांग लेंगे। बीच में एक दलाल को और क्यों लें?
अकबर जैसा आदमी भी मांग रहा है। तो फिर बाहर की संपंत्ति से भीतर की दरिद्रता मिटती नहीं होगी। भीतर की दरिद्रता छिप जाती है, बाहर की संपत्ति से मिटती नहीं। और छिप जाने को मिट जाना मत समझ लेना। कोई आदमी फोड़े कर ऊपर पट्टी बांध ले, और फोड़े को ढांक दे तो फोड़ा मिट नहीं जाता। बल्कि पट्टी ढांकने से जल्दी बड़ा होगा, क्योंकि अब सूरज की रोशनी भी नहीं लगेगी। ताजी हवाएं भी नहीं लगेंगी, अब फोड़े की बढ़ने होने की संभावना ज्यादा है, कम होने की कम। हमारे भीतर एक दरिद्रता का भाव है, उस दरिद्रता के भाव को मिटाने के दो रास्ते हैं, एक रास्ता तो यह है कि बाहर हम संपत्ति इकट्टी करते चले जाएं। यह बिल्कुल ही सूडो, बिल्कुल ही मिथ्या, बिल्कुल ही झूठा रास्ता है। संपत्ति तो इकट्ठी हो जाएगी, भीतर की दरिद्रता छिप जाएगी, मिटेगी नहीं। और जब मौत सामने आएगी तो संपत्ति छूट जाएगी, दरिद्रता हाथ में रह जाएगी। क्योंकि जो भीतर है, वह साथ जाएगा। इसलिए हर बार हममें से बहुत लोगों ने अनेक जन्म लिए। सभी ने लिए। बहुत बार हमने संपत्ति इकट्ठी की और हर बार हम फिर गरीब हो गए हैं। और फिर वही दुनिया शुरू होती है, फिर गरीब, फिर संपत्ति का इकट्ठा करना, फिर मौत का आना संपत्ति का छिन जाना, हम फिर गरीब के गरीब खड़े रह जाते हैं। यह मकान बहुत दफा जल चुका है। हर बार जल चुका है, लेकिन हम फिर-फिर भूल जाते हैं। और खयाल में नहीं रह जाता कि ये मकान हम जो बना रहे हैं, फिर जलेगा। क्या ऐसी भी संपत्ति हो सकती है, जो आग में जलती न हो? क्या ऐसी भी संपत्ति हो सकती है जो मरने से मरती न हो? क्या ऐसी भी संपत्ति हो सकती है जिसे दुनिया में कोई छीन न सके? अगर ऐसी कोई संपत्ति है तो ही कोई आदमी संपत्तिवान हो सकता है, अन्यथा दरिद्रता के मिटने का कोई उपाय नहीं। ऐसी संपत्ति है किसी बुद्ध में कभी दिखाई पड़ती है। किसी महावीर में कभी झलक मिलती है। कभी क्राइस्ट की आंखों में दिखती है। कभी कृष्ण के गीतों में दिखती है, कभी दिखती है वह संपत्ति ऐसे लोगों के पास दिख जाती है जिनके पास शायद बाहर कुछ भी नहीं।
बुद्ध पहली बार ज्ञान को उपलब्ध हुए, तो अपने पांच मित्रों की तलाश में निकले, जो कभी उनके साथ थे। और फिर छोड़ कर चले गए थे। तो सोचा कि पहले उन मित्रों को जाकर खबर कर दूं कि मुझे ज्ञान मिल गया है। वे आए काशी और काशी के बाहर एक वृक्ष के नीचे उन्होंने डेरा डाला। डेरा क्या था, कुछ और

तो था नहीं साथ, भिक्षा का एक पात्र था, उस भिक्षापात्र को पीठ की तरफ टिका कर तकिया लगा कर वे लेट गए। सांझ का वक्त है। सूरज डूब रहा है, और डूबते सूरज की किरणें बुद्ध के ऊपर पड़ रही हैं। काशी का नरेश काशी का सम्राट अपने रथ पर बैठ कर बाहर हवाखोरी के लिए निकला है। रथ पर बैठा है सम्राट, सोने के मुकुट हैं, बहुमूल्य करोड़ों के वस्त्र हैं। कीमती घोड़े हैं, उसी मार्ग पर, उसी वृक्ष के पास वह रथ भी निकलता है। सूरज की किरणें दोनों पर पड़ रही हैं, एक उस आदमी पर भी, जिसके पास बाहर सब कुछ है, लेकिन उस आदमी की आंखों में कोई जीवन की खबर नहीं, चिंता और उदासी के सिवाय कुछ भी नहीं। और वहीं उस झाड़ के पास एक भिखारी भी बैठा हुआ है। अपने भिक्षापात्र को तकिया बना कर। उसके पास कुछ भी नहीं है। और सूरज की किरणें उस पर भी पड़ रही हैं। लेकन उसकी आंखों में कोई खबर है, कुछ मिल गया है। कुछ पा लिया है। कुछ ऐसा जो अब खो नहीं सकता है। न वहां चिंता है, न वहां उदासी है। ऐसा मुश्किल से हुआ होगा। कभी-कभी ऐसा होता है कि एक ही जगह ऐसे दो लोग मिल जाएं। सम्राट का तेज घोड़ा भागा चला जा रहा है। जो जितनी चिंता में होते हैं वे उतनी तेज घोड़ों पर सवार हो जाते हैं कि घोड़ों की टाप में चिंता भूल जाए। स्पीड आदमी इसीलिए पकड़ लेता है। और कोई कारण नहीं है। जोर की गति में भूल जाए कि भीतर परेशानी है, चिंता है, उदासी है, कठिनाई है, दुख है, पीड़ा है। यह दुनिया में जो इतने जोर से स्पीड, गति बढ़ी हैं, वह दुख के कारण बढ़ी है। वह दुख स्पीड में शायद भूल जाए, इसलिए आपने देखा होगा कि दुखी आदमी अगर कार चलाए, क्रोधी चिंतित आदमी कार चलाए तो उसका एक्सीलेटर जोर से, जोर से दबता चला जाता है। अगर आपने भी कभी क्रोध में गाड़ी चलाई तो मत चलाना, क्योंकि क्रोध एक्सीलरेटर को दबाने का काम करेगा, आप नहीं दबा रहे हैं, एक्सीलरेटर को क्रोध दबाएगा। क्रोध किसी भी चीज को दबा ले जाता है, किसी की गर्दन को दबा दे कि एक्सीलरेटर को दबा दे, दबाना उसका काम है। भागा जा रहा है घोड़ा, तेजी से सम्राट बैठा है उसमें शायद तेजी में भूल जाए, गति में भूल जाएं कि भीतर बड़ी बेचैनी है, तभी बुद्ध दिखाई पड़ गए हैं उस वृक्ष के नीचे। उसने अपने सारथी को कहाः रोक लो, यह आदमी कौन है? उस सारथी ने कहाः मैं नहीं जानता हूं। सम्राट ने कहा कि ले चलो मुझे उसके पास। ऐसा मालूम होता है कि जिसकी मैं खोज में हूं वह इसे मिल गया। वह सम्राट उतर कर बुद्ध के पास गया है और कहा कि भिक्षु, क्या मैं पूछ सकता हूं कि तुम्हे क्या मिल गया है? क्योंकि तुम्हारे पास कुछ भी नहीं दिखाई पड़ता सिवाय भिक्षापात्र के और तुम इतने आनंदित, इतने शांत, और तुम इतने प्रकाशित, और तुम इतने सुगंधित, और तुम इतने संगीत से भरे कि चारों तरफ की हवाएं तुम्हारी सुगंध को पकड़ रही हैं। और चारों तरफ वृक्षों में तुम्हारा संगीत गूंज रहा है। सूरज का प्रकाश भी तुम्हारे सामने फीका लगता है। क्या हो गया है तुम्हें? क्या मिल गया है तुम्हें? कौन सी संपदा पा ली है? मैं उदास हूं, दुखी हूं, सब मेरे पास है, और रोज दिन-रात विचार करता हूं कि आत्महत्या कर लूं। क्या करूं, क्या न करूं? मर जाऊं, आज इस रथ को जोड़ कर इसलिए निकला हूं कि जाऊं और कहीं मर जाऊं। और मेरे पास सब है और तुम्हारे पास कुछ भी नहीं। बुद्ध ने कहाः तुम्हारे पास कुछ भी नहीं है और मेरे पास सब कुछ है। क्योंकि जिसके पास भीतर कुछ है उसी के पास कुछ है। जिसके पास बाहर कुछ भी हो उसके पास कुछ भी नहीं है। और तुम अगर बाहर और जोड़ते ही चले गए, तो भीतर तुम खोते ही चले जाओगे। तुमने कभी वहां भी झांका भीतर, जहां चिंता है, दुख है, बेचैनी है, वहां भी तुमने कभी झांका, जहां उदासी है, विषाद है, संताप है? वहां भी तुमने कभी झांका जो तुम भीतर हो? उसने कहाः भीतर यानी क्या? भीतर का क्या मतलब होता है? हम भी सुन लेते हैं कि भीतर, लेकिन भीतर का कोई मतलब नहीं होता है, हमारे सामने। भीतर शब्द बिल्कुल खाली मालूम पड़ता है, उसमें कोई कंटेंट नहीं है। बाहर सब मालूम पड़ता है, कि बाहर सब है। भीतर तो ऐसा लगता है जैसे कोई मिस्टीरियस बात है, भीतर, भीतर का कुछ पता नहीं है कि भीतर क्या है? हम कभी भीतर झांकते ही नहीं, उसने भी कभी नहीं झांका था। बुद्ध ने कहा कि भीतर झांको तो तुम जिस संपत्ति को खोज रहे हो, वह वहां मौजूद है। जिस मालकियत को खोज रहे हो, वह वहां है। तुम जिसकी तलाश में निकल चुके हो, वह वहां है, लेकिन अगर उसे खोजने तुम पृथ्वी के कोने-कोने तक भी गए तो नहीं

पा सकोगे, क्योंकि वह तुम्हारे भीतर है और तुम बाहर खोज रहे हो। जो भीतर है, उसे अगर हम बाहर खोजेंगे तो कभी भी नहीं पा सकते हैं। और हमारी खोज की यही बुनियादी भूल है। जो भीतर है उसे भीतर ही खोजना पड़ेगा।
मैंने सुना है, एक महानगरी में एक पथ के किनारे एक भिखारी भीख मांग रहा था। चालीस वर्षों तक। हाथ फैलाए रोज सुबह सूरज ने उसे देखा। हाथ फैलाए रोज सूरज ने डूबते उसे देखा। उस नगर में शायद ही कोई एक आदमी था, जो न जानता हो उस भिखारी को। उसके फैले हुए हाथों को। उस भिखारी ने सोचा था कि मांग-मांग के बहुत इकट्ठा कर लूंगा और फिर एक दिन भीख मांगना बंद कर दूंगा। सभी भिखारी ऐसा ही सोचते हैं कि बहुत इकट्ठा हो जाएगा तो फिर मांगना बंद कर देंगे। लेकिन किसी भिखारी को यह पता नहीं होता कि निरंतर अभ्यास से भिखमंगापन और बढ़ता है, कम नहीं होता। चालीस साल का अभ्यास हो जाता है भीख मांग का, तो चालीस साल का अभ्यासवान भिखारी भीख मांगना नहीं छोड़ सकता। कुछ थोड़ा इकट्ठा भी हो गया था, लेकिन भीख बढ़ती चली गई थी। क्योंकि जो इकट्ठा होता है वह दिखाई नहीं पड़ता। जो दूर है, जो दूसरे के पास है, वही दिखाई पड़ता है। जो अपने पास है वह भूल जाता है। इसलिए दुनिया में गरीब भी, गरीब होता है, और अमीर भी गरीब होता है। और भिखारी तो भिखारी होता ही है, जो भीख दे रहे होते हैं, वे भी भिखारी होते हैं। क्योंकि जो अपने पास है, वह दिखाई नहीं पड़ता है।
फिर वह भिखारी मरा। जब वह मरा तो पास-पड़ोस के लोगों ने उसके गंदे कपड़े फेंक दिए। उसके बर्तन-भांडे फेंक दिए। और फिर किसी ने सलाह दी कि चालीस साल से ये आदमी जमीन गंदी कर रहा था, इस जमीन का भी थोड़ा सा मिट्टी का टुकड़ा निकाल के बाहर फेंक दो। खुदाई शुरू हुई और वहां लाखों लोग इकट्ठे हो गए। जब खुदाई हुई। क्योंकि ऐसी ही घटना घट गई। जैसे ही खोदा तो हैरान हो गए कि कुछ इंच नीचे बड़ा खजाना गड़ा है। और सारे गांव में एक चर्चा हो गई कि कैसा पागल आदमी था, उसी जमीन पे बैठा रहा, जहां खजाना गड़ा था और भीख मांगता रहा। अगर जरा जमीन खोद लेता तो सम्राट हो जाता। उस भीड़ में मैं भी खड़ा था। हो सकता है कि आप भी खड़े रहे हों, उस भीड़ में बहुत लोग इकट्ठा थे। उस भीड़ में हर आदमी उस भिखारी के लिए कह रहा था कैसा नासमझ था और मैं खूब जोर से हंसने लगा। और मैंने लोगों से कहा कि तुम भिखारी पर हंस रहे हो तुम्हें पता नहीं कि तुम जहां खड़े हो, वहां भी बहुत खजाना गड़ा है। लेकिन तुम भी भीख मांग रहे हो। जहां हम खड़े हैं। जो हम हैं वहां बड़े खजाने गड़े हैं, वहां परमात्मा ने सब कुछ छिपा के रख दिया है। लेकिन वहां हम खोजने नहीं जाते हैं, हम खोजने बाहर जाते हैं, और भटक जाते हैं। और जीवन नष्ट हो जाता है। बाहर पर्याप्त नहीं है जीवन के लिए भीतर आना जरूरी है। और बाहर हम कितना ही खोजते रहें और कितना ही पा लें हम उसे नहीं पा सकेंगे, जिससे तृप्ति मिलती है और प्राण शांत हो जाते हैं। नहीं वे बाहर है ही नहीं। एक छोटी सी कहानी अपनी बात मैं पूरी करूं।
मैंने सुना है कि भगवान ने दुनिया बनाई। और जब तक उसने आदमी नहीं बनाया था तब तक बड़ी शांति थी। भगवान को भी बड़ी शांति थी। भगवान भी तब से शांत नहीं हो सका, जबसे आदमी बनाया है। बहुत शांत था, दुनिया अच्छी थी। फूल खिलते थे। पक्षी गीत गाते थे। न हत्याएं थीं, न आत्महत्याएं थी, न चिंता का नाम सुना था, न प्रार्थनाएं थी, कि मंदिर बनाए हों, पक्षियों ने पौधों ने और भगवान की खोपड़ी खाते हों और प्रार्थना करते हों। ऐसा कुछ न था। बड़ी शांति थी। फिर आदमी बनाया और मुश्किल शुरू हो गई। और आदमी रोज उसके दरवाजे पर पहुंचने लगा। आदमी को पता था कि भगवान कहां है। तो दिन-रात न भगवान सो सकता था, न खाना खा सकता था, न पानी पी सकता था। दिन रात शिकायत करने वाले लोग खड़े थे कि यह गलत है। और मजे की बात यह थी कि जो आदमी एक गलत कहता था, दूसरा कहता था कि यह होना चाहिए, यह बिल्कुल ठीक है। किसी को वर्षा ठीक मालूम पड़ती थी, क्योंकि उसको खेत में दाने बोने थे। और दूसरा उसके पीछे आता और वह कहता कि वर्षा अभी बंद रखो क्योंकि मैंने घड़े बनाए हैं मिट्टी के, वह सब गड़बड़ हो जाएंगे। अभी वर्षा बंद रहनी चाहिए। सब मुश्किल था। हर आदमी की अलग इच्छा थी।

भगवान ने देवताओं को बुलाया और कहा कि मुझे कुछ सलाह दो। मैं आदमी से कैसे बचूं, मैं कहां छिप जाऊं कि आदमी मेरा पता न पा सके, नहीं तो आदमी मेरी तो जान ले लेंगे ये, और मैं घबड़ा जाऊंगा। मैं तक आत्महत्या करने का विचार करने लगा हूं। तो देवताओं ने बड़ी सलाह दी किसी देवता ने कहा कि हिमालय पर, एवरेस्ट पर, गौरीशंकर पर छिप जाओ, तो भगवान के कहा कि तुम्हें पता नहीं बहुत जल्दी ही, तेनजिंग और हिलेरी वहो चढ़ जाएंगे। और एक दफा पता चल गया तो बस, फिर मुश्किल है, आदमी रास्ता बना लेगा। वहां से काम नहीं चलेगा, तो किसी देवता ने कहा, फिर चांद पर बैठ जाए तो उसने कहा तुम्हें वह भी पता नहीं वहां भी बहुत जल्दी आर्मस्ट्रांग पहुंच जाने वाला है। देर नहीं लगने वाली है। देवता थक गए तब एक बूढ़े देवता ने भगवान के कान में कहा, तब एक ही तरकीब है कि तुम आदमी के भीतर छिप जाओ, वहां आदमी कभी नहीं जाएगा। और भगवान वहां छिप कर बैठ गया और आदमी सब जगह जाता है, बस एक जगह नहीं जाता हैं, जहां वह स्वयं है। और जब तक हम वहां नहीं जाते तब तक जीवन के आनंद का, जीवन के सत्य का हमें कोई पता नहीं चल सकेगा। हम हैं मंदिर और हम बाहर पत्थर के मंदिरों में खोजते हैं उसे, और हम हैं मंदिर उसके। और हम उसकी मूर्तियां बनाते हैं और वह अमूर्त हमारे भीतर छिपा है। और हम वीणा पर संगीत उठाते हैं। और उसका संगीत हमारे भीतर बिना वीणा के निरंतर बज रहा है। और हम बाहर घी के दीये जलाते है और उसने ऐसा दीया जलाया है भीतर, जो कभी बुझता ही नहीं, लेकिन हम वहां जाते ही नहीं। चांद पर जाना बड़ा आसान। हिमालय पर जाना बड़ा आसान है। अपने भीतर जाना शायद सबसे ज्यादा आर्डुअस, सबसे ज्यादा कठिन है, शायद इसलिए तो कोई आदमी वहां नहीं जाता। लेकिन मैं आपसे कहना चाहता हूं कि वह कठिनाई झूठी है, हम गए नहीं, बस इतनी ही कठिनाई है। हम जाना चाहें तो कोई कठिनाई नहीं। अगर भीतर ही जाना कठिन होगा तो फिर और कहां जाना सरल हो सकता है? अगर अपने को ही जानना कठिन हो सकता है तो और क्या जानना सरल हो सकता है? और अगर मैं स्वयं को ही नहीं जान सकता तो मेरे और सब जानने की दौड़ व्यर्थ है। और अगर मैं स्वयं को ही नहीं पा सकता तो मैं और सब पाकर भी क्या कर सकता हूं?
इन थोड़ी सी बातों में एक ही बात मैंने कही है कि अपने को खोजें, बाहर
से थोड़ी आंख बंद करें। पूरी न बंद कर सकें तो कम से कम आधी ही बंद करें। कुछ आंख झपकाएं, कुछ पलक बंद करें, भीतर खोजें। वह है, खोज की कमी है, खोजेंगे तो मिल जाएगा।
जैसे एक आदमी आंख बंद करके बैठा हो और कहे कि रोशनी कहां है? हम उससे कहेंगे थोड़ी आंख खोल, रोशनी है, तू आंख खोलेगा तो दिख जाएगी। वह आदमी कहेगा, रोशनी कहां है? लेकिन आंख न खोले तो रोशनी कैसे मिलेगी? ठीक इससे उलटी बात, भीतर वह मौजूद है, संपत्ति, सत्य, सौंदर्य, जो हम उसे कहें, प्रभु परमात्मा जो नाम हम उसे दें, निर्माण, मोक्ष जो हम उसे कहना चाहें, वह मौजूद है। लेकिन जैसे बाहर की रोशनी को देखने के लिए आंख खोलनी पड़ती है, वैसे भीतर की रोशनी को देखने के लिए आंख बंद करनी पड़ती है। और हम सोते में भी आंख बंद नहीं करते। सोते में ऊपर की पलक बंद हो जाती है, लेकिन सपने हम बाहर के ही देखते रहते हैं। हम रहते बाहर ही हैं। सपने में भी, सोते में भी आदमी अपने घर में नहीं है, अपने भीतर नहीं है। कहीं बाहर है। सोया है बंबई में हो सकता है, मास्को में हो सकता है, कलकत्ते में। बाहर, मित्र देख रहा है, शत्रु देख रहा है, बाहर है। भीतर आंख करने का मतलब है कुछ क्षणों के लिए चौबीस घंटे में, बाहर को बिल्कुल भूल जाएं। उसकी स्मृति भी न रह जाए, उसका विचार भी न रह जाए, उसका खयाल भी न रह जाए। बस अकेले भीतर रह जाएं, टोटल लोनलीनेस में भीतर रह जाएं, एकांत में। तो उसकी झलक मिलनी शुरू हो जाएगी, और तब जिसे उसकी झलक मिल जाए, वैसा आदमी संपत्ति को, धन को उपलब्ध हो जाता है। वही धन है, जो वास्तविक है। और धन है कागज के सिक्कों का, चांदी के सिक्कों का, झूठा है, बनाया हुआ है, भीतर की दरिद्रता को छिपाता है, भुलाता है, मिटाता नहीं है। परमात्मा करे आप छिपाने में न लगें मिटो में लग जाएं। और जो आदमी प्रभु की तरफ एक कदम चलता है, प्रभु उसकी तरफ हजार कदम चलने को हमेशा तैयार हैं।

मेरी बातों को इतनी शांति और प्रेम से सुना, उससे बहुत अनुगृहीत हूं।
और अंत में सबके भीतर बैठे परमात्मा को प्रणाम करता हूं। मेरे प्रणाम स्वीकार करें।

नानक दुखिया सब संसार
छठवां प्रवचन

विचार और अंतर-बोध

... महावीर के मरने के कई सौ वर्ष बाद लिखा गया। बुद्ध के मरने के भी तीन-चार सौ वर्ष बाद लिखा गया है। क्या बुद्ध ने कहा, क्या नहीं कहा। तीन-चार सौ वर्षों का तो कोई रिकॉर्ड ही नहीं हैं, स्मृति के हिसाब से सब लिखा गया। और वे भी वे लोग नहीं थे, वे किसी से कह गए थे, फिर वे किसी और से कह गए--वह फिर किसी और से कहा गया। इस सबमें बहुत कुछ मिल गया है। नहीं, तो न तो बुद्ध को मतलब है महावीर से विज्ञान उपलब्ध हुआ कि नहीं हुआ और न महावीर को मतलब है बुद्ध से कि निर्वाण हुआ कि नहीं हुआ, लेकिन बीच में जो फर्क बनता है। दूसरा पंथ गलत है, यह बताना बहुत जरूरी होता है। लेकिन पंथ बनाना मुश्किल। और फिर यह भी होता है कि दोनो के रास्ते बड़े अलग हैं। कई बार ऐसा हो जाता है हम एक ही पहाड़ पे जा रहे है। आपका रास्ता अलग है, मेरा रास्ता अलग है। और आप सोचते हैं कि मैं जिस रास्ते से जा रहा हूं, भटक जाऊंगा, क्योंकि ठीक रास्ता तो यह है, जिस पर मैं जा रहा हूं। और पहाड़ बड़ी भारी चीज है, उसपे हजार रस्तों से चोटी पर पहुंचा जा सकता है। तो बहुत बार यह भूल हो जाती है निरंतर। फिर जब पंथ निर्मित होता है, शास्त्र निर्मित होता है, तो वे दूसरे के विरोध में ही खड़ा हो सकता है, नहीं तो खड़ा कैसे हो? और उस वक्त विरोधी जो वे दो नये विचार पैदा हुए थे, वह महावीर, बुद्ध के थे। लेकिन महावीर के वचनों में, बुद्ध के विरोध में कुछ भी नहीं है। बुद्ध के वचनों में महावीर के विरोध में बहुत कुछ है। और इसका कारण जो है वह यह है कि महावीर बूढ़े आदमी थे और बुद्ध जवान आदमी थे। महावीर प्रतिष्ठित हो चुके थे, अब उनको बुद्ध का विरोध करने की कोई जरूरत नहीं थी। उनको कोई बुद्ध से झगड़े का कारण नहीं था। बुद्ध बाद की पीढ़ी के आदमी हैं। और बिना महावीर को अप्रतिष्ठित किए बुद्ध के विचार कैसे होंगे।

मैं तो इसी हिसाब से यह मानता हूं कि महावीर उम्र में ज्यादा थे, सिर्फ इस वजह से बुद्ध छोटे थे। महावीर का उम्र में ज्यादा होना मैं इसी वजह से मानता हूं। महावीर ने गोशालक का तो विरोध किया, लेकिन और किसी का विरोध नहीं किया। ऐसा लगता है कि महावीर के समय में गोशालक और उनके बीच एक अंतर था। बाकी यह जो दूसरे विचार थे उनमें। उनतीस साल का फासला है। तब तक महावीर तीर्थंकर हो चुके हैं। तब तक वह प्रतिष्ठित हो गए हैं, अब कोई झगड़ा नहीं है। बात खत्म हो गई। नया विचार दूसरा आता है तो उसका विरोध करना जरूरी हो जाता है। थोड़ा विरोध किया हो, इस बात की भी संभावना है, और दोनों की प्रक्रिया बिल्कुल उलटी है, इसलिए विरोध का मौका भी है। क्योंकि महावीर मानते हैं कि संकल्प की परम चेष्टा से ही सब कुछ उपलब्ध हो जाता है। विल पर जोर है उनका। संकल्प की अत्यंत चेष्टा से सत्य उपलब्ध हो जाता है। और बुद्ध मानते हैं कि संकल्प से तो कभी कुछ उपलब्ध नहीं होता। संकल्प-शून्य हो जाने से सब कुछ हो जाता है। महावीर मानते हैं प्रयास करने से सब कुछ होगा, बुद्ध मानते हैं प्रयास सब छोड़ देने से होगा। यह बिल्कुल उलटे दिखते हैं न। यह तो बिल्कुल साफ है झगड़ा बिल्कुल सीधा है झगड़ा। एक तरफ महावीर कहते हैं बिना प्रयास कुछ भी नहीं होगा, प्रयास करना ही होगा। और चरम प्रयास करना होगा, साधारण प्रयास से भी नहीं होगा। नहीं तो कोई समझे कि जैसे रोटी कमाते हैं, दुकान करते हैं, ऐसे साधना भी कर लेंगे। तो हो जाएगा, ऐसा नहीं महावीर कहते हैं कि समग्र शक्ति उसमें ही लगा देनी पड़ेगी, न रोटी, न दुकान, न पत्नी, न बच्चा कोई भी नहीं, सब गए। सारी शक्ति इकट्ठी करके संकल्प की, जब कोई सत्य पर जूझेगा, तब सत्य उपलब्ध होगा। और बुद्ध कहते हैं कि संकल्प से तो कुछ होना ही नहीं है। संकल्प सिर्फ अहंकार है कि मैं करूंगा, मेरे करने से क्या होने वाला है? तो जब कोई करना नहीं रह जाता और मैं भी चला जाता है। कर्ता भी चला जाता है, संकल्प भी नहीं रहता, तब सत्य उतर आता है। संकल्पशून्य होना पड़ेगा बुद्ध के हिसाब से, महावीर के हिसाब से संकल्पपूर्ण होना पड़ेगा। तो ये बिल्कुल उलटी बात है लेकिन मेरी

दृष्टि में बिल्कुल उलटी नहीं है। मेरी दृष्टि में ऐसा है कि किसी भी चीज को उसकी अति पर ले जाओ तो अपने से विपरीत में बदल जाती है। किसी भी चीज को उसकी अति पर ले जाओ एक्स्ट्रीम पर तो वह अपने से विपरीत में बदल जाती है। अगर मैं इस मुट्ठी को पूरे संकल्प से बांधने की कोशिश करूं, बांधता चला जाऊं, पूरी ताकत लगा दूं, तो जब मेरी पूरी ताकत मुट्ठी पर लग जाएगी और आगे ताकत नहीं बचेगी, तो मुट्ठी खुल जाएगी। ताकत लगाई थी बांधने पर, लेकिन जब पूरी ताकत लग जाएगी, तो फिर मैं सिर्फ देखता रह जाऊंगा कि मुट्ठी खुल गई और कुछ भी न कर सकूंगा। कुछ भी न कर सकूंगा।
जैसे कि हमें प्रकाश में दिखाई पड़ता है, लेकिन अगर तेज प्रकाश कर दिया जाए तो आंख फौरन बंद हो जाएगी और दिखना बंद हो जाएगा। प्रकाश की अति जो है, वह अंधकार बन सकती है। तो जीवन का नियम ये है कि प्रत्येक चीज को अगर उसकी अति पर ले जाया जाए, तो वह अपने से विपरीत में बदल जाती है। अब इसका मतलब यह हुआ कि अगर संकल्प को अति पर ले जाया जाए तो वह निःसंकल्प हो जाता है। अगर संकल्प को कोई भी उसकी अति पर ले जाए, तो संकल्प शून्य हो जाता है। तो उनमें कोई फर्क ही नहीं रह जाता। अगर कोई प्रयास को भी पूर्णता से करे, तो वह प्रयास से मुक्त हो जाता है। यह वह जो बुद्ध कह रहे हैं कि प्रयास से मुक्त होना है, शून्य होना है। संकल्प छोड़ देना है। वह छूटता भी तभी है, जब पूरा गुजर जाए कोई आदमी, नहीं तो छूटता भी नहीं। छूटता भी नहीं वह उसके पहले। तो मेरा मानना है कि कोई विचार को उसकी पूर्णता पर ले जाए तो वह निर्विचार हो जाएगा फौरन। उस चोटी से फिर आगे विचार में उपाय नहीं रह जाता। तो विपरीत में चला जाता है। करेगा क्या चित्त?
विचार अगर पूरी सीमा तक ले जाया जाए, जहां तक विचार मनुष्य कर सकता है वहां तक चला जाए, करता हुआ रुके न बीच में, तो विचार की सीमा आ जाएगी और निर्विचार शुरू हो जाएगा। करोगे क्या? उसकी सीमा है विचार की, उसके और आगे जाना है तो निर्विचार शुरू हो जाएगा। तो यह हो सकता है कि उनके आस-पास जिन लोगों ने यह सब संगृहित किया, उन्हें यह बिल्कुल विरोधी दिखी होंगी बातें, और उन्हें जो पंडित थे, उन्हें कुछ पता नहीं होगा, और उन्हें पता हो भी नहीं सकता, उनको कि क्या मामला है? वह इकट्ठा कर गए होंगे सारी बातें और होता ऐसा है अक्सर कि महावीर, बुद्ध का कभी मिलना तो हुआ नहीं। बुद्ध के शिष्य खबर लाते हैं कि महावीर ऐसा कहते हैं। महावीर, समकालीन थे, उम्र में तीस-चालीस साल का फासला है। जब बुद्ध जवान हैं तो महावीर बूढ़े हो गए हैं। और महावीर के शिष्य बुद्ध की खबर लाते होंगे, वह ऐसा कहता है, वह ऐसा कहता है। भेंट नहीं हुई। ये खबरें जो हैं, इन खबरों पर उन्होंने वक्तव्य दिए होंगे। वह वक्तव्य संगीत हो गए होंगे। और फिर जब दोनों का पंथ बनने लगा, वहां उनका झगड़ा था दोनों का, दोनों का नया विचार खड़ा हो रहा था, नये उसके केंद्र बन रहे थे। तो संघर्ष निश्चित रहा होगा। और रोज ऐसा हो जाता था कि आज महावीर इस गांव से गुजरे और लोग उनसे प्रभावित हो गए और कल बुद्ध आए और वह जो महावीर का प्रभाव था वह बुद्ध के साथ चला गया। कोई बुद्ध से प्रभावित हुआ, वह महावीर के साथ चला गया। शिष्य कई दफा बदले। ये बदलने वाले शिष्य बहुत उपद्रव का कारण हैं, क्योंकि वह यहां से खबर वहां ले गए, वहां से खबर यहां लाए। और क्या-क्या किया उन्होंने, क्या-क्या जोड़ा-घटाया।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

ठहरे, बिल्कुल ठहरे, लेकिन मुलाकात का कोई कारण नहीं है। कोई अहंकार नहीं है। मुलाकात का कारण भी तो हो। महावीर को कुछ पूछना नहीं, बुद्ध को कुछ पूछना नहीं, महावीर को कुछ जानना नहीं, बुद्ध को कुछ जानना नहीं। मिलें क्यों? बिल्कुल मिल सकते हैं, लेकिन वह मिलना अकारण ही हो सकता है, रास्ते में चलते मिल गए तो मिल गए नहीं, नहीं तो उसे कोई प्रयोजन नहीं। प्रेम से मिलना भी हमें ऐसा लगता है न, जिनका प्रेम बहुत कम है, उन्हें लगता है, हम प्रेम से मिलते हैं। अब जिनका चौबीस घंटे प्रेम ही प्रेम है, तो उसे कुछ खबर ही नहीं है कि इससे प्रेम है, मिले या नहीं मिले, यह भी सवाल ही नहीं। वह तो जो भी मिला उसी से प्रेम से मिले, वह तो हम चूंकि प्रेम में

नहीं जीते इसलिए हमको लगता है चौबीस घंटे कोई प्रेम से मिलता है, तो बड़ी खुशी होती है। क्योंकि तेईस घंटे तो बिना प्रेम के गुजर रहे हैं। लेकिन जो आदमी प्रेम में ही जी रहा है मिले या नहीं मिले, सब बराबर है। मिले तो ठीक है, उतना ही नहीं मिले तो ठीक है। और उसे पता ही नहीं रह जाता धीरे-धीरे कि क्या प्रेम है? हमको प्रेम का पता रहता है, क्योंकि हमको घृणा का पता है। मछली को थोड़े ही पता चलता है कि सागर में है। वह तो पहली दफा तब पता चलता है जब तुम सागर के बाहर निकाल लो, उसको रेत में पटक दो। तब उसे पता चलता है कि सागर में थे, अब मरे। समझे न। और एक मछली को जिसको कि रेत पर पटको, उसे सागर में डाल दो, तो उसे सागर का आनंद भी पता चलेगा। अब जिसका व्यक्तित्व पूरा प्रेम ही हो जाए, उसे पता ही नहीं चलता कि क्या प्रेम है, और क्या प्रेम नहीं है? विरोधी न रह जाने से सहज हो जाता है। श्वास ही उसकी प्रेम में उठना, प्रेम में चलना, प्रेम में। इससे उससे बहुत से लोग भूल में पड़ जाते हैं। वह उसका वैसा जीना है। उसने आपके कंधे पे हाथ रख लिया प्रेम से, वह उसका जीना है लेकिन आप समझे कि उसने मुझे बहुत प्रेम किया। ये समझ आपकी है, उसका यह जीने का हिस्सा ही है, वह सहज है, बिल्कुल चल रहा है। तो प्रेम के लिए तो कोई वजह नहीं है। और कोई दूसरी वजह नहीं मिलने की। असल में एक जगह ऐसी भी है, चरम जहां घटना घटती हो, वह एक जगह ऐसी है, कि वहां व्यक्ति ही मिट जाता है, कौन मिले, किससे मिले? यह सब मिलना-जुलना सारा का सारा एक तल पर है। और इसलिए कोई मिलना नहीं हुआ, मगर खबरें लोग लाते रहे। खबरें लोग लाने वाले हैं, वे लाते रहे। फलां आदमी ने ऐसा कह दिया। उस आदमी ने ऐसा कह दिया। और वह जमाना तो बिल्कुल ही बोले गए शब्द पर निर्भर था। कोई लिखित का तो उपाय नहीं है बहुत। बोले गए शब्द सब कुछ हैं। और व्यक्ति खबर लाते हैं। जैसे किसी ने आकर बुद्ध को कहा कि महावीर के शिष्य कहते हैं और महावीर कहते हैं कि वे सर्वज्ञ हैं। सब जानते हैं, तीनों काल के ज्ञाता हैं। आपका क्या कहना है? बुद्ध से कोई आदमी आकर कहता है कि महावीर कहते हैं या महावीर के शिष्य कहते हैं, या ऐसी खबर उड़ाते हैं कि वे सर्वज्ञ हैं, तीनों काल उन्हें ज्ञात हैं। तो बुद्ध कहते हैं कि मुझे किसी ने कभी कहा था कि महावीर एक दिन एक ऐसे घर के सामने भिक्षा मांगने खड़े हो गए थे, जिसमें कोई था ही नहीं, कैसे सर्वज्ञ हैं? बुद्ध यह कहते हैं कि मैंने ऐसा सुना है एक ऐसे घर के सामने भी उन्होंने भीख मांगी थी, जिसमें कोई था ही नहींं। घर खाली पड़ा था। कैसे सर्वज्ञ हैं? घर के भीतर कोई नहीं, यह पता नहीं चलता, तीनों काल कैसे पता होंगे? अब यह भी किसी ने बुद्ध को आकर कहा है, यह भी बुद्ध को किसी ने आकर कहा है, बुद्ध कहते हैं, इसलिए सर्वज्ञ वगैरह कोई नहीं होता। ये कैसे सर्वज्ञ हैं?
मैंने सुना है कि कभी कोई मुझसे कहता था कि सुबह वह चलते थे, रास्ते पर अंधेरा था, कुत्ते की पूंछ पर पैर पड़ गया। जब कुत्ता भौंका, तब उन्हें पता चला था कि कुत्ता सोया है। समझे न, ऐसे कैसे सर्वज्ञ हैं जिन्हें यह ही पता नहीं चलता कि कुत्ता सोया है? और तीन काल की बातें जानते हैं? नहीं जानते होंगे। कोई सर्वज्ञ नहीं है। मेरा मतलब समझे न? अब ये सब बातें धीरे-धीरे रिपोर्ट की गईं, ये सब लिखी गईं, ये सब इकट्ठी की गईं, और फिर जिसने इकट्ठी की तो उनके मन में तो पूरा वैमनस्य भाव है। वह चीजों को सरलता से तो ले नहीं सकते। वह सब इकट्ठी की गई होंगी, उनमें कटुता भरी गई होगी अच्छी तरह से, शब्द पैने किए गए होंगे। क्योंकि वह तो पंथ जो है उनका।
कठिनाई क्या होती है कि हम जो देखते हैं, महावीर को हमने कैसा देखा? वह हमने लिखा। महावीर कैसे हैं? वह जानना मुश्किल है, एकदम मुश्किल है न। और महावीर का मार्ग क्या है, वह भी लोगों ने जैसा देखा, लोगों ने देखा कि घर छोड़ दिया, द्वार छोड़ दिया। तपश्चर्या करते हैं। भूखे बैठे हैं, उपवास करते हैं, बारह साल में एकाध साल मुश्किल से खाना लिया है। वह तीन-तीन चार-चार महीने भूखे रहे हैं। यह आदमी कैसा यह? यह तो सीधा दमन है। क्योंकि हमें भूख लगती है। और अगर हम उपवास करें तो हमें दमन करना पड़ता है भूख का। हम यह सोच ही नहीं सकते कि ऐसी चित्त-दशाएं भी हैं जहां भूख विदा हो जाती है। हमारी जो कठिनाई है कि हमें तो यह दमन लगता है, हम अगर उपवास करें तो हमें भूख का दमन करना पड़ता है। तो महावीर दमन कर रहे हैं, तो दमन का मार्ग है

उनका, लेकिन ऐसी चित्त की अवस्थाएं हैं, जहां भूख एकदम विदा हो जाती है, जहां भूख रहती ही नहीं। और ऐसी अवस्था में ही कोई चार महीने तक उपवास कर सकता है। नहीं तो कर ही नहीं सकता। चार क्या वह बहुत दिनों तक भी कर सकता है, उसका कारण यह है कि, उसका कारण यह है कि ऐसी अवस्थाओं का उन्हें खयाल नहीं है। इन अवस्थाओं में कोई खयाल नहीं है, ऐसी अवस्थाएं हैं, जहां भूख मिट जाती हैं। तो मैं नहीं कहता कि महावीर ने उपवास किए, मैं कहता हूं कि महावीर से उपवास हुए। फिर दमन का सवाल नहीं रह जाता। वह जिस ध्यान के प्रयोग में लगे हैं, उस प्रयोग में बहुत बार ऐसा हो जाता है कि शरीर भूल ही गया। शरीर रहा ही नहीं। और इसलिए उपवास शब्द का उपयोग किया गया। अनशन अलग बात है। अनशन में दमन है। नहीं खाना उसका भाव है। उपवास का मतलब है, आत्मा के पास रहना। उसमें खाने, न खाने से कोई मतलब ही नहीं कोई। उपवास शब्द में खाने का सवाल ही नहीं है कहीं। उस शब्द में भी उपवास है वह, आत्मा के पास रहना, उसके निकट रहना। तो जब उसके कोई निकट पहुंचता है, शरीर भूल जाता है। शरीर की भूख-प्यास भूल जाता है। उपवास का मतलब भूखे मरना नहीं है। उपवास का मतलब भोजन छोड़ना भी नहीं है। उपवास का मतलब ऐसी अवस्था में पहुंच जाना हैं, जहां आदमी आत्मा के पास जीता है, और शरीर भूल जाता है। शरीर भूल जाता है, शरीर की भूख भूल जाता है। याद ही नहीं आती। महीनों गुजर जाते हैं, जब वह अवस्था टूटती है, तो फिर याद आती है। और अगर ऐसा हो जाए तो इसमें दमन है ही नहीं,
कहीं कोई दमन का सवाल ही नहीं। पकड़ते हैं हम अपनी तरफ से, है न हमारे लिए जो दमन है, वह सबके लिए दमन है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

अनशन से तो आएगा। उपवास से नहीं। अनशन से आएगा। अगर तुमने भूख, जरा भी नहीं, क्योंकि असल मामला यह है कि हमें जरा भी पता नहीं कि शरीर और बहुत तरह से अपनी जरूरतें को पूरी कर लेता है।
अभी एक औरत है यूरोप के किसी हिस्से में। जिसने कोई बीस वर्षों से भोजन नहीं लिया। बीस वर्षों से किसी तरह का भोजन नहीं लिया। परिपूर्ण स्वस्थ है और उसका एक रत्ती भर वजन कम नहीं हुआ बीस वर्षों में। हां, जो मिरेकल है वह यह है। एक रत्ती भर वजन उसका कम नहीं हुआ है। और वैज्ञानिक परेशान हो गए हैं कि क्या, क्या मामला क्या है? धोखा-धड़ी है यह तो, तो सारा उपाय किया गया। जांच की गई तो धोखा-धड़ी नहीं है। और चूंकि उसने भोजन नहीं लिया, इसलिए वह पखाना भी नहीं गई है। सवाल ही नहीं है वह जाने का उसका। तो उसके अध्ययन से जो खयाल आता है वह यह आता है कि बॉडी का पूरा मैटाबॉलिज्म जो है, वह बिल्कुल नये ढंग से काम करने लगा है। और वह पूरा श्वास से किरणों से पूरी प्राप्ति कर रहा है। ऐसे भी हम कर क्या रहे हैं? हमें कुछ खयाल में नहीं है। ऐसा भी नहीं है कि आप सब्जी लाए और खाएं। सब्जी में सूरज की किरण गई और एक विटामिन बनी। फिर सब्जी को आपने पचाया वह विटामिन फिर से टूटा और आपके शरीर में गया। आज नहीं कल, यह संभावना है ही कि विज्ञान भी ऐसा रास्ता खोज लेगा कि यह इतना बीच की सब्जी को लेने की कोई जरूरत न रहे, एक आदमी सूरज की किरणों में खड़ा हो गया और वह जो विटामिन पहले सब्जी पीती है और वह फिर तुम्हें लेना पड़ता है। क्योंकि वह सब्जी में कुछ चीजें मिल कर वह इस योग्य बनता है, कि हम उसे पचाएं।
एक गाय ने घास खाई, घास हम नहीं खा सकते क्योंकि घास को सीधे हमारा शरीर नहीं पचा पाता। पहले गाय उसे खाती है। फिर गाय उससे दूध बनाती है। वह उसी घास से बनता है। फिर वह दूध हमारे पचाने योग्य हो गया। अब हम उसे पी लेते हैं और हमें पच जाता है वह। तो आज नहीं कल हम मशीन बना सकते हैं कि घास से सीधे दूध निकले, क्यों गाय को बीच में उपद्रव देना है? आखिर कुछ कैमिकल काम ही हो रहा है न गाय के पेट में वह मशीन कर सकती है। और परसों यह भी हो सकता है कि घास ही कोई सीधा खाए। शरीर में कुछ व्यवस्था होनी चाहिए। तो कई बार शरीर का मैटाबॉलिज्म पूरा का पूरा, जो व्यवस्था है, वे नये ढंग से काम करने लगती है। तो किन्हीं चित्त-दशाओं में वह इतने ढंग से कम कर सकती हैं।

और इसीलिए महावीर के जो शिष्य हैं, उनके अनुयायी हैं, मुनि हैं, साधु हैं, वह एक महीने का उपवास कर रहे हैं, तो उनकी हालत देखो। महावीर के शरीर को देख कर ऐसा नहीं लगता कि इस आदमी ने उपवास कभी भी किया हो। महावीर की जो मूर्ति चली आई है उसे देख कर ऐसा नहीं लगता कि इस आदमी ने भूल कर भी कभी उपवास किया हो। वह उपवास जैसा शरीर नहीं मालूम होता है यह। हां, तो इसका मतलब ये है शरीर और योग ने बहुत सी खोज-बीन की थी इस बाबत।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

दमन है सब दमन... । बहुत संभावनाएं है। इस मामले में। पहली बात तो यह है
कि बुद्ध ने अनाहार ही किए। तो अनाहार तो कभी नहीं होता। तो अनाहार व्यर्थ सिद्ध हो गए। और महावीर ने अनाहार नहीं किया। उपवास हुआ, वैसा उपवास बुद्ध को नहीं हुआ। और हजार व्यक्ति हैं, और हजार ढंग के मार्ग हैं। और हजार मौके हैं, कहां से घटना घटेगी, यह नहीं कहा जा सकता। और कोई किसी को पकड़ कर चाहे कि ऐसा मैं करके घटा लूं तो बिल्कुल गलती में पड़ जाता है। एक आदमी समझो ट्रेन से गिर पड़ा। और दिमाग उसका खराब था। ट्रेन से गिरा सिर को चोट लगी और वह ठीक हो गया। अब आपने सोचा ये तरकीब बड़ी अच्छी है, जब दिमाग खराब हो ट्रेन से गिर जाओ। तो आप मरे, अगर दिमाग ठीक भी था तो और खराब हो गए। पर्टीकुलर सिचुएशंस हैं। पर्टीकुलर व्यक्तित्व हैं, उस व्यक्तित्व का, उस घटना का एक-एक क्षण का, एक-एक, अलग-अलग मौका है। कुछ भी नहीं कहा जा सकता। तो वह इतनी बड़ी दिक्कत होती है खड़ी, कि नकल पट्टी ती है, वह उसने ऐसा किया, वैसा हम भी करें। यह सब ट्रेन से गिरने वाले मामले हैं कि महावीर को उपवास से आनंद हुआ, ज्ञान हुआ तो पागल हैं इकट्ठे वे उपवास कर रहे हैं।

प्रश्नः भक्ति-भाव की बात चल रही थी न अभी, तो राजकमल जी तो मेरे खयाल
से भक्ति-भाव को ठीक समझते होंगे।

भक्ति-भाव का प्रयोग कर रहे हैं वह भी बहुत गहरा नहीं है, वह भी बहुत गहरा नहीं है। बहुत चलता है लेकिन, बहुत गहरा नहीं है, और महावीर को समझे हैं ऐसा भी नहीं है। वह बिल्कुल ही दमन पर ही टिका हुआ मामला है। त्रिमत का तो एकदम दमन पर टिका हुआ मामला है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न, न, न, लाइन का सवाल नहीं है बड़ा, लाइन का बड़ा सवाल नहीं है।

प्रश्नः नहीं इसमें बहुत कष्ट दिखें हैं?

न, न, न, वह भी कष्ट किसी को दिख सकता है, किसी को, किसी को नहीं दिख सकता। एक-एक व्यक्ति के लिए भेद पड़ जाता है, भेद पड़ जाता है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

पंथ तो पागल बंधने वाले होते हैं। न, पागलों को उन्हीं चीजों में उत्सुकता है। जीवन की गहरी चीजों में उत्सुकता नहीं है, उनको इतनी ही उत्सुकता है। गुणा हमसे कहती है न, कि चमत्कार दिख लाइए। पागलों को इसी में उत्सुकता है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हमारा मजा यह है कि जो जिसको देखता है वह वैसा ही सोचता है, रमण वाला, रमण वाला मानता है कि इधर पांच सौ साल में ऐसा आदमी हुआ ही नहीं। अरविंद वाला मानता है कि पांच हजार वर्षों में ऐसा आदमी खोजना मुश्किल है।

कृष्णमुर्ति वाला मानता है कि आदमी हुआ ही नहीं नहीं ऐसा। गांधी वाला भी वहीं मानता है। रामकृष्ण वाला भी वही मानता है। यह हमारा मानना है न। यह हमारे राग, हमारे प्रेम का लक्षण है। और कुछ नहीं, इसमें कोई दूसरा मामला नहीं। ये आप मानते हो आपका प्रेम हो गया है, तो आपको लगता है ऐसा।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

पिछले जन्म का स्मरण हो सकता है, कोई कठिन बात ही नहीं है, आप चाहो आपको हो सकता है, थोड़ी प्रक्रिया की बात है, बड़ी साधरण सी सरल सी तरकीब है।

प्रश्नः आपने कहा था इक्कीस दिन में हो सकता है, बिल्कुल इक्कीस दिन में हो सकता है?

बिल्कुल हो सकता है करने की बात है बस।

प्रश्नः इसके लिए किसी बैकग्राउंड डिप्रेशन वगैरह की कोई जरूरत नहीं?

न, न, न, बिल्कुल मेथड की बात है, जैसे कि यह दीवाल है, और उस तरफ क्या है, हमें नहीं दिखाई पड़ रहा है, और एक छैनी लेकर हम तोड़ने लग गए हैं, इसको हमने तोड़ दिया तो छेद हो जाएगा। उससे हमें दिखाई पड़ना शुरू हो जाएगा। तो हमारे प्रत्येक जन्म के बाद और उसकी स्मृतियों का जो संग्रह होता है, और नये जन्म के बीच एक गैप है छोटा सा, खाली, जो उसी का गैप है और कुछ भी नहीं। जब आदमी मरता है तो घबड़ाहट में बेहोश हो जाता है, और उस बेहोशी का जो पीरियड है, वह गैप बन जाता है, पिछली स्मृति अलग पड़ जाती है, और ये स्मृति फिर शुरू होती है। बस उस गैप को तोड़ देने की बात है। और उसके प्रयोग हैं जो उसकी छैनी लेकर तुम उस गैप को तोड़ डालो। तो उस तरफ की स्मृतियां तुम्हें दिखाई पड़नी शुरू हो जाएंगी।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हो वह कोई प्रयोग कर रहे होंगे, वह बहुत गहरा नहीं है। बहु चलता है लेकिन बहुत गहरा नहीं है। और महावीर को समझें हैं वह ऐसा भी नहीं है। वह बिल्कुल ही दूमन पर ही टिका हुआ मामला है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

नहीं लाइन का सवाल नहीं है बड़ा। वह भी कट किसी को दिख सकता है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

पंथ तो पागल बनाने वाले होते हैं न, पागलों को उन्हीं चीजों में उत्सुकता है जीवन की कोई गहरी चीजों में उत्सुकता नहीं है। वह कहते हैं चमत्कार को नमस्कार। पागलों को इसी में उत्सुकता है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

राजचंद्र की किताबों में कुछ भी नहीं है ऐसा जो मौलिक है? सिर्फ लिखा है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हमरा मानना यह है कि जो जिसको देखता है, वह ऐसा ही सोचता है। रमण वाला मानता है कि इधर पांच सौ साल में ऐसा आदमी नहीं हुआ, रमण महार्षि जैसा।

प्रश्नः अगर समझपूर्वक मृत्यु हुई, बेहोशी में नहीं हुई?

हां, तो पिछला जन्म याद रह जाएगा। तो याद रह जाएगा।

प्रश्नः आदमी अगले जन्म में आदमी ही होता है, यह जरूरी है? पिछले जन्म में भी वह आदमी था, यह जरूरी है?

पिछले जन्म में तो वह कोई भी हो सकता है। अगले जन्म में आदमी से ऊपर जा सकता है, पीछे नहीं जा सकता। नहीं पीछे जाना होता ही नहीं असल में, यानी जो विकास है, उसमें पीछे जाने का कोई उपाय ही नहीं है। तुम जवान हो तो तुम बूढ़े हो सकते हो, बच्चे नहीं होगे। हालांकि जवान जब तुम नहीं थे तो बच्चे हो सकते थे। बच्चे थे।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

नहीं आदमी से आगे और होने की संभावनाएं हैं। बहुत से शरीर रहित अस्तित्व हैं, जिनको देवता कहते रहे हम। शरीर रहित अस्तित्व हैं।

प्रश्नः हवा के अंदर जो आत्माएं फिरती हैं वही?

हां, तो वहां जा सकती हो या पीछे लौट सकती हो। पीछे लौटने का मेरा मतलब
न पीछे नहीं लौट सकती हो या आदमी ही रह सकती हो बार-बार। पीछे गिरना नहीं होता।

प्रश्नः रमण महर्षि की किताब में है कि... बहुत झगड़ा करती थी। और उसकी डेथ हो गई। बाद में वह... करके रोई और मुक्ति दिलवाई।

न, अब सब यह, बड़े मजे यह हैं, बड़े मजे यह है कि यह यही कठिनाई होती है।
कि अब जैसे मैं कहूं कि यह सब गलत है, और फिर कल कोई किताब लिखी जाएगी उसमें लिखा जाएगा कि मैंने रमण महर्षि को गलत कहा। यही तो मुश्किल हो रहा है न, यही तो मुश्किल है। यह बात गलत है।

प्रश्नः फिर पीछे लौटना होता ही नहीं, असंभव ही है।

वह सिर्फ एक भय पैदा करने की बात है, वह सिर्फ भय पैदा करने की बात है, ताकि आगे चलने के लिए कुछ करो, और कुछ कारण नहीं है। टोटल नंबर इनफिनिट है। यह सारी कठिनाई है। पीछे जाने का उपाय ही नहीं है कहीं कोई, किसी तल पर पीछे जाना ही नहीं होता। सब जाना आगे जाना है, और कठिनाई इसलिए हो जाती है कि अगर तुम पूछोगे कि घटती-बढ़ती है, तो मैं कहूंगा, नहीं घटती-बढ़ती। लेकिन इससे यह मत समझ लेना कि कोई सीमित संख्या है आत्माओं की। हां, संख्या तो असीम है, अनंत है। लेकिन अनंत घटता बढ़ता नहीं।
कितने लोग आ गए हैं, तेरे घर में मच्छर हैं, इतने मोहल्ले में आदमी नहीं। अगर आत्माओं का हिसाब रखेगी पीछे तो आदमी जो है वह सबसे छोटी स्थिति है, सबसे छोटी जाति है। साढ़े तीन अरब है। एक गांव में साढ़े तीन अरब मच्छर मिल जाएंगे। अगर एक गांव के मच्छर ही मुक्त हो जाएं तो पूरी आदमियत बन जाएगी। असल में बुरा करना जो है न, वह भी आदमी की ही संभावनाएं हैं, पशु तो बुरा कर ही नहीं सकता। बुरा करो या अच्छा करो, आदमी से नीचे जाने का उपाय नहीं है। बुरा करके बुरे आदमी रहोगे। मेरा मतलब समझ रहे हैं न।

प्रश्नः जैसे लोग बताते हैं कि यह पाप है, यह पुण्य है इसकी बाबत?

बस तुम्हारी शांति और आनंद बढ़ना चाहिए बस। तुम्हारी शांति और आनंद बढ़ना चाहिए।

प्रश्नः अभी आपने कहा कि बुरा करो, बुरे आदमी बनोगे, ज्यादा नीचे नहीं जाओगे। तो पिछले टाइम हमने कहां-कहां गलती की?

बुरे आदमी का मतलब यह है कि समझ लो आज दिन भर मैंने बुरे काम किए। तो
फल तो मैं दिन भर भोगूंगा, जब गाली दूंगा, तब फल मिल जाएगा। फल तो पूरे वक्त भोग लूंगा। मैंने दिन भर गालियां दीं, मैंने बुरे फल दिन भर भोगे। तुमने दिन भर अच्छे काम किए, तुमने दिन भर अच्छे फल भोगे। हम दोनों एक ही कमरे में सोए। हम दोनों ने फल भोग लिए लेकिन हम दो भिन्न तरह के व्यक्ति हो गए। क्योंकि मैंने दुख भोगे दिन भर, तुमने सुख भोगे दिन भर। हमारी दोनों की नींद भिन्न होगी। फल की वजह से नहीं कि चौबीस घंटे मैंने गाली खाईं, झगड़ा किया, मार-पीट की उलटा-सीधा सब हुआ तो मैं एक चित्त लेकर सोया। तुम दिन भर शांति आनंद में बिताए, तुम दूसरा चित्त लेकर सोए। फल हम दोनों ने भोग लिए, लेकिन जो हमने किया, जो हमने भोगा, उसमें हम भिन्न हो गए। रात हम दोनों की अलग होने वाली है। सुबह हम दोनों अलग आदमी उठेंगे। अलग आदमी इन अर्थों में कि अगर तुम उठे और तुम्हें नाश्ता थोड़ी देर से आया तो तुम गाली नहीं बकने लगोगे। मेरी संभावना है कि नाश्ता देर से आया तो मैं गाली बकूंगा। और संभावना क्या है, संभावना यह है कि मेरा पूरा अनुभव उस तरह का है। फल तो मैंने भोग लिए, फल में नहीं बचा कुछ।

प्रश्नः यह तो वही बात है जैसा आपने कहा कि ध्यान सबमें रहता है।

ठीक वही न, एसेंशियल जो था, वह मेरे साथ रह गया।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

तुम आदमी होंगे पशु प्रवृत्तियों के होंगे।

प्रश्नः आदमी रहेंगे?

रहेगे आदमी ही।

प्रश्नः गुरुजी आपने कहा है कि मनुष्य के पास और दूसरी योनियां हैं?

मैं कुछ नहीं कह रहा हूं, और योनियां हैं आगे।

प्रश्नः तो मोक्ष के बाद भी वे पुनर्जन्म लेते होंगे?

योनियों में तो पुर्नजन्म चलता ही रहेगा, मोक्ष योनि नहीं है, योनि से मुक्त हो जाना। समझे न?

प्रश्नः आगे किसी... में नहीं जाएगा मनुष्य? मनुष्य की स्थिति है, उससे
और आगे की स्थिति नहीं?

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

हां, अब यह बिल्कुल दूसरा मामला है, असल मामला यह है कि हम मनुष्य जो हैं अब तक के शरीर की योनियों में आखिरी कड़ी हैं। शरीर की योनियों में। जिनके पास शरीर है उन योनियों में मनुष्य आखिरी कड़ी है। इसके एक चौक पर मनुष्य खड़ा हुआ है, जहां शरीर की योनियां समाप्त होती हैं। और जहां से दो

मार्ग जाते हैं इस चौरस्ते से। एक मार्ग है और योनियों का, अशरीरी योनियों का। देवता, भूत-प्रेत इत्यादि का, और एक मार्ग है अयोनी का, मोक्ष का। और इसलिए मैंने कहा कि वे जो योनियां हम कह रहे हैं, वे आगे की योनियां है, ऊंची नहीं, और इसलिए उनसे पीछे लौटना होता है। मनुष्य तक आना होता है उन्हें। मनुष्य से नीची योनी नहीं है। तुम उससे आगे बैठे हो सिर्फ, उससे ऊंची नहीं। सिर्फ अशरीर है बस इतना फर्क है उनका। तो वे जो अशरीरी योनियां हैं। यह समझ लो की चौरस्ता है, और वहां से मैं इस घर तक आया, उस चौरस्ते से एक रास्ता और जाता था, दूसरी तरफ अब मुझे उस तरफ जाना है। तो मैं वापस लौटूंगा उस चौरस्ते तक, अब फिर उस रास्ते पर जाऊंगा।
तो मनुष्य योनी जो है वह क्रॉस रूट्स पर है। पशुओं को अगर मुक्त होना
है, तो मनुष्य तक आना पड़ेगा। देवताओं को मुक्त होना है, तो मनुष्य तक आना पड़ेगा। वह क्रॉस रोड पर है, खड़ा व्यक्तित्व जो है। जाएगा वहीं से कोई भी मोक्ष की तरफ, वह चाहे आज चला जाए, चाहे वह कल, देवताओं की योनियों में लौटे और भट कर और लौटे और जाए। ऊपर मोक्ष है, वे सब योनियों से ऊपर हैं। इसलिए वह अयोनी है, आगे और हैं अशरीरी योनियां हैं, और उनका भी पुर्नजन्म है। और मनुष्य चौरस्ते पर खड़ा हुआ है। इसलिए कहीं भी जाना हो तुम्हें तो चौरस्ते पर आना पड़ेगा। और पीछे कोई नहीं जाता इसलिए पीछे जाने का कोई अर्थ ही नहीं रह जाता। जैसे कि एक बच्चा एक क्लास पढ़ रहा है, और दूसरी क्लास पढ़ रहा है, या तो वह तीसरी क्लास में जा सकता है, या दूसरी क्लास में रह सकता है, या स्कूल छोड़ सकता है, लेकिन पहली क्लास में नहीं जा सकता। समझे न, दूसरी क्लास पढ़ रहा है, तीसरी क्लास में जा सकता है, दूसरी में ही रह सकता है, या स्कूल ही छोड़ सकता है। वह जो मोक्ष जा रहा है, वह स्कूल ही छोड़ रहा है। तुम्हारा भी झंझट खत्म। स्कूल के ही बाहर जाते हैं, अब हम क्लास-विलास में नहीं जाते। जो तीसरी क्लास में जा रहा है, चौथीं जा रहा है, वह एक यात्रा कर रहा है, लेकिन दूसरी क्लास से पहली क्लास में वापस लौटने का उपाय नहीं है। उपाय इसलिए नहीं है क्योंकि तुम पहली क्लास पास हो चुके हो, उत्तीर्ण हो चुके। और जिंदगी में सब योनियों का अर्थ यह है कि तुम एक अनुभव से गुजरो, जिससे तुम गुजर चुके हो। उस अनुभव को दुबारा लेने का कोई अर्थ ही नहीं है। तो आदमी पशुओं में नहीं भटक सकता, आदमी भटक सकता है देवताओं में। यानी आदमियों का भय जो होना चाहिए आदमी को वह पशुओं में भटकने का नहीं, क्योंकि वह तो असंभव है, आदमी भटक सकता है देवताओं के रास्ते पर। क्योंकि वह अन्जाना है अभी, और अधिक लोग उससे भटक जाते हैं। जो लोग भी स्वर्ग, पुण्य, धर्म, कर्म, उपवास इत्यादि के चक्कर में पड़े हैं वे तो उस योनि को बंद कर लेंगे। वे जो अशरीरी योनियां हैं, उसमें वे भटक जाएंगे। इसलिए मोक्ष से जो असली लड़ाई है वह पशुओं की नहीं है, असली लड़ाई जो है, वह विकल्प जो है, देवताओं वाला वह है। जिसको हम कहते हैं अच्छा आदमी, धार्मिक आदमी, साधु, संन्यासी वह उस तरफ भटकेगा।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

ज्ञान से तो कभी कोई नीचे जाता ही नहीं।

प्रश्नः नेक्स लाइफ में भी नहीं?

कभी भी नहीं। नेक्स लाइफ में क्या, कल नहीं, परसों नहीं, अनंत तक भी नहीं। ज्ञान से कभी कोई नीचे नहीं जाता। जो हमने जान लिया, उसे जान लिया, उसे अनजाना करना असंभव है। ये सुख-दुख वगैरह दूसरी बातें हैं। जैसे जो अभी सुखी है, अगले जन्म के घंटे भर बाद दुखी हो जाएगा। क्योंकि मजा यह है कि दुख सुख से नीचा नहीं है। दुख और सुख समतल पर हैं। एक ही चीज के दो पहलू हैं। यानि एक ही घर के दो कमरे हैं।

प्रश्नः हम जिसे कह देते हैं खुशी, यानी खुशी यानी क्या करना चाहें? कभी उन्होंने चाहा की मुझे दूध पिलाओ, वह मिल गया?

ठीक है, तो यही सुख हुआ न, कि दूध पीना तो मिल गया। हां, तो कल हो सकता
है कि दूध न मिले, तो दुखी हो जाएंगे। मगर दूध के मिलने और न मिलने में दोनों में समतलता है। एक ही तरह की चीजें हैं, मिलना या न मिलना। दूध ही का मिलना या न मिलना है न।

प्रश्नः लेकिन हमसे लोग कहते हैं, वे बोलते हैं, कर्म का फल मीठा है?

लोग तो हजार बातें बोलते हैं, जिनका कोई हिसाब, कोई ठिकाना नहीं है।
एक तो मेरा मानना है कि जीवन के सहज क्षण में जो आए, वही ठीक है। असहज रूप से जबरदस्ती लाना, व्यक्ति की गहरी पात्रता को नुकसान पहुंचा सकता है। यानी फिर तुम्हारी पात्रता कभी विकसित ही न हो। और यह इतना गहरा मामला है कि हमें ऊपर से खयाल में नहीं आता है, एकदम से, असल में जो होना चाहिए, वह होता ही है। उसके लिए हमें कहीं बाहर से शक्ति खोजने की आवश्यकता नहीं पड़ती।
जैसे एक कली है। अभी फूल नहीं बनी है। कोई जाके जबरदस्ती खोल कर कली
की पंखुड़ियों को फूल बना दे। फूल तो बन जाएगी, लेकिन यह वह फ्लावरिंग न हुई, जो वह होती। और अब वह फ्लॉवरिंग कभी न होगी। वह जो सहज खिलना होता फूल का, वह अब कभी न होगा, क्योंकि पंखुड़ियां तो जबरदस्ती खोल दी गई हैं। बाहर से शक्ति ने आकर पंखुड़ियों को खोल दिया, पंखुड़ियां खुलती हैं भीतर से शक्ति आती है उससे। दोनों हालत में शक्तियां आती हैं, लेकिन पहली हालत में शक्ति का अविर्भाव होता है आंतरिक और दूसरी हालत में पात हुआ ऊपर से। शक्ति अविर्भाव होना चाहिए शक्तिपात नहीं।
यह सब दूसरी बात हैं, सज्जनों की चर्चा करना करना बहुत झंझट का मामला है। उस सबमें नहीं जाना चाहिए। मैं उन व्यक्तियों की बात तुमको कहता हूं। उन व्यक्तियों को नहीं लेता फिजूल का। एक तो तुम्हारी पात्रता जितनी है, उतने ही के पाने के तुम हकदार हो। उससे ज्यादा पाने के तुम हकदार भी नहीं हो। ज्यादा की आकांक्षा करना भी बुरा है। इतनी प्रार्थना करनी चाहिए परमात्मा से कि मेरी पात्रता बढ़ा। तो जो सच्चा मित्र है, वह तुम्हारी पात्रता बढ़वाने में सहयोगी होगा। लेकिन जो तुम्हारी पात्रता नहीं बढ़वाता ऊपर से शक्ति डाल के तुम्हें ऐसे अनुभव में धकेल देता है जो तुम्हारे योग्य नहीं है, तो वह तुम्हें इतने गहरे नुकसान पहुंचाता है जिनको पूरा करने में हो सकता है, तुम्हें दुबारा ही जन्म लेना पड़े। तभी तुम पूरा कर पाओ, नहीं तो नहीं कर पाओगे।
दूसरी बात ये है कि बाहर से आई हुई कोई भी शक्ति तुम्हारे व्यक्तित्व
की जो आंतरिक हार्मनी है, उसे सदा के लिए खंडित कर देती है। तुम्हारी एक आंतरिक व्यवस्था है जीने की, शक्ति की, समझ की, तुम्हारा व्यक्तित्व बहुत जटिल है, उसमें बहुत चीजों का एक जोड़ है। छुरे की तरह एक चीज तुम्हारे भीतर प्रवेश कर सकती है। तुम्हारे भीतर बहुत से तंतु काट जाएगी। घाव कर जाएगी। और अगर वह तुम्हारे भीतर खुली रह गई तो हो सकता है कि वह जो इनर हार्मनी थी, जिसकी अपनी एक ग्रोथ थी, वह मुश्किल हो जाएगी। इसलिए बाहर से शक्ति का प्रवेश बिल्कुल ही ठीक नहीं है।
तीसरी बात यह है कि जो भी बाहर से किया जा सकता है, जैसे मैं छुरा मारूं, तो छुरा तुम्हारे शरीर से ज्यादा प्रवेश नहीं कर सकता। तुम्हारे मन में छुरा कैसे प्रवेश करेगा? छुरे का प्रवेश उसी तल तक होगा, जिस तल पर छुरा है। छुरा चूंकि मैटल है, पदार्थ है, तुम्हारे शरीर में प्रवेश कर जाएगा। तुम्हारे मन में नहीं। मैं तुम्हें एक गाली दूं। गाली तुम्हारे मन में प्रवेश कर जाएगी, तुम्हारे शरीर में नहीं। समझे न, क्योंकि गाली का तुम्हारे शरीर में प्रवेश का कोई उपाय ही नहीं। मैटल शरीर तक प्रवेश कर सकता है। माइंड से किया हुआ कुछ माइंड तक प्रवेश कर सकता है। तो जितना शक्तिपात है वह चूंकि माइंड से ही किया जाता है, इसलिए आत्मा तक तुम्हें कभी नहीं ले जाता। काउंटरफीट एक्सपीरिएंसिस की गुंजाइश है सदा। यानी ठीक आत्मा जैसे अनुभव मन में हो सकते हैं, ठीक आत्मा जैसे, लेकिन आत्मा के

नहीं। और अगर वह तुम्हें हो जाएं तो तुम उसी तल को आत्मा समझ लोगे और भीतर कभी गत नहीं करोगे। मन के साथ जो सबसे बड़ा मजा है, वह यह है कि मन है कि मैकेनिज्म काउंटर फीट को पैदा करने का। जैसे दिन भर तुमने खाना नहीं खाया। रात तुम्हारा मन एक बीम पैदा करेगा, जिसमें तुम खाना खा रहे हो। और सपने में तुम कोई फर्क नहीं कर सकते हो कि इस खाने में और राते के खाने में कोई भी फर्क हो सकता है। वह खाना बिल्कुल असली मालूम होगा। होगा न, जरा भी संदेह नहीं होगा, बल्कि यह भी हो सकता है असली खाने से भी ज्यादा सुखद मालूम पड़े। हां, क्योंकि एकदम मन का ही मामला है, कोई मैटल है ही नहीं वहां, इसलिए जितना सुखद चाहो, हो सकता है। सुबह जाग कर तुम्हें पता चलेगा कि यह तो धोखा हो गया। क्योंकि तुम चाहे रात में कितना ही सपना देखो, खाना खाने का, तुम्हारे शरीर की भूख को वह नहीं छू सकता। क्योंकि मन कभी भी शरीर में प्रवेश कैसे करेगा? रात भर तुम सपना देखो खाना खाने का, सुबह तुम भूखे के भूखे उठोगे। मेरा मतलब समझे, तो मन में जो संभावनाएं हैं, वह सब्स्टीट्यूट पैदा करने की करीब-करीब एक जैसे पैदा कर देता है।
जैसे आदमी किसी स्त्री को प्रेम करता है। वह उसे नहीं मिली तो वह पागल
हो गया। और अब वह उसी स्त्री से बैठा हुआ बात कर रहा है, वह स्त्री वहां है नहीं, मगर वह उससे बात कर रहा है। मन ने सब्स्टीट्यूट पैदा कर दिया है। अब पाने की जरूरत ही नहीं रही उसकी। अब वह सोता है, वह जानता है वह स्त्री उसके पास सोई हुई है, वह उसके पास बैठी हुई है। वह उससे बातें करता है। वह उसके साथ जीने लगा। और ये जीना असली स्त्री के साथ जीने से भी सुखद हो सकता है। क्योंकि असली स्त्री कई तरह के उपद्रव कर सकती है। झगड़ा कर सकती है। यह स्त्री कुछ भी नहीं कर सकती। यह हमारे ही मन का खेल है। इसलिए इसके साथ कोई झगड़ा नहीं, कोई डाइवोर्स का उपाय नहीं, कोई झंझट नहीं, कोई बात नहीं। मन में काउंटरफीट पैदा कर दिया है। नकली सिक्का पैदा कर दिया है। जिससे अब तृप्ति हो गई है। अब यह आदमी, वह स्त्री भी आ जाए तो उसकी फिकर नहीं करेगा। वह असली स्त्री आकर खड़ी हो जाती है, वह उसकी तरफ देखेगा भी नहीं। वह भी इसको आकर समझाएगी कि तुम किस पागलपन में पड़े हो? लेकिन उसकी स्थिति में तो दूसरी पैदा हो गई, वह स्त्री इसके मतलब की नहीं।
तो मन का यंत्र सबसे बड़ा जो खतरा पैदा करता है, वह यह कि वह ठीक नकली सिक्के पैदा करना जानता है। और दूसरे के मन से तुम जो भी करवाओगे वह सिर्फ तुम्हारे मन में नकली सिक्के पैदा करने का धक्का पहुंचाएगा। तो तुम्हें शांति मिल सकती है। प्रकाश मिल सकता है। आनंद मिल सकता है। सब, लेकिन सब काउंटरफीट। और जिस दिन तुम जागोगे, वह जागना दूसरा है, यह जागना नहीं सुबह का। जिस दिन तुम जागोगे, उस दिन तुम पाओगे ये सपने में मैं जो समझता रहा, सब दिमागी खयाल था। इसमें कुछ मामला नहीं। मामले तो बहुत गहरे हैं न, सारी चीज के मामले बहुत गहरे हैं, लेकिन हम तो सत्य की तलाश में होते हैं। कोई भी जिसको सदगुरु कहे, ऐसे आदमी ने कभी ऐसे काम नहीं किए। क्योंकि उसकी समझ और गहरी है। आज सिर्फ इतना ही थोड़ी मामला है कि तेरे को कोई अनुभव हो जाए, इसका थोड़ी सवाल है। बहुत भारी सवाल है, तेरे व्यक्तित्व का पूरा सवाल है। जो तुझे सहायता पहुंचाना चाहता है, वह सहायता ऐसी होनी चाहिऐ कि तुझे कहीं भी कोई नुकसान न पहुंच जाए।
चीन में एक रिवाज है। गुरु के मरने पर गुरु की मरणतिथि पर उसके शिष्य उत्सव मनाते हैं। याद करते हैं उसे। एक बहुत प्रसिद्ध फकीर था, वह उत्सव मना रहा था। तो एक आदमी उसके पास आया और उसने कहा कि किसका उत्सव मना रहे हो? तुम्हारे गुरु का? क्योंकि वह उत्सव गुरु के लिए ही मनाया जाता था। उसने कहा कि नहीं, मेरे गुरु का नहीं। उसने कहा कि यह उत्सव तो अपने गुरु के लिए ही मनाया जाता है। फिर क्यों मना रहे हैं? उसने कहा कि मैं इसलिए मना रहा हूं क्योंकि एक आदमी इस दिन मरा जिसने मेरा गुरु होने से इनकार कर दिया था। उसकी स्मृति में मना रहा हूं। क्यों? उसने कहाः अगर वह मेरा गुरु बन गया होता, तो मैं सदा के लिए भटक जाता। यह मैं आज जानता हूं, उस दिन तो मुझे बहुत दुख हुआ था। उस दिन तो मुझे बहुत दुख हुआ था कि मैं इतनी उससे प्रार्थना कर रहा हूं, उसने कहा कि नहीं। मैं किसी का गुरु नहीं बनूंगा। मेरे पास रहना हो तो बिना शिष्य बने रह सकते हो। यह शर्त रही थी उनकी। मेरे

साथ रहना हो तो बिना शिष्य बने। मैं तुम्हारा गुरु नहीं हूं। और जब मुझे ज्ञान हुआ, तब मैंने जाना कि उसकी कितनी अपरंपार कृपा थी। उसने गुरु होने से इंकार कर दिया, क्योंकि जैसे ही वह गुरु हो जाता, मैं सुस्त हो जाता। उसकी कृपा चली जाती। उसने कहा कि मैं तेरा साथ ही नहीं करने वाला हूं कुछ। मैं कुछ कर ही नहीं सकता हूं। तुझे ही करना होगा। इतना कह सकता हूं क्या करना है। लेकिन आज मैं जानता हूं कि उसकी बड़ी कृपा थी, और आज उसका स्मरण करता हूं। अगर वह मेरा गुरु बन जाता तो मैं गया था। मैं भटक जाता। वह नहीं बना और मैं बच गया। और मैंने वह जान लिया, जो स्वयं ही जानना होता है, जिसे कोई दूसरा नहीं जान सकता।
तो आत्मा को तो तुम स्वयं ही जान सकते हो। कोई दूसरा उपाय है ही नहीं। हां, मन तक दूसरे का प्रवेश हो सकता है।
तो सब शक्तिपात मन की सीमा के भीतर होते हैं। और तुम्हारे मन को प्रभावित किया जा सकता है। तुम्हारे शरीर को भी प्रभावित किया जा सकता है। लेकिन तुम्हारी आत्मा को नहीं। असल में आत्मा है ही वह, जो कभी भी प्रभावित नहीं की जा सकती। क्योंकि वह स्वयं परमात्मा है उसको कोई प्रभावित कर ही नहीं सकता। समझे न, तो उसको प्रभावित करने का उपाय ही नहीं है। इसलिए शक्तिपात जैसी बातों में, बच्चों जैसी बातों में नहीं आना चाहिए। बहुत नुकसान की बात है।
मन नहीं रहा न, वह ही मैं कह रहा हूं। सब अर्ज वगैरह मन की हैं। आत्मा
के पास कोई अर्ज नहीं है। सब कांशस वगैरह सब मन के हैं। आत्मा से कुछ लेना- देना नहीं है। आत्मा तो वहां अनुभव होगी, जहां कोई अर्ज ही नहीं है। न कम्पेनियन की जरूरत है, न गुरु की जरूरत है, अर्ज ही नहीं है वहां कोई। तो मन में उठने वाली इच्छाओं की तृप्ति करवाई जा सकती हैं लेकिन वे मन की ही इच्छाएं हैं। और अगर आत्मा में जाना हो तो मन को ही छोड़ना है ए.ज ए टोटेलिटि, मन के किसी अनुभव का वहां कोई मूल्य नहीं। मन के दुख का मूल्य नहीं है। मन के सुख का मूल्य नहीं है। मन के प्रेम का मूल्य नहीं है, मन की घृणा का मूल्य नहीं है। मन के अज्ञान का कोई मूल्य नहीं है, मन के ज्ञान का भी कोई मूल्य नहीं है। मन का ही मूल्य नहीं है वहां, बी ऑन माइंड है वहां, यानी मन के सारे अनुभव ही छोड़ के चले जाने हैं। और यह जो शक्तिपात इत्यादि हैं, वह मन का ही अनुभव है। और उसको पकड़के रुक जाएंगे आप तो आगे जाएंगे नहीं। इस तरह की आकाक्षाएं ही नहीं करनी चाहिए।

प्रश्नः चौबीस घंटे राम-नाम जपना कोई ध्यान नहीं है?

यह सब मन का मामला है, इसमें कुछ आत्मा का मामला नहीं है। वह मन ही है
न, मन की गति चल रही है। इसमें क्या फर्क पड़ता है। इसमें कुछ आत्मा का मामला नहीं है। और मैं मानता हूं कि आपको नुकसान पहुंचा। मैं मानता हूं कि आपको नुकसान पहुंच गया। क्योंकि आप उसको गति समझ रहे हैं उसमें रस ले रहे हैं आप, चले जा रहे हैं। आपको नुकसान पहुंचा।
नहीं, यह चिंतन कोईर् ध्यान नहीं है।

प्रश्नः तो ध्यान की आवश्यकता है ही नहीं? सुबह बैठना है, ऐसा करना है यह?

ध्यान बड़ी अलग बात है, बहुत अलग बात है।

प्रश्नः चित्त-शुद्धि बिल्कुल नहीं होती?

चित्त को शुद्ध नहीं करना है, चित्त से मुक्त होना है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

यानी कोई आदमी हमसे कहे कि मेरे हाथ में लोहे की जंजीरें हैं। तो पहले इनको मैं सोने की जंजीरें बनाऊंगा। फिर मैं मुक्त होऊंगा। फिर वह कहे की लोहे की जंजीर जरा बुरी जंजीर हैं, सोने की जंजीर जरा अच्छी है। पहले मुझे सोने की जंजीर डालने दो, फिर इसके बाद देखेंगे। मैं समझता हूं वह बिल्कुल पागल है। जंजीर तोड़नी है, सोने से और लोहे से थोड़ी सवाल है। मन शुद्ध है कि अशुद्ध है, यह सवाल ही नहीं है। मन तोड़ना है। और ध्यान रहे, कि लोहे की जंजीर तोड़ना सदा आसान है सोने की जंजीर से। क्योंकि सोने की जंजीर गहना बन जाती है। इसलिए अशुद्ध चित्त जल्दी टूट सकता है बजाय शुद्ध चित्त के। इसलिए कई बार पापी परमात्मा को पहुंच जाते हैं और संन्यासी नहीं पहुंचते।

प्रश्नः ध्यान, ध्यान के बारे में कुछ?

तू किसी कैंप में नहीं आई अब तक न ध्यान के? तीन दिन ध्यान का प्रयोग कर, चिंतन-विंतन तो सब बच्चों का काम है, मत करो। कुछ और करना पड़ेगा।

प्रश्नः मैं आपको एक सवाल पूछना चाहता हूं, अबाउट डवलपमेंट ऑफ इंट्यूशन, आपका क्या खयाल है? हाउ डवलप इंट्यूशन?

असल में इंट्यूशन डवलप करना हो तो इंटलेक्ट छोड़नी ही पड़ती है। क्वाइट
दि अपोजिट। नॉट इंटलेक्ट लेस दि इंट्यूशन। जितना इंटलेक्चुअल माइंड होगा उतना ही इंट्यूशन डवलप करनी मुश्किल बात है। कठिन है बात। और इसीलिए एक प्र्रीमिटिव में इंट्यूशन मिल जाएगी। एक जंगली में इंट्यूशन मिल जाएगी। एक गांव के ग्रामीण में मिल जाएगी। लेकिन सुशिक्षित आदमी में इंट्यूशन मिलनी मुश्किल हो जाएगी। फैकल्टी ही अलग है माइंड की, वह भी माइंड की फैकल्टी है, यह भी। लेकिन जो माइंड लॉजिक से सोचना शुरू कर देता है, उसका एक ढांचा बन जाता है। वह उसी ढांचे से दुनिया को झांकता है। और इंट्यूशन का ढांचा बिल्कुल ही लॉजिक से उलटा है। जैसे कि लॉजिक में हम कहेंगे कि ए इ.ज ए, एंड बी इ.ज बी, एंड ए कैन नॉट बी बी। इंट्यूशन में ऐसा नहीं है। ए इ.ज ए, एंड ए इ.ज बी आल्सो। वहां ऐसा फर्क नहीं है जैसा कि लॉजिक करता है, काला और सफेद को अलग अलग कर देता है। कि यह काला, ये सफेद। यह आदमी अच्छा, यह आदमी बुरा। ऐसा हम तोड़ देते हैं। लॉजिक जो है वह डुअलिस्टिक पैटर्न है चीजों को तोड़ने का। और इंट्यूशन टोटल को देखने का है। वहां हम यह नहीं कहते कि यह आदमी अच्छा, यह बुरा, वहां अच्छा आदमी भी बुरा होता है। और बुरा आदमी भी अच्छा होता है। वहां ग्रे कलर होता है, वहां व्हाइट और ब्लैक होता ही नहीं। तो जब एक दफा मांइड यह आदत बना लेता है ब्लैक-व्हाइट में तोड़ने की। कि यह मेटल, यह फलां, यह यह, सब चीजों को तोड़ कर हम देखते हैं। तो फिर हमारा जो सिंथेटिक माइंड है वह डवलप नहीं हो पाता। एनालिटिकल माइंड डवलप हो जाता है। रीजन जो है एनालिटिक माइंड है। विश्लेषण, तोड़ो, और देखो। इंट्यूशन जो है वह सिंथेटिक माइंड है। तोड़ो मत और देखो। तो इनमें से एक ही आदत विकसित हो पाती है। तो अगर हमारी सारी इंटलेक्ट की ट्रेनिंग चल रही है, सारी दुनिया में, सारा एजुकेशन, सारा कल्चर, सारी सभ्यताएं इंटलेक्ट की हो गई हैं, इसलिए इंट्यूशन बिल्कुल अनडवलप्ड रह गया।
आज भी पुरूष से स्त्री का इंट्यूशन ज्यादा गहरा है। इंटलेक्टिविटि नहीं मिल पाई है। लेकिन अब एक इंटलेक्चुल ट्रेंड आदमी क्या करे? तो दो उपाय हैं, एक तो उपाय ये है कि वह इंटलेक्ट के बिल्कुल एस्ट्रीम पर चला जाए। रीजन जहां तक जा सकता है, टू दि अल्टीमेट लिमिट, वहां तक ले जाए। तो एक्सप्लोजन हो जाता है। कोई भी चीज अपनी चरम स्थिति पर पहुंचे तो एक्सप्लोर हो जाती है। बस उसके एक्सप्लोजन पर इंट्यूशन आ जाता है। एक रास्ता तो ये है। जो खतरों से भरा भी है। क्योंकि हो सकता है कि एक्सप्लोजन न हो और सिर्फ टेंशन आदमी को पागल कर जाए। इसलिए बहुत से इंटलेक्चुअल्स पागल हो जाते हैं। कारण यह है कि जैसे वह आखिरी सीमा तक बढ़ना शुरू करते हैं, और अगर इतना बल नहीं है भीतर और अपनी सीमाओं और पात्रता के बाहर उन्होंने बढ़ना चाहा तो पागलपन आएगा। इंटलेक्ट चली जाएगी

और इंट्यूशन नहीं आ पाएगी। तो दूसरा रास्ता यह कि इंटलेक्ट को रिलैक्स करिए। टेंस मत करिए। एक्सट्रीम तक मत ले जाइए उस तरफ, इस तरफ एक्सट्रीम पर लाइए। रिलैक्स करिए। कुछ घंटे दो घंटे, के लिए तय कर लीजिए की रीजन नहीं करेंगे। बहुत मुश्किल है, सरल नहीं है एकदम कि दो घंटे हम रीजन नहीं करेंगे। कि लड़का आकर कहेगा आपसे कि बाहर एक कुत्ता खड़ा है, पहाड़ के बराबर। तो हम मान लेंगे। हम कहेंगे हो सकता है। दो घंटे हम रीजन का उपयोग ही नहीं करेंगे। हम नहीं कहेंगे, ऐसा हो ही नहीं सकता। कुत्ता पहाड़ के बराबर कैसे हो सकता है? दो घंटे फास्ट कर जाइए, रीजन का उपयोग मत करिए। तो चार-छह महीनों में आपको उन दो घंटों में इंट्यूशन की झलक मिलनी शुरू हो जाएगी। बहुत कठिन है, बहुत कठिन है, क्योंकि हमारे सोचने से ढांचा बन गया है, ढांचा बन गया है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

नॉट, टेक्नालॉजी इ.ज बेसड ऑन इंटलेक्ट, साइंस नहीं, साइंस के जितने भी गहरे इनवेंशंस हैं वे तो इंट्यूशन से ही आते हैं। टेक्नालॉजी इंटलेक्ट बनाती है। असल में इंटलेक्ट ने आज तक कुछ डिस्कवर किया ही नहीं। डिस्कवरी तो हमेशा इंट्यूशन देता है। इंटलेक्ट ने कभी कोई डिस्कवर नहीं की, कोई चीज। डिस्कवरी तो इंट्यूशन करती है। लेकिन जब डिस्कवर हो जाता है तो उसको फार्मूलेट करना, थ्योरी बनाना, इंप्लीमेंट करना वह इंटलेक्ट करती है। यानी इंटलेक्ट जो है, वह एक्टिव पार्ट है माइंड का जो इंप्लीमेंटेशन करता है। क्योंकि एक वैज्ञानिक खोज रहा है तो सारी इंटलेक्ट थका डालता है, खोज-खोज कर वह नहीं मिलता, वह सोया रात को, अचानक नींद में उसे मिल गया, और वह उठ कर उसने लिख लिया।
मैडम क्यूरी ने तो रात में ही लिखा था नींद में। जिन सवालों को वह दिन में हल नहीं कर सकी और थक गई, और परेशान हो गई। उनको रख कर सो गई। और नींद में उसकी आंख चौंक गई। उठी है और उसने किताब पर हल कर दिया है। फिर सो गई और सुबह पहचानना मुश्किल है कि मेरे अक्षर हैं। मगर सवाल हल हो गया। मैडम क्यूरी को जो नोबल प्राइज मिला वह उसकी नींद की हालत को मिला। उसको नहीं, उसका उसमें हाथ नहीं है बड़ा। और फिर तो उसने आखिर में कहा कि मेरा भरोसा ही छूट गया। क्योंकि मैं कुछ कर ही नहीं पा रही हूं, यह तो कुछ और ही हो रहा है। मैं जब नहीं होती हूं तब। आप भी नहीं जानते कई दफा ऐसा हो जाता है आप एक नाम याद कर रहे हैं, और नहीं आ रहा है, नहीं आ रहा है, नहीं आ रहा है, नहीं आ रहा। और आपने छोड़ दिया है और चले गए बगीचे में घूमने लगे कि बच्चे के साथ खेलने लगे और अचानक आपने कहा कि वह आ गया है। इंटलेक्ट थक गई, रिलैक्स हो गई। इंट्यूशन कभी नहीं थकी है वह हमेशा ताजी भीतर खड़ी है। वह सक्रिय हो गई। इंटलेक्ट जहां थकती है, वहां से इंट्यूशन सक्रिय हो जाती है। तो सवाल ये है कि उसका भी घंटे दो घंटे के लिए अगर रोज गैप तोड़ दें, तो चार-छह महीने में आप पाएंगे कि इंट्यूशन का डवलपमेंट शुरू हुआ। वह उस दो घंटे में उसकी झलक मिलनी शुरू हो जाएगी। वह कभी चौबीस घंटे में उसकी झलक मिलेगी, कई बार। और फिर धीरे-धीरे वह बढ़ती जाएगी। और यह चौबीस घंटे सरकते जाएंगे पीछे और वह पूरे को घेर लेगी। और फिर इंटलेक्ट की कोई जरूरत ही नहीं है, अगर इंट्यूशन विकसित है।
वह मामला ऐसा ही है जैसे अंधा आदमी है, वह लकड़ी हाथ में लेकर चलता है।
दरवाजा खोजता है, फिर उसको आंख मिल गई, फिर वह लकड़ी फेंक देता है। अब वह आंख से ही निकल जाता है।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

मैं तो कह नहीं रहा, आप ही मुझसे पूछते हैं, यह बड़ा झंझट है मेरे लिए।
मैं तो ऐसा कह नहीं रहा कि आप ऐसा करें।
आप पूछते हैंः कैसे डवलप हो?

मैंने कह दिया। यानी मैं, हमारी कठिनाइयां बड़ी अजीब हैं। एक आदमी मेरे पास आता है वह बोलता है ईश्वर को कैसे खोजूं? मैं कहता हूं, ऐसे खोजें। तो वह कहता है कि हमारा सब काम-धाम छूट जाएगा। तो मैंने तुमसे कभी कहा नहीं, तुम्हारी मर्जी।

प्रश्नः इंट्यूशन डवलप करने से फायदा होना चाहिए?

यह जो फायदे का विचार है न, यह इंटलेक्ट का विचार है। यही तो झंझटें हैं। हर चीज में फायदा ही होना चाहिए। इंट्यूशनल माइंड को फायदा-हानि में कोई फर्क नहीं है। वह तो मैं कह रहा हूं, दो घंटे प्रयोग करके देखें। चार-छह महीने में ही फर्क पड़ना शुरू हो जाएगा। दो घंटे तय कर लें कि दस से बारह चाहे कुछ भी हो जाए रीजन नहीं करेंगे। नो-रीजनिंग। कुछ भी करिए आप जो आपको करना है। गड्ढा खोदिए, रेडियो सुनिए, लड़िए-झगड़िए, बस एक बात खयाल रखिए कि रीजन का उपयोग नहीं करेंगे। देयर फॉर नहीं आने देंगे बीच में।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

मेरा मतलब यह है, मेरा मतलब यह है कि दो घंटे के लिए टोटल फास्ट इस बात का।

(प्रश्न का ध्वनि-मुद्रण स्पष्ट नहीं।)

न, न, न, काहे की इंटलेक्ट, काहे की इंटलेक्ट, एक बटन घुमाएं तो आप इंटलेक्ट का उपयोग कर रहे हैं कुछ। हां, आप रेडियो सुन रहे हैं और एक आदमी वहां आकर कहता है। दो बातें कह देता है उलटी, और आप कंटडेक्शन नहीं देखते। आप कहते हैं मुझे रीजन नहीं करना, सुनते हैं सिर्फ तो आपने फास्ट किया। रीजनिंग के फास्ट का मतलब यह है कि तर्क की जो हमारी व्यवस्था है, उसका हम उपयोग नहीं करते।
मेरे पिता है, मेरे घर में बहुत अजीब-अजीब तरह के लोग हैं। मैं बहुत हैरान था बचपन से कि मेरे एक काका कम्युनिस्ट हैं। एक काका बिल्कुल धार्मिक हैं। एक कवि हैं। सब तरह के लोग हैं, मेरे पिता को जाके कोई कहेगा घर में से एक आदमी कि ईश्वर नहीं है, वे हां भर देंगे। घड़ी भर बाद मैं जाके उनको कहूंगा कि ईश्वर है, वह हां भर देते हैं। तो मैंने उनसे पूछा कि आप कोई भी कुछ कहता है तो आप हां भर देते हैं, बात क्या है? उन्होंने कहा कि मैंने रीजन का उपयोग छोड़ दिया है। अब झगड़े का कोई उपाय नहीं है। वह कहता है तो वह ठीक ही कहता होगा। वह भी ठीक कहता होगा। तो दोनों उलटी बात कह रहे थे। तो वह कहते हैं कि मैंने चूंकि रीजन का उपयोग छोड़ दिया फास्ट कर दिया हूं। तो मैं नहीं हूं, ठीक है यह भी हो सकता है। वे बोलते हैं कि मैं नहीं हूं किसी तर्क में पड़ने को।
फास्टिंग का मतलब समझते हैं आप? तो उपवास कर जाएं। रिसेंटली दो घंटे
के लिए बहुत मुश्किल है, दो दिन के लिए भूखा रहना बहुत आसान है। माइंड की तो ट्रेनिंग है पूरी। देखें कोशिश कर के चार-छह महीने लग जाएं, लेकिन इंट्यूशन की झलक उन दो घंटों में आनी शुरू हो जाए। और फिर आपके खयाल में आ जाए कि यह जाने जैसा है चले जाएं, लगे लौट आएं, लौटना हमेशा सरल है, कठिन नहीं है। उसके अलग रास्ते हैं, इंट्यूशन से कोई लेना-देना नहीं है।

नानक दुखिया सब संसार
सातवां प्रवचन

नानक दुखिया सब संसार

मैं अगर दुखी हूं तो सारी दुनिया जिम्मेवार है, ऐसा ही मन मानने को करता है, लेकिन जब मेरे दुख में सारी दुनिया जिम्मेवार है तो यह कैसे हो सकता है कि सारी दुनिया के दुख में मैं जिम्मेवार न रहूं? यह तो एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। अगर इस कमरे में बैठे हुए सारे लोग मेरे दुख में जिम्मेवार हैं तो यह कैसे संभव है कि मैं उनके दुख में जिम्मेवार न हो जाऊं? क्योंकि, जब तुम सोचोगे, तुम जिस सारे कमरे की बाबत सोचोगे, उसमें मैं भी हूं। मैं जिस दुनिया के संबंध में सोचूंगा, तुम भी उस दुनिया में हो। आमतौर से हमारा मन यह मानने को करता है कि मैं अगर दुखी हूं तो सारी दुनिया जिम्मेवार है। लेकिन इसका ही दूसरा पहलू यह है कि तब दुनिया के दुख में मैं भी जिम्मेवार हूं, क्योंकि यहां हमारा जो जीवन है, वह अलग-अलग जीवन नहीं है।
जीवन इकट्ठा है और इतना इकट्ठा है कि सिर्फ हमारी समझ की कमी है कि हमें उसका इकट्ठापन पूरा दिखाई नहीं पड़ता है। इस कमरे में हम इतने लोग बैठे हैं। इस कमरे में अगर एक भी आदमी दुखी है तो इस कमरे की हवा, इस कमरे का वातावरण वह दुख की तरंगों से भर देगा और इस कमरे में आने वाले व्यक्ति को पता भी नहीं चलेगा कि वे दुख के वातावरण में प्रविष्ट कर गए हैं। हम सब एक-दूसरे को छू रहे हैं। छू रहे हैं, यह कहना भी गलत ही है, हम सब एक-दूसरे से जुड़े ही हुए हैं। हम इतने ज्यादा जुड़े हुए हैं कि जिसका हिसाब लगाना मुश्किल है। हमारी हालत ऐसी है जैसे एक वृक्ष के पत्ते को होश आ जाए और वह सोचे तो उसको ऐसा समझ में पड़े कि वह जो पड़ोस का पत्ता है वह अलग है, मैं अलग हूं, जब कि वे एक ही शाखा पर लगे दो पत्ते हैं और उनमें से एक पत्ता भी बीमार नहीं पड़ सकता--सब पत्तों को बिना बीमार किए। सब जुड़े हुए हैं।
एक की लहरें दूसरे तक पहुंचती रहेंगी। हम कह सकते हैं कि एक वृक्ष के
सब पत्ते जुड़े हैं, लेकिन बगल का वृक्ष तो अलग है। लेकिन, नीचे जमीन दोनों को जोड़े हुए है और जिस जमीन से इस वृक्ष की जड़े बंधी हैं, उसी से दूसरे की भी बंधी हैं। यह असंभव है कि एक वृक्ष बीमार हो और दूसरा स्वस्थ रह जाए, क्योंकि दोनों एक ही जमीन से जुड़े हुए हैं एक ही हवाओं से जुड़े हुए हैं। तब हम यह कह सकते हैं कि इस पृथ्वी पर जो वृक्ष हैं, हो सकता है वे परस्पर जुड़े हुए हों, लेकिन और पृथ्वीयां भी होंगी, कहीं उन पर भी वृक्ष होंगे। वास्तविकता इतनी सी ही है कि हमें दिखाई नहीं पड़ता है कि जोड़ सब तरफ फैला हुआ है।
असल में दूर, अंतहीन सीमाओं पर भी जो तारे होंगे, वे भी किसी न किसी भांति मुझसे प्रभावित होंगे, और मैं उनसे प्रभावित होऊंगा। यानी, जिन तारों का हमें कोई पता भी नहीं है और जिन तारों को मेरा तो कोई पता ही न होगा (लेकिन पता होना ही जरूरी नहीं है) सब एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। एक समुद्र के किनारे जो लहरें आकर टकरा गई हैं उसकी हजारों लहरों ने आकर प्रभावित किया है, जिसका उसे कोई भी पता नहीं है जो न मालूम कितने हजारों मील दूर एक लहर उठी होगी। अब उस लहर के संदर्भ में सारी लहरें प्रभावित होंगी।
अभी यह जान कर भी हम हैरान होंगे कि लहर जैसी चीज आमतौर से हमें आती हुई दिखाई पड़ती है, वस्तुतः कोई लहर आती नहीं। लहर तो अपनी जगह से उठती है, लेकिन उसके उठने की वजह से बगल में गड्ढा हो जाता है। इसी तरह दूसरी लहर अपनी जगह उठती है। कोई लहर आती नहीं है; सब लहरें अपनी जगह उठती और गिरती हैं। "लहर आना" बिल्कुल ही भ्रामक बात है; लेकिन वह जो छा जाती है, कंप्लीट हो जाती है।
एक लहर उठेगी तो उसका परिणाम पूरे अंतहीन सागर की छाती पर पड़ने वाला है, और वह जो एक लहर उठी है उससे रेत पर भी फर्क पड़ेगा हवाओं पर भी फर्क पड़ेगा। सब कुछ बदल जाएगा। यह दुनिया ठीक ऐसी ही न होती, अगर वह लहर न उठी होती। इस दुनिया में बुनियादी फर्क होता है। हम एक आदमी को हटा लें दुनिया

से तो सारी दुनिया दूसरी होगी। आदमी तो बहुत बड़ी चीज है, कई दफा तो बहुत छोटी-छोटी घटनाएं सारे विश्व को प्रभावित कर देती हैं।
नेपोलियन जिंदगी भर बिल्ली से डरता रहा। छह महीने का था कि एक बिल्ली उसकी छाती पर सवार हो गई। नौकरानी बाहर गई हुई थी। वह भागी हुई आई। बिल्ली उसने उतार दी। लेकिन उस छह महीने के बच्चे पर असर हो गया बिल्ली का। वह बाद की जिंदगी में शेर से लड़ सकता था, लेकिन बिल्ली को देख कर कांप जाता था। जिस युद्ध में वह नेल्सन से हारा, उसमें नेल्सन सत्तर बिल्लियां अपनी फौज के सामने बांधकर ले गया था, क्योंकि उसे यह पता चल गया था कि नेपोलियन बिल्ली से डरता है।
मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि नेलसन नहीं जीता, बिल्लियां जीतीं। अगर छह महीने की उम्र में नेपोलियन की छाती पर एक बिल्ली सवार न होती तो दुनिया का इतिहास पूरा दूसरा होता। अगर नेपोलियन जीतता तो इतिहास बिल्कुल दूसरा होता; मगर नेपोलियन हारा तो इतिहास बिल्कुल दूसरा हो गया।
इस घटना की गहराई में जाएं तो मालूम होगा कि बिल्ली का एक बच्चा जो उसकी छाती पर चढ़ गया था, वह सारी दुनिया के इतिहास को प्रभावित करने वाला बच्चा (बिल्ली का) है; वह साधारण नहीं; ऐतिहासिक बच्चा है। यानी तब हो सकता था कि भारत अंग्रेजों का कभी गुलाम न होता, अगर वह बिल्ली का बच्चा नेपोलियन की छाती पर न चढ़ा होता। तब हो सकता था अंग्रेजों का साम्राज्य कभी पैदा ही न हुआ होता, क्योंकि वह तो नेलसन की लड़ाई में तय हुआ कि साम्राज्य जगत पर किसका होगा--फ्रांस का होगा कि इंग्लैंड का होगा। हालांकि उस बिल्ली के बच्चे को क्या मतलब दुनिया के इतिहास से? वह तो ऐसे ही गुजर रहा था और एक बच्चे पर सवार हो गया था। उसे क्या लेना-देना था इतिहास से?
मैं सिर्फ उदाहरण के लिए कह रहा हूं कि जिंदगी इतनी संबंधित है कि वह जिसको हम बहुत क्षुद्र कहते हैं, उसको भी क्षुद्र नहीं कहना चाहिए। हम सिर्फ इसलिए क्षुद्र कह पाते हैं कि विराट संदर्भ में उसके क्या-क्या परिणाम होंगे, यह हमें कुछ भी पता नहीं है। हम सब जुड़े हैं। वह जो जीवित है, जुड़ा है, वह जो नहीं जीवित है, वह भी जुड़ा है। यानी हमारे सुख और दुख में हमारे जीवित लोगों का ही हाथ नहीं है; वे जो अब नहीं है जगत में, उनका भी हाथ है हमारे सुख-दुख में। हम और गहरे देखें तो अभी जो पैदा नहीं हुए हैं, उनका भी हाथ है।
अजन्मे लोगों के प्रभाव को समझना जरा मुश्किल पड़ता है, क्योंकि हमें
तो यही देखना मुश्किल पड़ता है कि वियतनाम में किसी आदमी की हत्या हो गई है तो उससे मेरा क्या संबंध है? वस्तुतः मैं भी उस दुनिया को बना रहा हूं, जिसमें वियतनाम संभव है। अमेरिका को गाली देकर कुछ हल नहीं होगा। मैं भी उस दुनिया को बनाने में जिम्मेवार हूं, जिसमें वियतनाम जैसी घटना घट सकती है। मैं भी उस दुनिया को बना रहा हूं, जिसमें अहमदाबाद का दंगा हो सकता है, भले ही मैं अहमदाबाद में नहीं रहता। जिस दुनिया में मैं रहता हूं, उसी में अहमदाबाद भी संभव हुआ है। तो जाने अनजाने मैं भी जुड़ा हुआ हूं, अपराधी मैं भी हूं। "अगर जिंदगी में कहीं फूल खिलता है तो उसकी खुशी का भागीदार मैं भी हूं।" जब तक इस भांति एक-एक व्यक्ति अपने पूर्ण उत्तरदायित्व को अनुभव न करे तब तक दूसरी दुनिया नहीं बनाई जा सकती, क्योंकि जब मैं ऐसा अनुभव करूं कि वियतनाम में जो हत्या हो रही है, उसमें मैं जिम्मेवार हूं, तब मुझे बदलना ही पड़ेगा अपने को।
लेकिन मैं क्या कहता हूं? मैं कहता हूं--अमरीका के लोग जिम्मेवार हैं, फलां प्रेसिडेंट जिम्मेवार है, फलां पार्टी जिम्मेवार है, मैं बच गया, मेरी बात खत्म हो गई। अगर हिंदुस्तान में गरीब है तो मैं कहूंगा--पैसे वाले लोग जिम्मेवार हैं; उसमें मैं क्या कर सकता हूं? बिरला जिम्मेवार है, फलां जिम्मेवार है; बात खत्म हो गई।
मै अपने को जिम्मेवार मानूं तो मुझे क्रांति से गुजरना पड़े इसी वक्त, क्योंकि तब मुझे देखना पड़ेगा कि क्या मेरे मन में भी अपने से किसी को नीचे रखने में रस आता है? अगर रस आता है तो फिर किसी को गरीब करने में बिरला ही जिम्मेवार नहीं है मैं भी जिम्मेवार हूं। मुझसे कोई बड़ा मकान बना लेता है

तो क्यों मुझे पीड़ा और परेशानी होती है? क्योंकि मेरी भी जिम्मेवारी है, मैं भी जुड़ा हुआ हूं कहीं। हम सब भी कोशिश में लगे हुए हैं, चाहे हम गरीब हों, लेकिन हम इस कोशिश में लगे हुए हैं कि कैसे अमीर हो जाएं? वह कोशिश गरीबी पैदा करती रहेगी।
अगर मुझे कोई अपमानित कर दे तो क्या मेरे मन में उसकी हत्या कर देने
का खयाल नहीं उठ आता? हम कितनी दफा सोच लेते हैं कि मार डालो फलां आदमी को, समाप्त कर दो। नहीं मारते हैं, यह दूसरी बात है, लेकिन यह हमारे मन में तो उठ आता है। अगर हमारे पास ताकत हो, सुविधा हो, हम पर कोई रोक न हो, हमारे पकड़ जाने का कोई उपाय न हो तो हम इस बात को भी कार्यान्वित कर देंगे। अगर तुम्हारे हाथ में इतनी ताकत हो कि तुम अपने सारे दुश्मनों को आज ही समाप्त कर सको और तुम पर कोई उंगली भी न उठा सके तो पूछना जरूरी है कि क्या तुम समाप्त करोगे कि छोड़ दोगे? तो मन कहेगा कि समाप्त कर देंगे। न करने का कारण यह नहीं कि हम समाप्त नहीं करना चाहते हैं; नहीं करने का कारण यह है कि समाप्त करने की सुविधा जुटाना बड़ी मुश्किल बात है। किसी को मिल गई है, वह कर रहा है। किसी को नहीं मिली है, वह सोच रहा है।
जब तक मेरे मन में ऐसा सवाल उठता हो कि जो मेरे विरोध में है, मेरा दुश्मन है उसे खत्म कर देना है, तब तक वियतनाम होता रहेगा, क्योंकि वियतनाम वही है। एक बड़े पैमाने पर वही घटना हो रही है कि जो मुझे बरदाश्त नहीं है; उसे मैं जिंदा नहीं देखना चाहता हूं। हमारा पूरा समाज वही कर रहा है। एक चोर को हम सजा दे रहे हैं, एक हत्यारे को हम फांसी दे रहे हैं, बड़े मजे की बात है। हत्यारे पर जुर्म ठहरा रहे हैं कि समाज की तुमने हत्या की है, इसलिए तुम जिम्मेवार हो। सजा हम उसे हत्या की दे रहे हैं कि हम तुम्हें मार डालते हैं। अब उनके मार डालने के लिए कौन जिम्मेवार होगा? फर्क इतना ही है कि वह अकेला है और समाज के खिलाफ हत्या कर गया है; और हम समाज के पक्ष में हत्या कर रहे हैं, इसलिए हम जज हैं, न्यायाधीश हैं। हम जो हत्या कर रहे हैं वह हत्या नहीं है, वह सजा है! उस आदमी ने भी, हो सकता है, सिर्फ सजा दी हो।
जिस समाज में एक हत्या न्यायोचित है और
एक हत्या न्यायोचित नहीं है,
उस समाज में हत्याएं कभी भी हो सकती हैं।
सवाल सिर्फ यह है कि कब हम न्यायोचित हत्या ठहरा सकें। वह न्यायोचित
हो जाए, हत्या तब हत्या नहीं रहेगी। हम कहते हैं कि आदमी को मारना पाप है, लेकिन दो मुल्क लड़ने लगते हैं तो जिस आदमी ने जितने ज्यादा आदमी मारे हैं, उसको हम "महावीर चक्र" देंगे! अब कितने मजे की बात है! आदमी को मारना हर हालत में पाप नहीं है! कभी तो आदमी को मारना पुण्य है और कभी जो जितने ज्यादा आदमी मारेगा, उतना जल्द स्वर्ग जाने का हम उसका इंतजाम किए हुए हैं।
जब तक हमारी ऐसी दोहरी वृत्ति है कि जब हमारा मतलब होता है, तब हत्या करना पुण्य होता है, जब हमारा मतलब नहीं होता, तब हत्या करना पाप हो जाए, तो फिर वियतनाम संभव रहेगा, हिंदू-मुस्लिम दंगे संभव रहेंगे। इसमें जब भी हम ऐसा सोचेंगे कि कोई और जिम्मेवार है, तब वह हमारे मन की तरकीब है; और जो तरकीब हम उपयोग कर रहे हैं, वही तरकीब सारे लोग उपयोग कर रहे हैं। जब सारी दुनिया में हर आदमी यही तरकीब उपयोग कर रहा है, तो उसमें क्रांति कहां से शुरू हो? कैसे शुरू हो?

प्रश्नः मेरा अनुभव अलगता का अनुभव है। मैं जुड़ा हुआ हूं। ऐसा मुझे महसूस क्यों नहीं होता?

अगर तुम्हारा ऐसा अनुभव है कि दुनिया तुम्हें दुखी कर रही है तो तुम कैसे अनुभव करोगे? अगर तुम अलग ही हो तो बात खत्म हो गई। लेकिन, जब दुनिया तुम्हें दुखी कर रही है तब तो तुम जुड़े हुए हो, तब तो तुम मानते हो कि मुझे दुनिया दुख दे रही है, मुझे फलां आदमी दुख दे रहा है, मुझे फलां आदमी

परेशान कर रहा है; लेकिन जब दुनिया को दुख देने का सवाल उठा तब तुम अलग हो गए। यह तो दोहरा मापदंड हुआ।
अगर मैं यह कहूं कि मुझे कोई दुखी ही नहीं कर सकता, दुनिया कैसी भी हो,
तब मैं शायद दूसरी बात के कहने का हकदार हो जाऊं कि मैं किसी को दुख नहीं दे रहा हूं। ये दोनों बातें जुड़ी हैं, ये दोनों बातें इकट्ठी हैं। इसमें तुम कहो कि आधे के लिए हम जुड़े रहेंगे और आधे के लिए हम जुड़े नहीं रहेंगे, तो ऐसा नहीं चलेगा; क्योंकि, तुम जुड़े हो तो जुड़े हो, नहीं जुड़े हो तो नहीं जुड़े हो। अगर मैं यह कहता हूं कि तुम मुझे दुखी कर सकते हो तो मैं यह भी माने ले रहा हूं कि मैं भी तुम्हें दुखी कर सकता हूं। अगर मैं यह कह सकता हूं कि इस दरवाजे से भीतर आना संभव है तो दूसरी बात अनिवार्य रूप से हो गई कि इस दरवाजे से बाहर जाना भी संभव है। लेकिन मैं यह कहता हूं कि ऐसा दरवाजा है, जिससे सिर्फ भीतर ही आना संभव है, बाहर जाना संभव नहीं है, फिर तो इस दलील का हर आदमी उपयोग कर ही रहा है। यथार्थ यह है कि अगर तुम दुनिया में पूछने जाओगे कि "कौन है दुनिया तो?" तो तुम्हें एक-एक आदमी मिलेगा, तुम्हारे बराबर ही; दुनिया कहीं भी नहीं मिलेगी। अगर तुम खोजने चले जाओगे कि पता लगा लें कि दुनिया कहां है तो मैं मिलूंगा, आप मिलेंगे और हम सब तुम्हारे बराबर आदमी होंगे।
दुनिया तुम्हारी तरकीब है जिसमें तुम अपने को अकेला कर लेते हो और सब
की भीड़ को जोड़ देते हो। वे भी कहां जुड़े हुए हैं! वे सब भी अकेले हैं, इसलिए प्रत्येक आदमी को दुनिया बड़ी मालूम पड़ती है, क्योंकि वह अपने को छोड़ कर सब से जोड़ लेता है। इस कमरे में बहुत बड़े लोग बैठे हुए हैं। एक-एक आदमी देखने जाओगे तो सब अलग-अलग हैं। यह जो भीड़ हम जोड़ लेते हैं और अपने को अलग कर लेते हैं, बाकी सब को जोड़ देते हैं, तो कठिनाई शुरू हो जाती है। जितना बड़ा हिस्सा मैं हूं इस दुनिया में, उतना ही बड़ा हिस्सा कोई और भी है; बड़ा छोटा कुछ भी नहीं। समाज, दुनिया और देश झूठे शब्द हैं, उनका कोई अस्तित्व नहीं है। अस्तित्व व्यक्ति का है।
मेरे लिए तुम दुनिया हो। तुम कहते हो कि मैं बहुत छोटा आदमी हूं। मैं जिसको भी पकड़ कर कहूंगा कि तुम मेरे लिए दुनिया हो, वह भी कहेगा कि मैं बहुत छोटा आदमी हूं, दुनिया तो बहुत बड़ी है। फिर दुनिया को कहां पकड़ने जाओगे? दुनिया कहीं भी नहीं है; सब जगह व्यक्ति ही है। अगर तुम्हें यह बात समझ में आ जाए कि व्यक्ति का जोड़--जैसी कोई चीज नहीं है, व्यक्ति है और उन व्यक्तिओं के अंतः संबंध हैं और उन व्यक्तिओं को एक-दूसरे को प्रभावित करने वाली लहरें हैं और वे व्यक्ति भीतर से एक दूसरे से जुड़े हुए संयुक्त हैं--ऐसा तुम अगर एहसास करोगे, तब तुम अपने को न तो असहाय समझोगे, न ही इंपोटेंट, निर्वीर्य समझोगे। न तुम यह समझोगे कि अब मैं कुछ भी नहीं कर सकता, क्योंकि तब तुम यह समझोगे कि मेरे ही बराबर तो सारे लोग हैं। जितना वे कर सकते हैं, उतना मैं कर सकता हूं। लेकिन तुम बाकी सबको जोड़ लेते हो और अपने को अलग कर देते हो, तब तुम मुश्किल में पड़ जाते हो। जोड़ जैसी चीज कहीं है ही नहीं।
यह गलत है कि तुम अपने को तो व्यक्ति की तरह देखते हो और बाकी दुनिया
को व्यक्ति की तरह नहीं देखते हो। मैं कह रहा हूं कि दोहरे हमारे स्टेंडर्ड हैं हर चीज में। जो हम अपने लिए सोचते हैं, वह हम सब के लिए नहीं सोच पाते। यहीं से तकलीफ शुरू हो जाती है। अगर मुझे कोई गाली दे तो मैं जानता हूं कि क्रोध उठता है। लेकिन किसी दूसरे को कोई गाली दे रहा हो तो मैं समझा सकता हूं कि क्रोध बुरी चीज है। वहां मैं बिल्कुल निर्दयी हो जाऊंगा। वहां मैं व्यक्ति को अनुभव नहीं करूंगा। उसकी तकलीफ, उसकी कमजोरी, उसकी परेशानी, उसकी मुश्किल, उसका अस्तित्व अगर मैं अपने जैसे अनुभव करूं तो एक तो जिंदगी के प्रति बहुत करुणा अनुभव होगी, क्योंकि जितना असहाय तुम हो, उतना असहाय कोई और भी है; और दूसरी तरफ तो सारे लोग असहाय मालूम पड़ेंगे।
दूसरी तरफ यह बात मालूम पड़ेगी कि जितनी सामर्थ्य उनकी थी, उतनी सामर्थ्य मेरी थी। सब से बड़ी बात विचारणीय जो है, वह यह है कि तब तो कुछ कर सकोगे। अभी तुम जो रुख ले रहे हो, वह तुम्हें निष्क्रिय कर देगा और तुम कुछ

भी न कर सकोगे। उससे तुम सिर्फ निर्वीर्य होकर गिर पड़ोगे और कुछ भी नहीं कर सकोगे, क्योंकि तुमने एक झूठी दुनिया का जोड़ खड़ा कर लिया है, जो हिमालय मालूम पड़ रहा है, जब कि तुम तो एक टुकड़े रह गए छोटे। अगर तुम व्यक्ति की तरह दुनिया को देख पाओ तो फिर बहुत करने के संभावना के द्वार खुल जाते हैं। सब से बड़ा द्वार यह खुलता है कि अगर मुझे कहीं कुछ गलत दिखाई पड़ रहा है, तो मैं उसमें कहां तक भागीदार हूं।
इस तरह के आदमी को ही धार्मिक कहा जा सकता है, जिसको यह खयाल हो रहा है
कि दुनिया में जो खराबी है, बीमारी है, दुख है, पीड़ा है, चिंता है, उसमें मैं कहां-कहां जिम्मेवार हूं, मैं कितनी चिंता पैदा करवा रहा हूं, मैं कितने दुख पैदा करवा रहा हूं जिनमें फल लगेंगे। अगर मैं विरोध में हूं और मुझे लगता है कि वियतनाम में बुरा हो रहा है तो फिर मुझे सोचना पड़ेगा कि मैं कितनी दूर तक वियतनाम में सहयोगी बन रहा हूं। वह हवा पैदा कर रहा हूं, जहां वियतनाम पैदा हो सके और कम से कम उतना तो हाथ को खींचूं, उतने दूर तक तो मेरा सहयोग शुरू हो जाए।
जब कोई व्यक्ति दूर तक अपना सहयोग कर ले जीवन की स्थिति से, तो उसको बड़ी ऊर्जा, बड़ी शक्ति उपलब्ध होती है, क्योंकि वह जीवन के प्राणों से बहुत तादात्म्य स्थापित कर लेता है। उसका अनुभव उससे शुरू हो जाता है; तब उसके हाथ से बड़े काम घटित हो सकते हैं, क्योंकि बहुत गहरे में तब वह व्यक्ति रहा ही नहीं। इसने समग्र के साथ एक भीतरी तादात्म्य जो उत्पन्न कर लिया!
असल में कठिनाई यह है कि अपने को भी तुम वैसा ही नहीं जानते हो। जो मै
कह रहा हूं, वह यह है कि हम अपने लिए भेद कर लेते हैं। कुल इतना कह रहा हूं कि जब मैं नींद की बात सोचने चलता हूं तो तुम्हारे हाथ में दूसरे तराजू का उपयोग करता हूं। जब मैं किसी आदमी को कहने जाता हूं कि तुम जिम्मेवार हो इस सारे उपद्रव के लिए, तब मैं दूसरे तराजू का उपयोग करता हूं। जब मैं अपने को तोलने जाता हूं तो उसका कारण बन जाता है।

प्रश्नः मैं भाषा से अपने को देख रहा हूं।

यह तो ठीक है कि भाषा के कारण कठिनाइयां पैदा होती हैं, लेकिन भाषा के द्वारा वे कठिनाइयां हल भी की जा सकती हैं। अगर भाषा के द्वारा तुमने यह समझा है कि दुनिया इकट्ठी है और मैं अकेला हूं, तो भाषा के द्वारा यह भी समझा जा सकता है जो मैं कह रहा हूं। असल में भाषा जो भी भूल पैदा करती है, वह भाषा से ही दूर की जा सकती है। भाषा में उनके दूर करने का उपाय है। जो भूल भाषा ने पैदा ही नहीं की है, उनका तो भाषा से कोई संबंध ही नहीं है। अगर वैसी कोई भूल है तो मौन से ही दूर हो सकती है, भाषा से दूर कभी नहीं हो सकती। यानी भाषा का कोई कुसूर ही नहीं है। भाषा से जितनी भूलें पैदा हुई वे तो हल की जा सकती हैं। जैसे भाषा ने तुम्हें एक नाम दे दिया है। नाम के कारण तुम्हें एहसास होने लगा है कि तुम अलग हो, क्योंकि तुम प्रताप हो, दूसरा आदमी प्रताप नहीं है। भाषा ने हमें अलग होने का बोध दे दिया है। इस बोध को अगर तुम पकड़ के जिओगे तो तुम एहसास करते रहोगे कि तुम अलग हो।
अलग होना और इकट्ठा होना भी भाषा की ही बात है। अगर तुम इस अलग होने पर थोड़ा सोच-विचार कर सको, क्योंकि सब सोच-विचार भाषा में है, तो तुम यह भी अनुभव कर सकते हो कि यह अलग होना सिर्फ कामचलाऊ है, उपयोगी है, सत्य नहीं है। उपयोगी जरूर है, लेकिन सत्य नहीं है। उपयोगिता को सत्य नहीं बनाना चाहिए।
यह ठीक है की हिंदुस्तान की एक सीमा हो और यह उपयोगी हो सकती है; और पाकिस्तान की एक सीमा हो; लेकिन यह सीमा सत्य नहीं है। सीमाएं दो तरह का काम करती हैंः
एक सीमा वह है, जो हिंदुस्तान और पाकिस्तान को अलग करती है।
एक सीमा वह है, जो हिंदुस्तान और पाकिस्तान को जोड़ती है।
सीमा कुछ भी नहीं कहती कि आप मेरे साथ क्या उपयोग करो। मेरे बगल के मकान की दीवाल है, मेरे और बगल के पड़ोसी में। इसे हम ऐसा भी ले सकते हैं कि यह दीवाल मुझे और मेरे पड़ोसी को अलग करती है, और हम ऐसा भी समझ सकते हैं कि

मेरे पड़ोसी के बीच कामन एलीमेंट (साझा तत्व) यही दीवाल है, जो हमें जोड़ती है। दीवाल को किस रूप में समझना है, यह तुम पर निर्भर है। दीवाल जो है, वह पड़ोसी से मुझे अलग करनेवाली भी हो सकती है। वही चीज जोड़ने वाली भी हो सकती है, क्योंकि पड़ोसी और मेरे बीच वह कामन है। एक हिस्सा पड़ोसी के पास है उस तरफ वाला हिस्सा, इस तरफ वाला मेरे पास है। उस दीवाल से हम दोनों मिलते भी हैं, उस दीवाल से हम दोनों अलग भी हो सकते हैं। दीवाल आपसे कुछ भी नहीं कहती कि आप क्या करो।
शब्दों की सीमाएं जोड़ती भी हैं, तोड़ भी देती हैं। एक्सप्रेशन जो है,
वह उपयोगी भी है, घातक भी हो सकता है। जैसे कि हम कहते हैं--मनुष्यता को प्रेम करो। अब यह बड़ा खतरनाक मामला है, क्योंकि प्रेम हमेशा मनुष्य से हो सकता है। मनुष्यता से कैसे प्रेम करिएगा? मनुष्यता--जैसी चीज तो कहीं है भी नहीं जिसको गले लगा सको, जिसको हृदय से लगा सको, जिसको पास बिठा सको, जिसके पैर दबा सको। मनुष्यता कहीं भी नहीं मिलेगी। मैं यह कह रहा हूं कि मनुष्यता, ह्युमैनिटी एक एक्सप्रेशन है। मनुष्य तो सत्य है और मनुष्यता एक बिल्कुल ही कॉस्मिक बात है। लेकिन जब हम कहते हैं कि मनुष्यता से प्रेम करो, तब हम यह कह रहे होते हैं कि ऐसा एक भी मनुष्य मत छोड़ो जो तुम्हारे प्रेम का पात्र रह जाए। इसका हम यह मतलब भी ले सकते हैं कि "मनुष्यता से प्रेम करो" का मतलब यह है कि अब एक भी मनुष्य ऐसा नहीं है, जो प्रेम करने योग्य न रहा। मनुष्य होना ही प्रेम करने की पर्याप्त व्याख्या हो गई, यानी उसकी अपेक्षा दूसरी मत करना। और कि वह अच्छा आदमी है; चोर न हो, ईमानदार हो; व्याभिचारी न हो, आश्वासन का पक्का हो। अब अपेक्षा मत करना। मनुष्य होना काफी शर्त हो गई; वह बेईमान हो, ईमानदार हो, ये गौण बातें हैं। मनुष्यता से प्रेम करो, इसका यह मतलब भी हो सकता है कि एक आदमी कहे कि हम मनुष्य को तो प्रेम ही न करेंगे, हम तो मनुष्यता को प्रेम करेंगे। ऐसे लोग आज भी मौजूद हैं जो मनुष्यता को प्रेम करने की बात भी कर रहे हैं, ताकि मनुष्य से प्रेम करने से बच जाएं, एक-एक मनुष्य को प्रेम करने से बच जाएं। वे तो कहते हैं कि हम तो मनुष्यता को प्रेम करेंगे, हम तो परमात्मा को प्रेम कर सकते हैं। अब बड़े मजे की बात है कि मनुष्य से प्रेम करने से बचा जा सकता है--मनुष्यता से प्रेम करने पर। क्योंकि, तब मैं कहूंगा कि आप तो सिर्फ मनुष्य हैं; मनुष्यता तो नहीं हैं? मैं तो मनुष्यता के प्रेम के लिए जी रहा हूं। तब मैं पत्नी को छोड़ सकता हूं, बच्चे को छोड़ सकता हूं, क्योंकि मैं तो मनुष्यता के लिए जीऊंगा। मैं सारे दायित्व को छोड़ सकता हूं, क्योंकि मैं कहूंगा कि सब मुझे बांधते हैं। मुझे तो मनुष्यता से प्रेम करना है, विराट से प्रेम करना है। अब विराट को प्रेम करने में हो सकता है कि मैं जो प्रेम कर रहा था उसको भी तोड़ डालूं। लेकिन हम क्या उपयोग करते हैं, यह हम पर निर्भर है। सभी चीजें दोहरी हैं; उनके दोहरे उपयोग हो सकते हैं। शब्द की अपनी तकलीफ है, लेकिन अपनी सुविधा भी है उसकी।
जो मैं कह रहा हूं वह दूसरी बात कह रहा हूं। मैं तुमसे यह कह रहा हूं
कि हमें यह समझना बहुत कठिन मालूम पड़ता है कि सड़क पर जो आदमी भीख मांग रहा है तो मैं भी उसमें जिम्मेवार हूं, क्योंकि जिम्मेवारी समझ में नहीं आती मुझे। कहीं हमारा तालमेल नहीं है। न मैं उस आदमी को जानता हूं जो लंदन में हो सकता है क्योंकि लंदन तो मैं कभी गया नहीं। लंदन में जो भीख मांग रहा है, उससे मेरा क्या लेना देना है? पैरिस में जिस स्त्री को वेश्या हो जाना है, उससे मेरा क्या संबंध है? मैं तो कभी वहां गया भी नहीं, मैंने तो कभी उसकी शक्ल भी नहीं देखी। मुझे कभी पता भी नहीं चलेगा कि वह कब पैदा हुई और कब मर गई। तब मुझे कैसे आप जिम्मेवार ठहराते हैं कि पैरिस में एक स्त्री वेश्या हो गई तो मैं उसके लिए जिम्मेवार हूं?
नहीं, इस जिम्मेवारी का मतलब और है। मतलब यह है कि जिस ढंग से मैं जी रहा हूं, जिस ढंग की मान्यताओं में जी रहा हूं, जिस ढंग का आदमी हूं, जिस ढंग के मेरे सोच-विचार हैं, उस सारे सोच-विचार, उस ढंग के आदमी होने, उस ढंग के जीने, उस तरह की धारणा, उस तरह की फिलासफी वेश्याओं को पैदा करती ही है। वह पैरिस में पैदा करती है, लंदन में या बंबई में, यह सवाल नहीं है। मेरे सोचने का ढंग, मेरे जीने का ढंग क्या वेश्याओं को पैदा करने के लिए उर्वर

भूमि बनता है? यह सवाल है। और अगर बनती है तो सारी दुनिया में कभी भी, कहीं भी वेश्या पैदा हुई है, तो मैं जिम्मेवार हूं। इसे समझना मुश्किल होगा। आप कहेंगे कि मैं कभी भी किसी वेश्या के पास नहीं गया, न मैंने कभी किसी स्त्री को रुपये देकर शरीर खरीदने के लिए मजबूर किया, तब मुझे कैसे जिम्मेवार ठहराते हैं? लेकिन, जिम्मेवारी बहुत गहरी है। जिसको हम विवाह कहते हैं वह भी पैसा देकर शरीर को बेचने का इंतजाम है। हो सकता है एक आदमी कभी किसी वेश्या के पास न गया हो और न वेश्या के संबंध में उसने सोचा हो, लेकिन
जब तक विवाह भी पैसे के ऊपर आधारित होता है,
तब तक जिसे हम पत्नी कह रहे हैं,
वह भी जीवन-भर के लिए खरीदी गई वेश्या से ज्यादा नहीं हो सकती।
यह समझने में कठनाई होती है क्योंकि हम कहेंगे--जीवन भर की वेश्या? कैसा शब्द आप उपयोग करते हैं? क्योंकि हमने उसे बहुत अच्छे लिबास में रखा हुआ है, छिपा कर। एक आदमी है, जो कि जिंदगी-भर के लिए स्त्री नहीं खरीद सकता है। हजार कारण हो सकते हैं। एक आदमी ऐसा भी है जिसे सुविधा है कि जीवन भर के लिए स्त्री खरीद सकता है। एक आदमी सुविधानुसार पांच सौ स्त्रियां खरीद सकता है; वह वेश्या के पास क्यों जाएगा? हैदराबाद का निजाम क्यों जाए वेश्या के पास? वह पांच सौ स्त्रियां खरीद सकता था इस जमाने में। तो एक आदमी पांच सौ पत्नियों का पति हो सकता है। निजाम हैदराबाद को कोई कहने नहीं जाएगा कि तुम यह क्या कर रहे हो? या, तुम एक ऐसी दुनिया बना रहे हो जिसमें वेश्या पैदा होगी। जो आदमी पांच सौ स्त्रियों को खरीद कर घर में नहीं रख सकता, वह भी पांच सौ स्त्रियों को चाह तो सकता है। अगर वह एक स्त्री को इस भांति लाता है कि वह खरीदी हुई हो तो वह उस समाज को पैदा कर रहा है जिसमें वेश्या पैदा होगी। अगर मैंने विवाह किया हुआ है और एक स्त्री को अपने साथ रखे हुए हूं और आज मेरा उसका सारा प्रेम समाप्त हो गया है, फिर भी मैं उसे अपने साथ जीने के लिए मजबूर कर रहा हूं और उसके साथ जी रहा हूं; तब मैं ऐसी दुनिया बना रहा हूं जिसमें वेश्या पैदा होगी, क्योंकि मेरा और मेरी पत्नी का संबंध अब वेश्या का संबंध हो गया है। और तो कोई संबंध नहीं रह गया है। क्योंकि, प्रेम जहां समाप्त हो गया है, वहां सब संबंध पैसे के रह जाते हैं।
सिर्फ प्रेम एक संबंध है
जो बिना पैसे के हो सकता है,
बाकी संबंध पैसे के हैं।
अभी मेरी पत्नी मेरे साथ रह रही है, क्योंकि अगर वह चली जाए तो कहीं भीख मांगेगी; कौन जाने क्या करेगी, क्या नहीं करेगी। अगर भीख मांगने के डर से वह मेरे पास रह रही है तो संबंध पैसे का हो गया। वही काम बेचारी वेश्या किसी आदमी के आगे अपने को बेच कर कर रही है, क्योंकि उसको भीख मांगनी पड़ेगी, अगर अपने शरीर को न बेचे। लेकिन वह चूंकि रोज अलग-अलग आदमी को बेच रही है, इसलिए दिखाई पड़ रही है। एक स्त्री ने एक आदमी को जिंदगी भर के लिए बेच दिया है, इसलिए दिखाई नहीं पड़ रहा है।
ये सारे इंप्लीकेशंस देखने की बात है कि हम किस ढंग से जी रहे हैं, किस ढंग की बातों को हम धारणा बनाए हुए हैं। अब तुम्हारी बहन की तुम्हें अगर शादी करनी हो, तुम्हारे बेटे की शादी करनी हो, तुम्हें अपनी बेटी की शादी करनी हो, तो सोचो कि तुम उसके लिए प्रेम का मौका दे रहे हो या लड़का-लड़की खोज रहे हो? अगर तुम लड़का खोज रहे हो तो तुम वह दुनिया बना रहे हो जिसमें कि वेश्या पैदा होगी। यानि मैं यह कह रहा हूं कि लंदन की वेश्या और पैरिस की वेश्या से कुछ लेन-देना नहीं है। देखना यह है कि मैं जिस ढंग से जीऊंगा, वह कैसी दुनिया को बनाने में सहयोगी होता है? मेरे रहने का ढंग किस दुनिया को बनाता है? अपनी सीमा में ही वह एक छोटी दुनिया बनेगी, लेकिन उसकी धाराएं तो फैलती रहेंगी! आप, हम, सब जानते हैं कि--
राम ने सीता की अग्नि-परीक्षा ली, लेकिन कोई भी यह नहीं पूछता कि सीता
ने राम से क्यों नहीं कहा कि तुम भी अग्नि-परीक्षा से गुजरो? राम भी अकेले थे और किसी स्त्री से उनका भी संबंध हो सकता था।

लेकिन राम से सवाल ही नहीं उठा इतने हजार वर्षों में कि अग्नि- परीक्षा इनकी भी ली जाए। उस गरीब स्त्री की अग्नि-परीक्षा भी ले ली गई और फिर भी उसको धक्के देकर घर से निकाल दिया गया। राम ने जो दुनिया बनाई है, अब राम तो नहीं है आज, लेकिन राम जिस ढंग से जीए, उससे वह पुरुष को हमेशा के लिए मजबूत कर गए और स्त्री को हमेशा के लिए कमजोर कर गए। उनके जीने के ढंग का परिणाम है--पुरुष को सदा के लिए मजबूत कर गए, पुरुष को सदा कसौटी के बाहर कर गए। उसकी परीक्षा का कोई सवाल न रहा। स्त्री को सदा कसौटी पर चढ़ा गए। हम कैसे जी रहे हैं--यह न केवल आज की दुनिया को प्रभावित करेगा, यह प्रभाव अनंतकालीन होगा। क्योंकि हम तो मिट जाएंगे, लेकिन हम जो लहरें छोड़ रहे हैं, वह चलती चली जाती हैं। राम से सवाल ही नहीं उठा कि आप भी अग्नि- परीक्षा दे दो। सीता ने तो नुकसान किया ही स्त्रियों का, कि उसने सवाल ही नहीं उठाया। फिर उसे घर से निकाल दिया गया, तब भी सवाल नहीं उठा। फिर पांच हजार साल में हमसे भी किसी ने सवाल नहीं उठाया कि राम कैसे छूट गए। हमने सवाल इसलिए नहीं उठाया, क्योंकि हम सब पुरुष थे, और रामायण की सब टीकाएं पुरुषों ने लिखी हैं एवं सब व्यवस्था पुरुषों ने की है। स्त्रियों ने तो कोई रामायण की टीका लिखी नहीं अब तक, और मजा यह है कि पुरुष ने राम को आदर्श पति सिद्ध कर दिया और सीता को आदर्श पत्नि भी सिद्ध कर दिया। अपेक्षा बांध दी कि सीता जैसा व्यवहार करते रहना चाहिए स्त्री को! सीता-धर्म से कोई चूकती है तो वह व्यवहार से नीचे उतरती है। तो हम किस ढंग से जी रहे हैं? अगर तुम राम की प्रशंसा करते हो तो तुम एक ऐसी दुनिया बना रहे हो, जिसमें पुरुष के लिए एक अलग मापदंड है और स्त्री के लिए अलग। मेरे लिए तो राम का अस्वीकार इतना ही काफी है कि सीता के साथ उसने जो दुर्व्यवहार किया, उतना दुर्व्यवहार रावण ने भी सीता के साथ नहीं किया। रावण का सीता के साथ बहुत सदव्यवहार रहा, जिसे समझ पाना जरा कठिन बात है। जितना सदव्यवहार रावण ने किया है, राम ने जो दुर्व्यवहार किया है, उसका हिसाब लगाना मुश्किल है। इसलिए मेरे लिए तो इतना काफी है कि राम जो हैं, वह अस्वीकृत हो जाने चाहिएं। लेकिन अगर मैं थोड़ा भी आदर राम को देता हूं तो मैं समर्थन करता हूं किसी अन्य बात का। सीता ने जो ढंग अख्तियार किया, वह बिल्कुल ही गैर-विद्रोही का ढंग था, जो कि खतरनाक है। स्त्रियों को उसका विरोध करना चाहिए, पुरुषों को उसका विरोध करना चाहिए।
समझ लें कि एक आदमी मकान और घर बार छोड़ कर सड़क पर नंगा भिखारी हो जाता
है तो क्या तुम उसे सम्मान देने जाते हो? अगर तुम उसे सम्मान देते हो और कहते हो कि त्यागकर बहुत बड़ा काम किया तो तुम इस दुनिया में दुख को बढ़ाने में सहयोगी बनोगे, क्योंकि जब वह आदमी घर में था, शांति से था, सुख से था, तब तुम उसे सम्मान देने नहीं गए थे। जब वह धूप में खड़ा हो गया और भूखा खड़ा हो गया सड़क पर कांटों में लेट गया और सर्दी आई और धूप आई और वह वहीं पड़ा रहा तब तुम उसे सम्मान देने गए, तब तुम एक ऐसी दुनिया को बनाने में सहयोगी बन रहे हो जिसमें दुखी आदमी को, दुख का वरण करने वाले आदमी को आदर मिलेगा जिसमें सुखी आदमी को, सुख के वरण करने वाले को, सुख की खोज करने वाले को आदर नहीं मिलेगा। दोनों तरह तुम सहयोगी बन रहे हो। यानि मैं जो कह रहा हूं, वह यह कह रहा हूं कि हमारा सहयोग गहरा है। तुम्हारे इशारे तक में हमारा सहयोग है। जो दुनिया बन रही है, उसमें हमारा इशारा भी है। हम सड़क पर एक आदमी को नमस्कार कर रहे हैं, वह भी है।
मैं जिस कालेज में था, उसमें एक चपरासी था। उसकी उम्र होगी कोई साठ साल की, वह बूढ़ा आदमी था और उतनी उम्र का कोई प्रोफेसर नहीं था। लेकिन मैंने कभी किसी को भी उस बूढ़े से सम्मान से बोलते नहीं देखा। सामान्यतः एक आदमी होने का जितना सम्मान होना चाहिए, उतना भी नहीं। उसके आदमी होने की हैसियत ही नहीं। उसको किसी भी तरह बुलाया जा सकता है। मैं जब पहली दफा वहां गया तो मैं बहुत हैरान हुआ। मैंने चार छह दिन देखा और कहाः "यह क्या पागलपन है। इतना बूढा आदमी है कि हम सब के पिता की उम्र का होगा, उससे इस तरह का व्यवहार?"
उन्होंने कहाः वह चपरासी है।

मैंने कहाः चपरासी उसका काम है, उसका होना थोड़े ही। कोई आदमी चपरासी थोड़े ही होता है। वह छह घंटे चपरासी का काम करता है; और एक आदमी का काम है कि वह छह घंटे मजिस्ट्रेट का काम करता है। लेकिन न तो कोई आदमी मजिस्ट्रेट हो सकता है, न कोई आदमी चपरासी हो सकता है। छह घंटे के दफ्तर के बाद दोनों आदमी रह जाते है। एक आदमी चपरासी है छह घंटे दफ्तर में काम करके। जब दफ्तर के बाहर जाता है तो चपरासी है? चपरासी तो उसका एक काम था, इसका बीइंग (अस्तित्व) तो नहीं हो गया? तो मैंने उनसे कहाः ठीक है, तुम चपरासी के साथ एक दुर्व्यवहार कर रहे हो। दफ्तर के बाहर तुमने कभी इसे नमस्कार किया है? उन्होंने कहाः वह चपरासी है; आप कैसी बात करते हैं! दफ्तर के बाहर भी कोई सवाल नहीं है।
अब यह ऐसी दुनिया बनाने की कोशिश कर रहे हैं, जहां आदमी आदमीयत से नहीं पहचाना जाएगा। जहां आदमी क्या काम करता है, इससे पहचाना जाएगा। तो फिर ध्यान रहे, भंगी को कभी सम्मान नहीं मिल सकता। घुमा-फिरा कर उस आदमी से कई दफा बातें की उन्होंने कहा कि नहीं, भंगी को, चमार को, हरिजन को सब को बराबर मौका होना चाहिए। वर्ण-व्यवस्था ठीक नहीं है।
जिस आदमी ने मुझसे यह कहा कि वर्ण-व्यवस्था ठीक नहीं है, वह वही आदमी है, जो दो दिन पहले मुझसे कहता था कि यह आदमी चपरासी है, इससे हम ऐसे ही बोलेंगे। तो फर्क क्या है वर्ण-व्यवस्था और इसके चपरासी होने में? मुआमला क्या है? कठिनाई क्या है? वह चूंकि बेचारा भंगी है इसीलिए, क्योंकि उसका फंक्शन (कार्य) उसका बीइंग (अस्तित्व) बना दिया है हमने, यानी पाखाना साफ करना उसका कार्य नहीं रहा; उसका अस्तित्व उसकी आत्मा हो गई। पाखाना साफ करना ही उसकी आत्मा है, इसलिए छूने योग्य नहीं रहा वह! अगर सिर्फ काम होता तो छह घंटे बाद छूटने पर, छह घंटे तो छूने योग्य होता! काम तो खत्म हो जाता है, लेकिन आत्मा तो खत्म नहीं होती। तो हमने काम को उसकी आत्मा बना दिया है, वह चपरासी बना रहे, कोई उसमें फर्क नहीं है।
रास्ते में जब तुम एक मिनिस्टर को नमस्कार करते हो तो तुम वर्ण-व्यवस्था पैदा कर रहे हो। लेकिन वह खयाल में नहीं होता, क्योंकि भंगी को नमस्कार नहीं करते हो, एक मिनिस्टर को नमस्कार करते हो तो वर्ण व्यवस्था पैदा कर रहे हो। फिर वह वर्ण व्यवस्था जो कुछ करेगी, उसके जिम्मेवार तुम और मैं होंगे; क्योंकि हम जो व्यवहार कर रहे हैं, उससे वह पैदा होती है; यानी हम जो भी कर रहे हैं, उससे हम कोई समाज-व्यवस्था, चारों तरफ उसकी धारा पैदा किए चले जा रहे हैं और वे धाराएं पैदा होंगी।
एक सज्जन आए, छह महिने पहले। उनका एक लड़का था, वह चल बसा बहुत दुखी थे। पढे-लिखे आदमी हैं; कोई डेढ़ हजार रुपये की तनख्वाह पर हैं। मैंने उनसे कहाः घबड़ाइए मत, चार-छह महीने में सब ठीक हो जाएगा। मैंने तो सिर्फ ऐसे ही कहा था कि मन हलका हो जाएगा, लेकिन दो दिन पहले वे आए और कहने लगेः आपकी कृपा से सब ठीक हो गया। मैंने कहाः क्या हुआ? पता लगा कि पड़ोस में किसी ने अपना बच्चा उनको दे दिया था। उस बच्चे को लेकर वे आए थे। बिल्कुल अच्छे खून का है, खत्री खून का। अच्छे खानदान का लड़का है और अपनी ही जाति का है। माता-पिता बड़े भले लोग थे कि उन्होंने दे दिया। मैंने उनसे पूछा कि क्या खून भी खत्री होता है? कोई जांच करवा कर बता सकिएगा कि यह खून खत्री का है? इस लड़के का खून निकलवा कर, आपका खून निकलवा कर कोई दुनिया में नहीं बता सकता कि यह खून किसका है। खून कहीं खत्री का होता है? अब यह जो आदमी कह रहा है, उसके कहने से एक दुनिया निर्मित होगी। उस दुनिया में वर्ण-व्यवस्था होने वाली है; उससे नहीं बचा जा सकता। अब यह आदमी कह रहा है कि वे बड़े अच्छे लोग हैं। उसकी पत्नि जो छह महिने पहले रोती थी, पाकर बड़ी प्रसन्न है उस बच्चे को। लेकिन उसने पहले बच्चे की बात ही नहीं की। वह बहुत प्रसन्न है और वे दोनों कह रहे थे कि बहुत अच्छे लोग हैं। वे तो अच्छे लोग हैं, जिन्होंने बच्चा दे दिया; आप कैसे लोग हैं जिन्होंने बच्चा ले लिया? जिन्होंने दे दिया वे अच्छे लोग हैं, तो कैसे लोग हैं जिन्होंने बच्चा ले लिया? कुल कारण यह है कि वह गरीब घर का बच्चा है। चार-छह बच्चे हैं उनके, पाल नहीं सकते हैं तो उसको दे दिया है। मैंने कहाः अगर इस बच्चे से थोड़ा भी प्रेम होता तो तुम इसे उनसे न तोड़ते। तुम जो प्रेम दिखला रहे हो इस बच्चे

से, वह जरा भी प्रेम नहीं है। अगर तुम्हें थोड़ा भी प्रेम इससे है, तो तुम इसे उनके पास पलने दो। इसकी व्यवस्था करो, जो तुम व्यवस्था अभी करोगे। इस बच्चे से तो कोई प्रेम ही नहीं है उनको। बल्कि उस बच्चे की नई मां ने कहाः इसकी मां इसे देखने आना चाहती थी तो हमने उसे मना कर दिया है। इस तरह तो मोह बना रहेगा, वह टूटेगा कैसे? मैं तो अपने पति को कहीं भी जल्दी यहां से ट्रांसफर करा लेने को कह रही हूं ताकि यह मोह न रह जाए। और वे लोग, बड़े अच्छे लोग हैं! कह दिया तो वे लोग नहीं आ रहे हैं।
अब ऊपर से देखने में इसमें कुछ बुराई न मालूम पड़ेगी, लेकिन ये लोग एक ऐसी दुनिया बनाएंगे, जो बड़ी खतरनाक होगी। उसमें इनका जिम्मा होगा। मैंने इनसे पूछा कि अगर यह बच्चा मर जाए...
एकदम वे कहने लगेः आप ऐसी अपशकुन की बात मत करिए।
अगर यह बच्चा मर जाए, तब आप तो बहुत दुखी होंगे।
उन्होंने कहाः बहुत दुख होगा।
मैंने कहाः यह बच्चा अगर उसी के पास रहता और मर जाता, तो भी यही बच्चा मरता तब आपको कोई तकलीफ होती?
उन्होंने कहाः इसमें क्या तकलीफ होती? हमसे कोई संबंध नहीं था!
इसका मतलब क्या होता है? इसका मतलब होता है कि जब एक अमरीकी किसी वियतनामी को गोली मारता है तो उसका कोई मतलब नहीं है उससे। वह जो मर रहा है तो मर जाए, उससे संबंध क्या है! अमरीकी युवक का एक वियतनामी युवक से क्या संबंध! क्या लेना-देना! जैसे कि एक हिंदुस्तानी एक पाकिस्तानी की छाती में छुरा भोंकता है तो हमें क्या मतलब! लेकिन बीस साल पहले हमें मतलब था। अगर कराची पर बॉम्बार्डमेंट होता, तो हम दुखी होते उतना ही जितना दिल्ली पर होता। लेकिन अब अगर कराची पर बॉम्बार्डमेंट हो तो हम यहां बंबई में खुश होंगे।
मैं यह कह रहा हूं कि यह जो इस मां और इस बाप ने कहा, वह इनका फैलाव है। हमारा वर्तन का यह सारा का सारा फैलाव है। तब हमको ऐसा नहीं लगता। कराची में कोई मर रहा है तो वह पाकिस्तानी मर रहा है, उसको मरना ही चाहिए! हमको उससे क्या लेना-देना है। हमारा देश अलग, उसका देश अलग! पड़ोसी का लड़का मरे तो मरे, हमें क्या मतलब! परंतु हमारे ये वर्तन हमें खतरे में ले जाएंगे। अभी गुणा, मुझे एक बढ़िया बात कह रही थी। गुणा की छोटी बहन का पति चल बसा। कोई गुजरेगा तो हम दुखी होंगे। या तो हमें पता चल जाए कि उसने कोई पाप किया था और वह कम उम्र में चल बसा, हम निश्चित हो जाएं। अगर हमें पता चले तो हम तकलीफ में होंगे।
अब इसे हम अगर बहुत गौर से देखेंगे तो यह बहुत कठोर बात है। अगर पुराना परिचित यह कहता है कि कोई आदमी दुख में पड़ा हो तो उसने कोई पाप किया होगा, तो इसको थोड़ा समझने की कोशिश करना। इसका मतलब यह होता है कि हम उसके दुख में सहभागी नहीं होना चाहते। हमें पक्का पता लग जाए कि इसने पाप किया है तो अपना फल भोग रहा है। हम उससे फिर कट गए। कोई आदमी दुख भोग रहा है, अगर हमें पक्का हो जाए कि उसने पाप किया है तो हम कहते, ठीक है, अपना फल भोग रहा है। फिर हमारा संबंध ही खत्म हो गया। अगर पड़ोस में कोई आदमी मर जाए तो हम सोचेंगे कि कुछ किया होगा, इसलिए इतनी जल्दी मर गया। तब वह जो पीड़ा, वह करुणा हमारे प्राणों को झकझोर जाती है, उससे हम बच गए। हमने एक व्यवस्था बना ली कि वह अपना फल भोग रहा है। हम यह मानने को राजी नहीं है कि जिंदगी बड़ी रहस्यपूर्ण है। उसमें जरूरी नहीं है कि जो मरता है उसने पाप किया होगा, जो नहीं मरता वह पुण्यात्मा है; कि जो बच गया है वह पुण्य के कारण बच गया है और जो चला गया है, वह पाप के कारण चला गया है।
जिंदगी बहुत रहस्यपूर्ण है। उसमें जन्म भी व्यवस्था है, उसमें मृत्यु
भी व्यवस्था है। यहां जो चीजें आएंगी, वे जाएंगी भी। लेकिन हम एक्सप्लेनेशन, व्याख्या खोजते हैं। हम क्यों खोजते है? इसलिए नहीं कि जो आदमी चला गया है, व्याख्या खोज लेने से उसको कुछ हम रोक लेंगे। वह तो चला गया। वह चला गया, लेकिन व्याख्या खोज लेने से हम छुटकारा पा जाएंगे।
अब मेरा कहना है कि जिसे हमने प्रेम किया है, वह गया है, हमें रोना होगा, दुख झेलना होगा, झेलना चाहिए, व्याख्या हम क्यों खोजें? मैंने

तुम्हें प्रेम किया है, तुम चल बसे हो तो मैं रोऊंगा, दुखी होऊंगा, पीड़ित होऊंगा। यह मेरे प्रेम का ही भाग है, यह मेरे प्रेम की ही नीति है। प्रेम हमने किया था। जब तुम थे तो तुम्हारे होने का सुख मैंने लिया था, तुम्हारे न होने का दुख कौन लेगा? मैं यह पूछता हूं कि मैं एक व्यक्ति को प्रेम करता हूं और उसके होने का सुख मैंने लिया, और आज वह चल बसा तो उसके न होने का दुख कौन लेगा? उसके न होने का दुख मुझे लेना ही चाहिए उतने ही आनंद से जितने आनंद से मैंने उसके होने का सुख लिया। लेकिन हम व्याख्या खोजना चाहते हैं! हम पूछना चाहते हैं--क्यों चला गया, व्याख्या मिल जाए! सुख लेते वक्त हमने कभी नहीं पूछा कि उस व्यक्ति में सुख मिल रहा है, इसकी क्या व्याख्या है। बिहार में भूकंप हुआ तो गांधी जी ने कहा कि बिहार के लोगों ने हरिजनों
के साथ जो पाप किया, उसका फल भोग रहे हैं। अब यह जरा सोचने जैसा है। कितनी कठोर बात है! जैसे कि हरिजनों के साथ बिहार के लोगों ने ही बुरा काम किया हो। क्या यह सारा मुल्क बुरा काम नहीं कर रहा है हरिजनों के साथ? अगर हरिजनों के साथ बुरा काम करने का फल भूकंप है तो इस पूरे हिंदू समाज को भी रसातल में चला जाना चाहिए था। इसके बचने का कोई कारण ही नहीं है इस पृथ्वी पर। उसने इतना अनाचार किया है, जिसकी गणना और हिसाब लगाना मुश्किल है। किसी आदमी को मार डालना बहुत बड़ा अपराध नहीं है, क्योंकि आदमी क्षण भर में मर जाता है, लेकिन किसी आदमी को हरिजन बना कर जिंदा रखना एक लबीं सजा है, जो सत्तर-अस्सी साल तक शूली पर लटकाए रखना है। उसका हिसाब लगाना मुश्किल है कि उसने कितना पाप किया है। वह अगर उसका फल था तो पूरे मुल्क को कभी का डूब जाना चाहिए। जमीन पर होना ही नहीं चाहिए। लेकिन बिहार में भूकंप आया, वहां लोग तकलीफ में पड़े तो गांधी जी ने व्याख्या कर ली कि वहां कि लोगों ने हरिजनों के साथ जो दुर्व्यवहार किया था, उसका फल वे भोग रहे थे। अब सोचो, इस व्याख्या को सुन कर भूकंप की जो पीड़ा है, वह एकदम विदा हो जाती है? मैं नहीं कहता कि व्याख्या सही या गलत है, यह सवाल नहीं है बड़ा। सवाल यह है कि जैसे हमने सुना है कि भूकंप इसलिए पड़ा कि उन लोगों ने पाप किया था और उसका फल भोगा उन्होंने, वैसे ही, वह जो दुख भोग रहा है, उसके प्रति हमारा भाव बदल गया है, बुनियादी रूप से बदल गया है, उसके हमारे बीच एक खाई का फासला हो गया है। तब हमें बिल्कुल ऐसा लगेगा कि ठीक ही हो रहा है। अगर ठीक उसका परिणाम लें तो उसका मतलब होगा कि ठीक ही हो रहा है, बल्कि फल मिलना ही चाहिए। अगर हम ऐसी व्याख्या सोचते हैं तो हम एक ऐसी दुनिया बनाएंगे जो अत्यंत कठोर होगी।
मेरा मानना है कि जिन लोगों ने जीवन के रहस्यपूर्ण तथ्यों की काल्पनिक व्याख्याएं कर ली हैं, उन लोगों ने कठोर दुनिया निर्मित की है। जैसे मेरा मानना है कि हिंदुस्तान में हमने बहुत कठोर समाज निर्मित किया है, क्योंकि हमने प्रत्येक चीज की व्याख्या खोज ली है। व्याख्या की वजह से सब कठोर और जड़ हो गया। कोई गरीब है तो हमने व्याख्या खोज ली कि अपने पाप का फल भोग रहा है। कम उम्र में मरा तो हमने कहा कि उसने अपने किसी पाप का फल भोगा है। दुखी है, पीड़ित है, अंधा है, लंगड़ा है, लूला है तो हमने सोचा कि अपने पाप का फल भोग रहा है। हमने जब-जब व्याख्या कर ली, तब-तब पीड़ा की जो गहराई थी, उससे हम बच भागे।
मेरे पास अगर कोई किसी को लाता है, एक पागल आदमी को लेकर आता है, तो वह मुझसे पूछता है कि पागल क्यों है? पागल है, ठीक हो सकेगा कि नहीं हो सकेगा? किस पाप का फल भोग रहा है? अब हो सकता है वह पागल आदमी, हम सब के पाप का फल भोग रहा हो, क्योंकि उसके बाप ने उसे पैदा करते वक्त डाक्टर से सलाह ही नहीं ली जाकर कि मेरा बच्चा पागल तो पैदा नहीं हो जाएगा? मां ने उसको पैदा करने के पहले विशेषज्ञों से नहीं पूछा कि मेरा बच्चा पागल तो नहीं हो जाएगा? पूछ यह रहे हैं कि कौन से पाप का फल भोग रहा है? यह आदमी, जो पागल है, किस पाप का फल भोग रहा है? उनको मैं क्या कहूं? उन्होंने यह भी नहीं पूछा सोचा कि कहीं उन्होंने तो इसको पागल नहीं किया हुआ है? कितने ही बच्चे इसलिए पागल हैं कि मां बाप जो उनके साथ वर्तन कर रहे हैं, उसमें वे पागल हो ही जाएंगे लेकिन वह सवाल ही नहीं है। हम व्याख्याएं चाहते है जो हल कर दें मुआमले को। हम ऐसी व्याख्या चाहते हैं जो हमें छुटकारा दिला सकें, यानि वह

आदमी जिम्मेवार रह जाए। इसलिए हमने व्यक्तिगत कर्म की बहुत अदभुत फिलॉसफी खोजी है, जबकि वस्तुतः कर्म बड़ी सामूहिक घटना है; कर्म एकदम व्यक्तिगत घटना नहीं है। कर्म का घटनाक्रम बड़ा सामूहिक और बड़ा जाल से भरा हुआ है। लेकिन हमने व्यवस्था कि है कि बच्चू भाई अपने कर्म का फल भोग रहे हैं, हमें अपने कर्म का फल भोगना चाहिए। न बच्चू भाई से मुझे कुछ लेना-देना है और न मुझसे उनको कुछ लेना-देना है। वह अपने कर्म का फल भोगते रहेंगे, मैं अपने कर्मों का फल भोगता रहूंगा। हमारी अलग-अलग यात्राएं हैं और कहीं कोई ताल-मेल नहीं है, कहीं हमारा कोई जोड़ नहीं है।
इस मुल्क ने जो ऐसी व्याख्याएं खोज लीं कि एक-एक व्यक्ति अपना-अपना भोग रहा है, उसने एक-एक व्यक्ति को अलग तोड़ दिया है। इसलिए हिंदुस्तान में इतने दिनों तक गरीबी रह सकी, क्योंकि हर आदमी ने समझा कि इससे हमें क्या लेना देना है। यह हम जानकर हैरान होंगे कि सारी दुनिया में धर्मों मे जो व्याख्या दी है, उन्होंने दुनिया जैसी है, उसको वैसे बनाए रखने में सहयोग दिया है। तो यह जो? कल्पना है, विचार है, यह जो धारणा है कि मैं जिम्मेवार हूं, यह असल में पुराने सारे धर्मों के विपरीत है, क्योंकि पुराने सारे धर्म यह कहते हैं कि तुम अपने लिए जिम्मेवार हो। हम दोनों की कोई सामूहिक जिम्मेवारी--जैसी कोई चीज नहीं है पुराने धर्मों में। पुरानी सारी की सारी व्यवस्था समूह-चित्त के लिए कुछ भी नहीं कहती, वह सिर्फ व्यक्ति- चित्त के लिए कुछ कहती है और उसका परिणाम यह हुआ कि पांच हजार साल से समाज जैसा था, वैसा ही है, क्योंकि वह बुनियादी बात ही पैदा नहीं हुई। अगर मैं भी जिम्मेवार हूं, अगर मेरा लड़का पैदा होता है और वह पागल पैदा होता है तो उसमें मैं भी जिम्मेवार हूं और मेरे पिता भी जिम्मेवार हैं और हजारों साल की सारी परंपरा जिम्मेवार है, यह समझने पर तो बड़ी घबराहट होगी। अभी तो परेशानी सिर्फ इतनी है कि यह आदमी पागल है। तब परेशानी यह भी हो जाएगी कि हमने भी कुछ किया है।
हम अपने रास्ते चलते हों सड़क पर, एक आदमी भूखा मर रहा है, वह अपने ढंग
से मर रहा है, हम सोचते हैं कि हमें क्या लेना देना है! इसलिए हिंदुस्तान इनसेंसिटिव, कठोर हो गया है, बिल्कुल संवेदनशीलता है ही नहीं इसमें किसी तरह की। एक आदमी भीख मांग रहा है तो हम उसको डांट देंगे कि क्या भीख मांगते हो! शर्म नहीं आती? लेकिन हमें यह खयाल नहीं आता कि यह जो भीख मांग रहा है, तो शर्म हमें भी आनी चाहिए, क्योंकि हम जिस समाज में खड़े हैं, उसी में यह भीख मांग रहा है। इसमें कहीं न कहीं हमें भी शर्म में भागीदार होना चाहिए। हम बड़ी बेशर्मी से उसको कह सकते हैं--हटो, शर्म नहीं आती जवान होते हुए भीख मांगने में? लेकिन इसने जो समाज बनाया है, वह हमने भी बनाया है, हम भी उसमें भागीदार हैं। यह बात हमारे खयाल में नहीं आती! वह जो बात है, कुल जमा इतनी ही है कि निरंतर यह ध्यान रखने की जरूरत है। अगर एक नई दुनिया बनानी हो तो हमें पुराने सारे आधार बदल देने होंगे। अभी जो बड़े से बड़े आधार हैं, वे है व्यक्तिगत कर्मों और व्यक्तिगत दायित्वों के। दायित्व सामूहिक हैं, कर्मों का जाल भी सामूहिक है।
मैं अपना किया ही नहीं भोगता,
मैं दूसरों का किया भी भोगता हूं।
दूसरे अपना किया ही नहीं भोगते,
मेरा किया भी भोगते हैं।
हमारा जो रहना है, हमारा जो जीना है, वह जीना आइसोलेटेड, अकेले का नहीं है। हम व्यक्ति तो हैं, लेकिन आइसोलेशंस नहीं हैं। एक-एक लहर का अपना व्यक्तित्व है, लेकिन एक-एक लहर का अलग अस्तित्व नहीं है। व्यक्तित्व हमारा अलग-अलग है, लेकिन अस्तित्व हमारा सामूहिक है। वह जो अस्तित्व का नीचे फैलाव है, वह हमारे अनुभव में आ जाए तो सब दुख, सब पीड़ा, सब आनंद, सब सुख के लिए हम जिम्मेवार हैं। अगर एक दफा यह बोध मनुष्य जाति को हो जाए तो जिंदगी को बदलने में देर नहीं लगेगी, क्योंकि बदलाहट के बिंदु को हमने पकड़ लिया, जहां से बदलाहट हो सकती है।
अभी मैं परसों मनोविज्ञान कालेज में बोलने गया था मनोचिकित्सा पर, साइकोथेरेपी पर। उनसे मैंने यही कहा कि हमने जो समाज बनाया, वह तो ऐसा है

कि एक-एक आदमी को रुग्ण कर दे, और फिर हम इंतजाम करते हैं चिकित्सा का। अब हम ज्यादा से ज्यादा चिकित्सा इतनी ही कर सकते हैं कि उसको हम वापस उतनी सीमा तक रुग्ण कर दें, जितनी सीमा तक काम-चलाऊ व्यवहार में वह उपयोगी हो जाए। एक आता है उसको हम कहते है, यह पागल हो गया है, इसको ठीक करना है, नार्मल लाना है। तो कुल मतलब इतना है कि समूह जितने पागलपन के लिए राजी है, उतने पागलपन की सीमा तक उसको पागल होना चाहिए, उसके आगे नहीं। बस, उतना वह पागल हो जाए तो ठीक है, कोई झंझट नहीं है। उससे ज्यादा होता है, तब हमें कठिनाई शुरू होती है कि कुछ गड़बड़ हो गया है।
वस्तुतः दो तरह के पागलपन हैं--एक सामूहिक पागलपन है जिसको हम स्वीकार किए हुए हैं, और एक व्यक्तिगत पागलपन है जो हमें स्वीकार नहीं हैं। उसको हम, व्यक्ति को इलाज कर कराकर ठीक कराके बिठा देते हैं, लेकिन समाज वहीं का वहीं है। फिर उन्हीं लोगों के बीच एक पत्नी बीमार हो जाए, उसको हम ठीक-ठाक करके फिर उसी पति के पास पहुंचा देते हैं, उसी दुनिया में, जहां वह पागल हुई थी। उस दुनिया में तो कोई फर्क हुआ नहीं। वहां न उसका पति बदला, न उसका बेटा बदला, न घर बदला। कुछ नहीं बदला, सब वैसे का वैसा है। यह स्त्री वहीं पागल हुई थी, इसको हम फिर ठीक कर के वहीं घर में पहुंचा देते हैं। अब वह फिर पागल होगी। इसके पागल होने का तो सारा का सारा इंतजाम पूरी अपनी जगह बैठा हुआ है। इसके पागल होने में इसका पति यह नहीं सोचता है कि मैं भी जिम्मेवार हूं। वह कहता है--यह पागल हो गई है तो इसका इलाज करवा दो। अगर उसको ऐसा अनुभव हो कि इसके पागल होने में, मैं भी जिम्मेवार हूं, उसका बेटा भी सोचे कि मैं भी जिम्मेवार हूं उसके पागल होने में, क्योंकि मैं इसका बेटा हूं, यह मेरी मां है, मेरी मां पागल हो गई तो यह कैसे हो सकता है कि बेटे में कोई तरकीब न हो और मां पागल हो जाए? क्योंकि, बेटा और मां जो है, वे एक ही चीज के दो छोर हैं। यह कैसे हो सकता है कि पत्नी पागल हो जाए और पति में गड़बड़ न हो क्योंकि, पत्नी जो है, वह पति का ही दूसरा छोर है। अगर यह पति, इसका बेटा, इसका भाई, इसकी मां, इसके बाप यह सोच सकें, समझ सकें कि हम भी कुछ कहीं न कहीं इसको पागल बनाने में जिम्मेवार हैं तो फर्क आ सकता है और एकदम आ जाएगा। अन्यथा ज्यादा से ज्यादा हम इसको फिर नोर्मल बनाकर ले आएंगे, दो चार साल में फिर इसको पागल करने का इंतजाम करेंगे।
जोर इस बात पर देने का है कि किसी न किसी अर्थ में हम सामूहिक दायित्व
को अनुभव करें। कहीं भी दूर-से-दूर कहीं कुछ हो रहा हो, यह हमें खयाल में नहीं आता। जैसे कि हिटलर हुआ है। आज सारी दुनिया गाली देती है कि हिटलर का होना बुरा था और बुरा हुआ। लेकिन हम सब वही काम करते हैं जो हिटलर को पैदा करने वाले हैं। अभी इंदिरा बंबई में आए तो पचास हजार आदमी रैली करेंगे। उन्हें पता ही नहीं कि रैली हिटलर पैदा करवाती है। हिटलर के पहले बहुत रैलियां हुई हैं, जिनसे वह पैदा हुआ है। मेरा मतलब समझ रहे हो तुम? हिटलर के पैदा होने की सीढ़ियां हैं। वे सीढ़ियां सब हम पूरी कर देंगे। जब हिटलर पैदा हो जाएगा, तब हम कहेंगे कि यह तो बहुत बुरी घटना घट गई। हिटलर भी आसमान से पैदा नहीं होता; उसे पैदा किया जाता है। हम सब उसे पैदा करते हैं। हमें खयाल ही नहीं कि हम कैसी तरकीब से पैदा करते हैं। एक दफा एक आदमी कैसे हिटलर हो जाता है? जब हो जाता है, तभी हमें पता चलता है। फिर वश के बाहर बात हो जाती है, लेकिन करने की प्रक्रिया हम पूरी करते हैं। हिटलर फिर-फिर पैदा होते रहेंगे। अभी हिटलर बंद नहीं हो सकते हैं दुनिया में, क्योंकि दुनिया वहीं-की-वहीं है।
मैं एक गांव गया हुआ था। किसी ने पूछा कि अब तो हिटलर जैसे लोग पैदा नहीं होते, अब तो नाजीइज्म का कोई उपाय नहीं है। मैंने कहा रोज उपाय है, वही का वही है सब, क्योंकि हिटलर जिस दुनिया में पैदा हुआ था, उस दुनिया में कोई फर्क नहीं पड़ा। आदमी का दिमाग वही का वही है, जिसमें हिटलर पैदा हुआ था। वह फिर पैदा हो जाएगा। हिटलर ने तो सब उपद्रव किया, उसको हम गालियां देते हैं लेकिन हमें खयाल नहीं है कि हम सब लोगों ने सारी दुनिया ने हिटलर को बड़ी प्रशंसा दी है। सब तरह की प्रशंसा ने उसको खड़ा किया था और वही रुख आज भी है।

हिटलर ने अपनी आत्म-कथा में लिखा है कि शुरू-शुरू में जब उसके साथ बहुत कम लोग थे और सभाओं में कोई आता भी नहीं था, तब वह अपने बीस-पच्चीस लोगों को सभाओं में लेकर जाता था, जो भीड़ में चारों तरफ खड़े रहते। यह पहले से नियत था कि कब उनको तालियां बजानी हैं। वे पच्चीस लोग तालियां बजाएंगे ठीक वक्त पर। हिटलर ने कहाः "एक दिन मैं बड़ा हैरान हुआ। पहले तो मैंने सोचा था कि पच्चीस ही तालियां बजेंगी, लेकिन तालियां तो दस हजार बज गईं। बजाई तो मेरे पच्चीस लोगों ने, लेकिन लोगों ने साथ दिया!" अब तुम खयाल करना, तुम जब तालियां बजाते हो कहीं मीटिंग में, तो तुम्हारे बगलवाला ताली बजा रहा है इसलिए तो तुम नहीं बजाते हो? नहीं तो तुम हिटलर पैदा कर सकते हो। मेरा मतलब समझा तुमने? कहीं बगलवाले को देख कर तुमने ताली नहीं बजाई? इस तरह तुम पैदा कर सकते हो हिटलर क्योंकि तुम इमिटेट (अनुकरण) कर सकते हो। हिटलर इतना ही चाहता है कि बस, इमिटेट करने वाले लोग मिल जाएं, फोलो (अनुसरण) करने वाले लोग मिल जाएं तो हिटलर बनने में क्या दिक्कत है!
ध्यान रहे, हम हंसते हैं तो हम फोलो (अनुसरण) करते हैं। हमें खयाल नहीं होता कि हम क्या कर रहे हैं। हमसे सिर्फ करवाया जा रहा है। चारों तरफ कुछ हो रहा है, हम वही करने लगते हैं। इस पर बहुत प्रयोग किए गए हैं। ध्यान में मैं देखता हूं निरंतर, कि ध्यान में अगर एक आदमी खांसा, तो दो मिनट के भीतर पचास आदमी खांसेंगे। एकदम से सिलसिला शुरू हो जाएगा। यह सब इमिटेट कर रहे हैं। ऐसा नहीं कि ये जान-बूझ कर कर रहे हैं। अभी यहां बैठे हैं आप। एक आदमी पेशाब करने चला जाए; पंद्रह मिनट में सारे लोग पेशाब करने को जाने की हालत में हो जाएंगे, जिनको खयाल भी नहीं था। इमिटेट करने की एक वृत्ति है हमारी। कोई कुछ करेगा तो एकदम से खयाल आ जाता है कि यह करने योग्य है। बस, खयाल आया कि क्रिया शुरू हो जाती है।
मैं यह कह रहा हूं कि हमारा छोटे से छोटा काम इस जगत में बड़े से बड़े काम के पीछे आधारभूत होता है। अगर तुमने बिना समझे-बूझे ताली बजाई, तो तुम एक ऐसी दुनिया बनाओगे जो कि बिना समझे-बूझे निर्मित होगी। इतना छोटा सा कृत्य भी इतना काम करेगा इसका बोध अगर तुम्हें हो जाए तो तुम एक ऐसे ढंग से जीना शुरू करोगे जो एक बदला हुआ ढंग होगा। जिस दिन तुम बदलकर देखना शुरू करोगे, तुम बहुत हैरान हो जाओगे कि लोग बिल्कुल मशीनों की तरह काम कर रहे हैं। जिस दिन तुम होश से ताली बजाओगे, उस दिन तुम हैरान हो जाओगे कि बाकी लोग क्या कर रहे हैं। तब तुम लोगों को देख कर बहुत चौंकोगे कि यह क्या हो रहा है। बिल्कुल एक हिप्नोटाइज्ड है, सम्मोहित ढंग से सारी दुनिया चली जा रही है, बेहोशी में सब होता चला जा रहा है। इस बेहोशी को तोड़ने वाले तुम्हीं को बनना होगा, नहीं तो कौन तोड़ेगा! इतना पक्का है कि यदि एक आदमी तोड़ता है तो वह नई तरह की धाराएं पैदा शुरू कर देता है, क्योंकि तुम बिना धाराएं पैदा किए तो रह ही नहीं सकते। समझ लें कि पचास आदमी तालियां बजा रहे हैं और एक आदमी ने ताली नहीं बजाई और वह बैठा रह गया, तब तुम यह मत समझ लेना कि उसका भी परिणाम नहीं हो रहा है। उसके बगल वाले की ताली कमजोर बजेगी। उसका बगल वाला अपने आगे के बगल वाले की ताली देखकर बजा रहा था। लेकिन इस तरफ एक आदमी ताली नहीं बजा रहा था, इस ताली की चोट कम हो जाएगी। इस आदमी का भी असर होने वाला है, क्योंकि अगर बगल वाले की ताली का असर हो रहा है तो क्या गैर-ताली वाले का नहीं होगा? होगा। वह भी होने वाला है। अगर उसके पीछे भी कोई ताली नहीं बजा रहा हो और आगे भी ताली नहीं बजा रहा हो तो हो सकता है, वह भी चुप रह जए; वह सोचे, ताली बजाने जैसी बात नहीं है।
हम जो भी कर रहे हैं, वह परिणामकारी हैं और हमें अपने को जिम्मेवार मानना ही चाहिए। हैं हम जिम्मेवार। बड़ी बात तो यह है कि इसका परिणाम क्रांति होता है, क्योंकि जब तुम जिम्मेवार मानोगे, तुम्हें बदलना ही पड़ेगा। जब तुम बदलोगे तो दुनिया बदलेगी, क्योंकि तुम उतने ही बड़े हिस्से हो दुनिया के, जितना कोई और है। तुम कोई छोटे हिस्से नहीं हो। जो हमें बहुत बड़े लोग दिखाई पड़ते हैं, ये बहुत छोटे-छोटे लोगों की ताकत से बड़े होते हैं। इसलिए मेरा कहना है कि जो छोटे आदमियों की ताकत पर बड़ा हो जाता है, वह बहुत बड़ा नहीं हो सकता। हमें दिखता है कि हिटलर बहुत बड़ा आदमी था, लेकिन किन

लोगों की ताकत पर वह बड़ा आदमी था? उन लोगों की, जिन्होंने ताली बजा दी और वे सब छोटे आदमी थे।
मैं कल या परसों उर्दू के किसी कवि की दो पंक्तियां देख रहा था। शायद
वे पंक्तियां आपकी नजरों से भी गुजरी हों उसमें उसने कहा है कि जिंदगी भर गधे ताली बजाएं, इसके लिए हम मेहनत करते रहें। कहना उसका यह है कि हमारी हालत उनसे ज्यादा नहीं हो सकती है। हम मेहनत इसलिए करते रहे कि एक अच्छी कविता लिखें और दस आदमी ताली बजा दें तो हमारी हालत उनसे बहुत अच्छी नहीं हो सकती। उनकी ताली पर तो हम निर्भर हैं। उनकी ताली पर तो हम जिंदा हैं, उनकी ताली तो हमारी आत्मा है, वह न बजाई गई तो गए। वे, जिनको तुम बहुत बड़े लोग कहते हो, वे बहुत छोटे-छोटे लोगों की छाती पर खड़े होकर बड़े लोग हैं। छोटे लोग स्वयं जिम्मेवार हैं उनको छाती पर खड़ा रखने में, नहीं तो वे कह दें कि नीचे उतर जाओ, बात खत्म हो जाती। इस छोटे होने का खयाल छोड़ देना होगा।
न कोई छोटा है, न कोई बड़ा है। हम सब शक्तिओं के पुंज हैं। हम उसका कैसे उपयोग करते हैं, इस पर सब कुछ निर्भर करता है। हम सब शक्तिपुंज है। लेकिन अगर एक दफा यह खयाल बैठ गया कि हम छोटे हैं तो छोटे ही रहेंगे। यह खयाल बड़े लोगों ने बिठाया है, नहीं तो इसके बिना वे बड़े नहीं हो सकते। इसलिए सारा बड़प्पन जो है दुनिया का, वह अधिक लोगों को छोटे होने के खयाल को पिला कर ही खड़ा होता है, नहीं तो खयाल खड़ा नहीं हो सकता। दुनिया में बड़े होने का जो राज है, उस राज का बुनियादी आधार इस पर रखा हुआ है कि अधिक लोगों को यह समझना ही पड़ेगा कि तुम बिल्कुल छोटे आदमी हो, तुम कुछ भी नहीं कर सकते हो, तुम कुछ हो ही नहीं, तुम तो इतना ही कर सकते हो कि किसी के अनुयायी बनो, किसी के शिष्य बनो, किसी के पीछे जाओ, किसी के पैर पकड़ो, यही तुम कर सकते हो। यह समझाया गया है बहुत दिनों तक। उसका परिणाम भी हो गया है, बहुत लोगों ने यही मान लिया है। मजा यह है कि छोटे-छोटे चेले जो कुछ भी नहीं हैं, उनके बल पर एक बड़ा आदमी, एक बड़ा गुरु हो जाता है, जो हजारों साल तक पूजा जाता है। अगर तुम उसका बल देखने जाते हो तो वह दिखाई देगा उन छोटे-छोटे आदमियों में, जो कुछ भी नहीं थे। इतना तो बल है उनमें कि एक आदमी को बड़ा बनाते हैं। बल खींच लें तो यह आदमी एकदम सामान्य हो जाए।
अच्छी दुनिया में बड़े आदमी और छोटे आदमी नहीं होंगे, अच्छी दुनिया में आदमी होंगे। बड़ा और छोटा लक्षण है, रुग्ण और बीमार दुनिया का। वह महापुरुष भी है और क्षुद्र पुरुष भी है; महात्मा भी है और हीन आत्मा भी है-- यह बीमार दुनिया का लक्षण है। अच्छी दुनिया में आदमी होंगे और अपने-अपने ढंग से जिएंगे, किसी की छाती पर सवार होने का कोई सवाल नहीं है। तुम अपने ढंग से जिओ, बस। तुम ऐसा समझो कि इससे सुख मिलेगा मुझे। दूसरे को सुख मिलेगा तो आनंद मिलेगा मुझे--हम एक ऐसी दुनिया बना सकें। अपने को एक मौका मिलता है सत्तर साल का, एक आदमी को अवसर मिलता है दुनिया बनाने का, उसको चूक नहीं जाना चाहिए। और कुछ भी नहीं कहा जा सकता। उसका परिणाम व्यापक हो सकता है। तो मेरा मानना यह है कि जब दुनिया को दुखी करने के इतने व्यापक परिणाम हो सके हैं तो दुनिया को सुखी करने के परिणाम और व्यापक हो सकते हैं, क्योंकि मूलतः सब की आकांक्षा सुख के लिए है। अगर दुनिया को अग्ली, गंदी और कुरूप बनाने में हम उपयोगी हो सके हैं तो सुंदर बनाने में क्यों नहीं हो सकते, जब कि सबकी आकांक्षा सुंदर बनने की है। छोटे का खयाल ही गलत है। यह खयाल कुछ लोगों ने पैदा किया है, क्योंकि उनको बड़े होना है।
मैं राजस्थान की एक लोक-कथा पढ़ रहा था। एक ठाकुर साहब हैं, गांव का नाई उनसे मिलने आया। नाई नीचे बैठा है, ठाकुर साहब ऊपर बैठे हैं। नाई बूढ़ा है और ठाकुर जवान। नाई नीचे बैठ गया है, स्वाभाविक है नीचे बैठना ही चाहिए नाई को। ठाकुर साहब ऊपर तख्त पर बैठे हैं। नाई ने निमंत्रण दिया है कि मैं तो हमेशा आता हूं, कभी आप मेरे घर आएं। ठाकुर साहब उसके घर गए। दालान में उसने दरी बिछा दी है। ठाकुर साहब उस पर बैठ गए हैं और नाई दलान से नीचे उतर कर सड़क में जाकर बैठा। तब ठाकुर साहब ने कहाः नहीं-नहीं, यह क्या करते हो। ऐसा करोगे तो मैं भी वहीं आ जाऊंगा, आओ यहां बैठो।
उसने कहाः नहीं-नहीं, हम नाई, आप ठाकुर! हम छोटे आदमी, आप बड़े आदमी!"

उस ठाकुर को कुछ व्यंग लगा है तो वह उतर कर नीचे आ गया है। नाई ने कहाः "ऐसा मत करिए, ऐसा करेंगे तो मुझे एक गड्ढा खोदना पड़ेगा, फिर मुझे गड्ढे में ही बैठना पड़ेगा।
उस ठाकुर ने कहाः अगर मैं गड्ढे में आकर बैठ गया, तो?
उस नाई ने कहाः फिर जो मुझे करना चाहिए और बहुत दिनों से नहीं किया, वह मैं करूंगा।
ठाकुर साहब ने पूछाः क्या करोगे?
उसने कहाः मैं गड्ढे को पूर के आराम से सो जाऊंगा, जो मुझे बहुत दिनों
से करना चाहिए था और मैंने अभी तक नहीं किया।
छोटे आदमी ने बहुत दिनों से नहीं किया वह काम। मजा यह है कि उसको नीचे बिठलना जरूरी है, नहीं तो बड़ा आदमी कहां टिकेगा? कहां जाएगा। सारा इंतजाम किया है बड़ा होने का। यहां बड़ा होना मैनेज्ड, प्रबंधित है, उसकी सारी व्यवस्था करनी पड़ती है और व्यवस्था न हो तो बड़ा आदमी फिसल जाएगा। बड़ा आदमी फासला रखेगा, निकट न आने देगा।
हिटलर के कंधे पर कोई हाथ नहीं रख सकता था। इतना निकट कोई भी न था, इतना मित्र कोई भी न था कि उसके कंधे पर हाथ रखे। ऐसा कोई भी एक व्यक्ति नहीं था जो उसका सीधा नाम ले सके। जब भी उससे कहा गया, तो उसने कहा कि यह संभव ही कैसे है। इसीलिए उसने शादी नहीं की। आखिरी उम्र में शादी की, मरने के घंटे भर पहले। एक लड़की से उसका प्रेम था, लेकिन वह प्रेम वैसा ही था, जैसा हिटलर का हो सकता था। वह लड़की उसके पास थी, लेकिन उसका काम बिल्कुल आज्ञाकारिणी का था। प्रेम भी आज्ञा की बात थी उसके लिए। हिटलर अपने आफिस जा रहा है। उस लड़की ने कहा कि मेरी मां बीमार है, मैं उससे मिल आऊं? उसने कहाः नहीं। और वह अपनी गाड़ी में बैठ कर चला गया। लड़की ने सोचा कि वह चार बजे लौटेगा, पास ही तो उसकी मां है, जाकर देख कर लौट आएगी। वह गई और देख कर लौट के चली आई। हिटलर आया दफतर से, नीचे उसने संतरी से पूछा कि गई तो नहीं थी? उसने कहा, गई थी। संतरी के हाथ से बंदूक लेकर ऊपर गया और गोली मार दी। फिर उसने पूछा नहीं उससे कि गई क्यों? गया और जाते ही गोली मार दी उसने। असंभव था कि हिटलर को कोई ना कह सके। हिटलर कह दे "नहीं" और फिर कोई चला जाए, असंभव था।
फिर एक स्त्री उसको बारह साल तक प्रेम करती रही, लेकिन उससे उसने शादी नहीं की। जिस दिन बर्लिन पर बम गिर रहा था उसके सामने, जहां वह नीचे छिपा था तलघरे में, सामने दुश्मन गोलियां चलाने लगे। आधी रात थी उसने खबर भिजवाई कि कहीं से एक पादरी को पकड़ लाओ और जल्दी से शादी कर दो। उसके मित्रों ने पूछाः अब क्या मतलब है शादी का? उसने कहाः अब कोई भय नहीं रहा। अब मरना ही है तो कुछ भय नहीं है। तलघरे में पांच छहः लोग मौजूद थे जहां हिटलर की शादी हुई। शादी के बाद पादरी बाहर गया। फिर दोनों ने मिल कर गोली मार ली। यह था उसका हनीमून! पर उसने कहाः अब कोई भय नहीं है, अब कर सकते हैं। मैं इतना करीब किसी को भी नहीं ला सकता हूं, जो कंधे पर हाथ रख सके, जो किसी बात से इनकार कर सके, जो मित्रता जतला सके, जो बराबरी दिखा सके।
मतलब यह है कि बड़े आदमी के वास्ते बराबरी दिखाना बहुत असंभव है। इसलिए बड़े आदमी की पत्नी होना बहुत कष्टपूर्ण है, बड़े आदमी का मित्र होना बहुत कष्टपूर्ण है, क्योंकि बड़े आदमी के या तो आप फॉलोअर हो सकते हैं या दुश्मन हो सकते हैं, मित्र नहीं हो सकते। मित्रता का कोई संबंध ही नहीं है बड़े आदमी से। मजा यह है कि अगर बड़ा आदमी आपको मित्र बनाए तो आप उसको फौरन बड़ा नहीं समझेंगे। ऐसा नहीं की हिटलर ही कसूरवार था। जो मैं कह रहा हूं वह यह कि हमीं सदा जिम्मेवार रहे हैं। अगर हिटलर आपको कंधे पर हाथ रखने दे तो हिटलर गया। फौरन बड़ा आदमी न रहा।
जिस चपरासी की मैं बात कर रहा था कि मैंने देखा और लोगों को कहा तो उन्होंने कहा वह चपरासी है। मैं उससे आदर से बोलता था। उसका नाम द्वारका था, तो मैं "द्वारका जी" ही उसको कहता था। वह मुझे पानी लाकर नहीं देता था।
ऐसे आदमी की क्या फिक्र करनी जो "द्वारका जी" चपरासी को कह रहा है। उससे मैंने कहा कि द्वारका जी, पानी ले आना। वह सुनता हुआ भी नहीं सुन रहा है।
लेकिन जो उसको कह रहे हैं कि "अबे द्वारका!" उनका काम वह झट से कर रहा है।

वह और ये दोनों सहभागी हैं इस मुआमले में; यानी आदमी भी तभी सुनने को राजी होगा, जब उससे "अबे" कहा जाए, उसको "जी" कह कर बुलाइए तो बात खत्म हो गई। वह पहले मुझसे बहुत हैरान हुआ। चपरासी को "जी" कह रहे हैं? मतलब चपरासी से भी गए-बीते आदमी हैं? तब इज्जत की बात ही न रही। खत्म हो गई बात। हिटलर अगर कंधे पर हाथ रखने दे तो गया, मर गया उसी वक्त; यानी उसमें हिटलर ही जिम्मेवार नहीं है, उसमें हम भी जिम्मेवार हैं।
तुम अपने दुख से भी इसलिए पीड़ित हो, क्योंकि तुम दुनिया का दुख नहीं देख पा रहे हो। अगर तुम दुनिया के दुख देख पाओ, तो तुम्हारे दुख बड़े छोटे रह जाएंगे--इतने छोटे कि उनसे पीड़ित होना बिल्कुल बेमानी मालूम पड़ेगा। उसका जो कारण है, वह यह नहीं कि बहुत दुख तुम्हारे पास हैं। उसका कारण यह है कि तुम्हारे पास और दुख नहीं है, जिनसे तुम तुलना कर सको। तुम्हारे पास कोई तुलना नहीं है।
जीसस को जिस दिन सूली लगी, उस दिन एक आदमी के दांत में दर्द था। उसकी पत्नी ने रात में कई बार उससे कहा कि आज नींद नहीं आती मुझे, कल सुबह जीसस को सूली लग जाएगी। पति ने कहाः भाड़ में जाने दो जीसस को! मेरे दांत में दर्द है, इसकी तो तुम्हें फिकर नहीं है, जीसस की फिकर में लगी हो! मैं मरा जा रहा हूं, करवटें बदल रहा हूं, दवा ले रहा हूं, दर्द ठीक ही नहीं होता। सुबह वह उठ कर बैठ गया है। जो भी निकलता है, वह जीसस की बात करता है, और कहता है, सुना है तुमने कि जीसस को सूली लग जाएगी? वह सुनता ही नहीं है! कहता हैः रात भर सोया नहीं। दवा भी काम नहीं कर रही है। यह भी करता हूं, वह भी करता हूं, दांत का दर्द ही नहीं जाता! फिर तो जीसस सूली लिए हुए निकले दरवाजे से। लोगों ने कहाः देखो तो! उसने कहाः क्या देखूं! दर्द इतना ज्यादा है कि रात भर सो नहीं सका। दो रात से नींद नहीं आई, कोई दवा काम नहीं करती।
अब जिसका दांत दुख रहा हो, वह ठीक ही कह रहा है कि जीसस को सूली लग रही
हो या न लग रही हो, इससे क्या लेना-देना! दांत में तकलीफ है, यह बड़ी बात है। लेकिन मेरा मानना है कि काश! वह आदमी भी जीसस की सूली देख सके तो उसका दांत का दर्द चला जाए। मेरा कहना यह है कि दांत का दर्द दिखाई इसलिए पड़ रहा है कि उस आदमी के देखने का ढंग ही बहुत गलत है। इधर दुनिया में इतनी पीड़ाएं हैं, मेरी अपनी समझ यह है कि बुद्ध या महावीर, कृष्ण या क्राइस्ट जैसे लोगों को जो कोई पीड़ा नहीं हुई, दुख नहीं हुआ, इसका कारण यह नहीं है कि उनको दुख नहीं था, पीड़ा नहीं थी। उसका कुल कारण यह है कि उन्हें इतना दुख दिखाई पड़ रहा था, इतनी पीड़ा दिखाई पड़ रही थी कि अपना दुख और पीड़ा उनके वास्ते बेमानी थी। इसका अहसास ही चला गया था एक सीमा पर आकर। इसका अंतिम अर्थ यह है कि बात ही खत्म हो गई। यह बात ही बेमानी है कि मैं अपने दांत के दर्द की बात करूं। जहां दर्द ही दर्द है, पीड़ा ही पीड़ा है, वहां दांत के दर्द की बात एकदम बेहूदगी है। अगर दुनिया का दुख तुम्हें दिखाई पड़ने लगे तो तुम्हारा दुख एकदम विलीन हो जाएगा। इतना छोटा लगेगा कि आप सोचेंगे--इसको भी दुख कहना चाहिए?
जिस कंपार्टमेंट में मैं आया, उसमें मेरे साथ एक सज्जन थे। एअरकंडीशंड में सब सुविधा है, लेकिन भाग्य से वह डिब्बा चक्के के ऊपर आ गया। वह जो हमारा कंपार्टमेंट है, नीचे चाक है उसके। वह थोड़ा धक्का-मुक्की करता रहा, कंपार्टमेंट हिलता रहा। पूरे बीस घंटे उनको इसी तकलीफ में बीते। कितनी ही बार उन्हें इसकी पीड़ा हुई कि वह चाक ऊपर आ गया। चपरासी को बुलाया है, कंडक्टर को पूछा है कि दूसरा नहीं मिल सकता? अब इस बड़ी दुनिया में इतनी पीड़ाएं हैं, उसमें तुम्हारा डिब्बा एक चाक के ऊपर आ गया और किसी न किसी का डिब्बा चाक पर आएगा ही। चाक नीचे है, करोगे क्या? लेकिन उसका बोध ही नहीं है! इतना बड़ा जो फैलाव है जगत का, उसका बोध ही नहीं है! चेतना यहां सीमित हो गई है। वह उस डिब्बे में बंद है, उस चाक से जुड़ी है। तो ठीक है, वह आदमी बहुत दुख झेल लेगा। ऐसा नहीं है कि वह कम झेल रहा है। वह बहुत झेलता है, लेकिन झेलने के लिए भी वही जिम्मेवार है। वह अगर विराट के संबंध में उसको देखेगा तो बात हंसने जैसी लगेगी। अगर वह अपने ही संदर्भ में देखेगा तो फिर बहुत बड़ी लगेगी।

तो तुम्हारा दुख, तुम्हारी पीड़ा बहुत छोटी हो सकती है, अगर तुम्हें विराट का दुख और पीड़ा दिखाई पड़ जाए। तुम्हारे पास पहली दफा मेजरमेंट भी होगा न, कि दुख क्या है? वह हमारे पास है ही नहीं। हम सब अपने-अपने डिब्बे में बंद हैं, वहीं जी रहे हैं। उधर से थोड़े बाहर निकल कर देखना चाहिए। तुम्हारे घर का दिया बुझ गया है, ठीक है। बाहर निकल कर देखना चाहिए। वहां सूरज ही बुझा हुआ है तो शायद लौट कर तुम्हें घर में अंधेरा दिखाई न पड़ेगा। थोड़ी रोशनी मालूम पड़ने लगेगी, क्योंकि इतना अंधेरा देख कर आए हो। यह बहुत से मनोचिकित्सकों का अनुभव है कि उनकी बीमारियां उनके बीमारों से बातचीत करने में दूर हो गई हैं। जब उनको पहली दफा लोगों की बिमारियों का पता चला तब उनकी बीमारियां इतनी बेमानी मालूम पड़ीं, इस तरह एवोपरेट, वाष्पित हो गईं कि जैसे थी ही नहीं।
बर्नार्ड शॉ एक दफा बहुत जोर से बीमार पड़ा। अचानक उसको ऐसा लगा कि मर
न जाऊं! डाक्टर को फोन करवाया। रात के बारह-एक बजे का समय होगा। डाक्टर बेचारा नींद से उठा और भागा। सीढ़ियां हैं, उन पर वह चढ़ रहा है। बूढा आदमी है डाक्टर भी। बर्नार्ड शॉ अपनी खाट पर पड़ा हुआ है, बिल्कुल डरा हुआ कि कहीं मर न जाए! लेकिन उस डाक्टर ने फिकर ही न की। वह गया और एकदम हांफने लगा। आंखें बंद की और आरामकुर्सी पर लेट गया। बर्नार्ड शॉ घबड़ा कर उठा कि यह क्या हो गया? उसने देखा कि वह आंखें बंद किए है और ऐसा लग रहा था कि उसका हार्ट फेल हो रहा था। वह गया और उसका हार्ट वगैरह देखा। पूछाः क्या हुआ? डाक्टर ने कहाः "मैं तो जाता हूं, मेरे घर सबको कह देना। वह बेचारा पानी- वानी लाया और भूल गया अपनी बीमारी। पानी छिड़क कर हवा की, पसीना पोंछा, उसको जाकर बिस्तर पर लिटाया। आध घंटे बाद जब वह ठीक हुआ तो उस डाक्टर ने कहाः अच्छा मैं चलूं, मेरी फीस दे दो। बर्नार्ड शॉ ने कहाः फीस काहे की? उसने कहाः तुम्हें ठीक करने की। यह तो सिर्फ मेरा इलाज था, क्योंकि मैं जानता था कि तुम्हारे जैसे लोग चीजों को बड़ा करके देख लेते हैं। तुम बिल्कुल ठीक हो न अब! बर्नार्ड शॉ ने कहाः बिल्कुल ठीक हूं। इस आधे घंटे में मुझे अपने रोग का खयाल ही नहीं रहा!
जिंदगी की पीड़ा को देखना चाहिए, तो खुद की पीड़ा बहुत छोटी हो जाती है। खुद की पीड़ा देखते रहोगे तो वह बड़ी होती जाएगी। फिर भूत-प्रेत खुद ही खड़ा कर लोगे, उन्हीं में घिर जाओगे।